भाषा और संस्कृति

आधार पाठ्यक्रम : तृतीय वर्ष

• सुश्री रोशनी

कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल

Dr Bhawna Shrivas
Hindi Dept.

भाषा और संस्कृति

(Language and Culture)

आधार पाठ्यक्रम : तृतीय वर्ष

2023-24 से प्रभावी

लेखक
सुश्री रोशनी

SAMPLE COPY
Not For Sale

कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल

भाषा और संस्कृति : तृतीय वर्ष (Language and Culture)

सुश्री रोशनी

❑ प्रकाशक :
कैलाश पुस्तक सदन
हमीदिया मार्ग, भोपाल - 462 001
फोन : (0755) 2535366, 4256804.
email : kailashpustak@gmail.com
website : www.kpsbhopal.com

❑ संस्करण : 2023

❑ ISBN : 978-93-5832-252-1

❑ © लेखक एवं प्रकाशक

❑ मूल्य : 130/- रुपये

❑ लेज़र टाईप सेटिंग :
ट्रांस लेज़र, भोपाल

❑ मुद्रक :
वैल प्रिंट्स प्रा. लि., भोपाल

Note :

- *All Rights Reserved. No Part of this Publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means without prior written permission of the author and publisher.*
- *All disputes are subject to Bhopal jurisdiction only.*

DISCLAIMER

- *Every effort has been made to avoid errors or omissions in this publication. Inspite of this, some errors might have crept in. Any mistake, error or discrepancy noted may be brought to our notice which shall be taken care of in the next edition. It is notified that the publisher or the author or printer of this book does not take any responsibility for the absolute accuracy of any information published and for any damage or loss of action caused to any one, of any kind, in any manner arising therefrom.*
- *For binding mistakes, misprints or for missing pages, etc., the publisher's liability is limited to replacement within one month of purchase by similar edition.*

अनुक्रमणिका

भाषा और संस्कृति
(Language and Culture)

अध्याय		पृष्ठ
1.	सतपुड़ा के जंगल (भवानी प्रसाद मिश्र)	01
2.	वापसी (उषा प्रियंवदा)	10
3.	शिकागो व्याख्यान (स्वामी विवेकानंद)	17
4.	आँगन का पंछी (विद्यानिवास मिश्र)	22
5.	आत्मकथा के अंश (महात्मा गाँधी)	31
6.	विश्व के प्रमुख धर्म	47
7.	वाक्य रचना एवं अशुद्धि शोधन	60
8.	अनुवादः अर्थ एवं प्रकार	72
9.	बीज शब्द (Key word/अवधारणा मूलक शब्द)	81

आधार पाठ्यक्रम : तृतीय वर्ष
भाषा और संस्कृति
(Language and Culture)
Course Code : X3-FCEA1T

पाठ्यक्रम

इकाई-I
1. भवानी प्रसाद मिश्र: परिचय पाठ: सतपुड़ा के जंगल (कविता)
2. उषा प्रियंवदा: परिचय पाठ: वापसी (कहानी)
3. स्वामी विवेकानंद: परिचय पाठ: शिकागो व्याख्यान (भाषण)

इकाई-II
1. विद्यानिवास मिश्र: परिचय पाठ: आँगन का पंछी (निबंध)
2. महात्मा गाँधी: परिचय पाठ: आत्मकथा के अंश (आत्मकथा)
3. विश्व के प्रमुख धर्म (संकलित)

इकाई-III
1. वाक्य रचना एवं अशुद्धि शोधन (शब्द-रचना/व्याकरण)
2. अनुवाद: अर्थ एवं प्रकार
3. बीज शब्द (की-वर्ड/अवधारणा मूलक शब्द)
   लोकतंत्र, समरसता, कला, साहित्य, अध्यात्म

❑❑❑

1

सतपुड़ा के जंगल
(भवानी प्रसाद मिश्र)

जीवन परिचय :

भवानी प्रसाद मिश्र हिन्दी के प्रसिद्ध कवि तथा गाँधीवादी विचारक थे। वे दूसरा सप्तक के प्रथम कवि हैं। गाँधी-दर्शन का प्रभाव तथा उसकी झलक उनकी कविताओं में स्पष्ट देखी जा सकती हैं। उनका प्रथम संग्रह 'गीत-फरोश' अपनी नई शैली, नई उद्‌भावनाओं और नये पाठ-प्रवाह के कारण अत्यंत लोकप्रिय हुआ। प्यार से लोग उन्हें भवानी भाई कहकर सम्बोधित किया करते थे।

आपातकाल के दौरान नियमपूर्वक सुबह-दोपहर-शाम तीनों वेलाओं में उन्होंने कवितायें लिखीं जो बाद में 'त्रिकाल संध्या' नामक पुस्तक में प्रकाशित हुईं।

भवानी प्रसाद मिश्र का जन्म 29 मार्च, 1913 में गाँव टिगरिया, तहसील सिवनी मालवा, जिला- नर्मदापुरम् (पूर्व नाम होशंगाबाद) (म.प्र.) में हुआ था। क्रमशः सोहागपुर, होशंगाबाद, नरसिंहपुर और जबलपुर में उनकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई। 1934-35 में उन्होंने हिन्दी, अंगेजी और संस्कृत विषय लेकर बी.ए. पास किया।

महात्मा गाँधी के विचारों के अनुसार शिक्षा देने के विचार से एक स्कूल खोलकर अध्यापन कार्य शुरू किया और उस स्कूल को चलाते हुए 1942 में गिरफ्तार होकर 1945 में छूटे। उसी वर्ष महिलाश्रम वर्धा में शिक्षा देने एक शिक्षक की तरह गये और चार-पाँच साल वहीं बिताये।

साहित्यिक परिचय :

भवानी प्रसाद मिश्र ने कविताएँ लिखना लगभग 1930 से ही नियमित रूप से प्रारंभ कर दिया था और कुछ कविताएँ पं. ईश्वरी प्रसाद वर्मा के सम्पादन में निकलने वाले हिन्दू पंच में हाईस्कूल पास होने के पहले ही प्रकाशित हो चुकी थीं। सन् 1932-1933 में वे माखनलाल चतुर्वेदी के सम्पर्क में आये। चतुर्वेदी जी आग्रहपूर्वक 'कर्मवीर' में उनकी कविताएँ प्रकाशित करते रहे। 'हंस' में भी उनकी काफी कविताएँ छपीं। उसके बाद अज्ञेय जी ने 'दूसरा सप्तक' में उन्हें प्रकाशित किया। **मिश्रजी** ने चित्रपट के लिये संवाद लिखे और मद्रास के ए.बी.एम. में संवाद निर्देशन भी किया। मद्रास से वे मुम्बई में आकाशवाणी के प्रोड्यूसर रहे। बाद में उन्होंने आकाशवाणी केन्द्र दिल्ली में भी काम किया। जीवन के 33वें वर्ष से वे खादी पहनने लगे। उनके पुत्र अनुपम मिश्र एक सुपरिचित पर्यावरणविद् थे।

20 फरवरी, 1985 को मिश्रजी नरसिंहपुर (म.प्र.) एक विवाह समारोह में गये थे वहीं, अचानक बीमार हो गये और अपने सगे सम्बन्धियों व परिवारजनों के बीच उन्होंने अन्तिम साँस ली।

प्रमुख कृतियाँ :

कविता संग्रह- गीत फरोश, चकित है दुख, गाँधी पंचशती, बुनी हुई रस्सी, खुशबू के शिलालेख, त्रिकाल संध्या, व्यक्तिगत, परिवर्तन जिए, अनाम तुम आते हो, इंदन मम, शरीर कविता फसलें और फूल, मानसरोवर दिन, सम्प्रति, अँधेरी कविताएँ, तूस की आग, कालजयी (खण्डकाव्य), नीली रेखा तक और सन्नाटा।

प्रमुख कविताएँ- घर की याद, सतपुड़ा के जंगल, पानी को क्या सूझी, कमल के फूल, सन्नाटा, मैं फिर आऊँगा, मित्र मंडल, कवि, मैं तैयार नहीं था, अकर्ता, इंदन मम्, रक्तकमल, बच्चों की तरह आदि।

बाल कविताएँ- तुकों के खेल।

संस्मरण- जिन्होंने मुझे रचा।

निबंध संग्रह- कुछ नीति कुछ राजनीति।

1952 से 1955 तक हैदराबाद में 'कल्पना' मासिक का संपादन किया।

सम्मान और पुरस्कार :

- 1972 में 'बुनी हुई रस्सी' काव्य-संग्रह के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।
- पद्मश्री अलंकार से अलंकृत किया गया है।
- 1981-82 में उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान के संस्थान सम्मान से सम्मानित किया गया।
- 1983 में उन्हें मध्यप्रदेश शासन के शिखर सम्मान से अलंकृत किया गया।

महत्वपूर्ण तथ्य :

- कहानीकार उदय प्रकाश ने भवानीप्रसाद मिश्र को 'कविता का गाँधी' कहा है, लेकिन उन्होंने खुद को 'गाँधी का बेटा' कहा है।
- भवानीप्रसाद मिश्र को 'सहजता का कवि' कहा जाता है।
- भवानीप्रसाद मिश्र को बालमोहन उपनाम से भी जाना जाता है।

साहित्यिक विशेषताएँ :

भवानीप्रसाद मिश्र की कविताएँ भाव और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से बहुत अधिक प्रभावशाली हैं। इन कविताओं में उन्होंने अपनी अनुभूतियों को बहुत सरल शब्दों में व्यक्त किया है। उनकी कविताओं का भावपक्ष सामाजिक भाव बोध, संवेदनशीलता, आत्मीयता, सहजता आदि विशिष्टताओं से युक्त है।

(1) सामाजिक भाव बोध : मिश्र जी की कविता व्यक्तिवादी कविता नहीं है, वह सामाजिक भाव-बोध से सम्पन्न है। मिश्रजी ने अपने काव्य में सामान्य जन-जीवन के विषम संघर्ष की अपेक्षा नहीं की वरन् सामाजिक अन्याय, शोषण, अभाव आदि का वर्णन किया है और इनके विरुद्ध आवाज उठाने की प्रेरणा दी। वे अपनी कविताओं के सारे विषय जीवन और समाज से ही उठाते हैं। लेकिन उन्होंने अपनी कविताओं को जीवन से जोड़कर भी सरस और सुंदर बनाए रखा है।

(2) संवेदनशीलता : भवानीप्रसाद मिश्र की कविताओं की एक अन्य विशेषता है- संवेदनशीलता। उनकी प्रसिद्ध कविताएँ जैसे- 'सतपुड़ा के जंगल', 'घर की याद', 'आशा-गीत' आदि उनकी गहरी संवेदनशीलता के परिचायक हैं। उनके काव्य में अनुभूति और संवेदना की प्रधानता है। चिंतन, दर्शन आदि की बोझिलता उसमें नहीं है। अगर चिंतन के तत्व आए भी हैं तो वे उनकी संवदेनशीलता में ढलकर ही प्रकट हुए हैं।

(3) आत्मीयता : मिश्र जी की कविताओं में आत्मीयता का गुण भी मिलता है। वे अक्सर अपने पाठक को सम्बोधित करते हैं या फिर प्रश्न पूछते हैं। सम्बोधित करते समय वे अक्सर पाठक को आत्मीयता के साथ समझाते हैं या प्रश्न के द्वारा उसे फटकारते हैं। उनके काव्य की यह आत्मीयता पाठक को उनके साथ जोड़े रखती है।

(4) आस्तिकता और आस्था : मिश्र जी आस्तिक और आस्थावादी कवि हैं। हालाँकि वे ईश्वर पर विश्वास नहीं करते, लेकिन मानव-मूल्यों के प्रति उनकी आस्तिकता और आस्था उनकी कविताओं में व्यक्त हुई है।

(5) यथार्थ-बोध : भवानीप्रसाद मिश्र ने जीवन के सहज और यथार्थ रूप को अभिव्यक्ति अपनी कविताओं में की है। लेकिन उनका यथार्थ-बोध केवल जीवन की कटुता, निराशा और विषमता का चित्रण नहीं करता। वरन् उनके यथार्थ-बोध के पीछे मानवता की विजय और सुखपूर्ण भविष्य की आशा छिपी हुई है और इसका कारण है- उनकी गाँधीवाद में आस्था। इसी आस्था के कारण ही उनके यथार्थ- बोध में निराशा का स्वर नहीं मिलता।

(6) प्रकृति-चित्रण : मिश्र जी के काव्य में प्रकृति के सहज, मोहक और यथार्थ रूप का चित्रण मिलता है। उनके प्रकृति चित्रण छायावादी सौन्दर्य चित्रण से भिन्न हैं। उनकी कविताओं में सतपुड़ा, विन्ध्य, रेवा और नर्मदा आदि के अनेक चित्र मिलते हैं। 'सतपुड़ा के जंगल' नामक उनकी कविता में प्रकृति के प्रति उनकी संवेदनशील अनुभूतियाँ इस प्रकार व्यक्त हुई हैं-

''सतपुड़ा के घने जंगल
नींद में डूबे हुए से,
ऊंघते अनमने जंगल।''

यहाँ जंगल निर्जीव न रहकर सजीव, सप्राण जीवन का प्रतिरूप बन गया है। जंगल के विभिन्न अवयव जीवन और जगत की विभिन्न स्थितियों को प्रतिबिम्बित करते हैं।

(7) सहजता : सहजता मिश्र जी के काव्य की सबसे बड़ी विशेषता है। उनकी कविताओं में साधारण जीवन के सहज-साधारण अनुभव व्यक्त हुए हैं। उन्होंने जीवन के

सहज रूप को अपनी दृष्टि से देखा और अपने ढंग से उसकी सहज, अकृत्रिम अभिव्यक्ति की। लेकिन उनकी कविता सहज होते हुए भी पूर्णत: अर्थपूर्ण है, जिसके कारण उनकी काव्य-पंक्तियाँ सूक्ति या सूत्रवाक्य का रूप धारण कर लेती हैं। इस प्रकार की सारी काव्य-पंक्तियाँ जीवन की गम्भीर स्थितियों को व्यक्त करती हैं।

भाषा-शैली : भवानीप्रसाद मिश्र की भाषा-शैली अत्यन्त सहज और बोलचाल की भाषा के निकट है। मिश्र जी की सहज, सरल भाषा की सपाटबयानी में भी अद्‌भुत सौन्दर्य है। हिन्दी काव्य-भाषा को मिश्र जी की सबसे बड़ी देन यह है कि उन्होंने बोलचाल की भाषा को साहित्यिक भाषा और काव्य भाषा का दर्जा प्रदान किया। उनकी काव्यभाषा में विशेष उनके शब्द चयन है। उन्होंने तत्सम, तद्‌भव, देशज, विदेशी सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है।

तत्सम और तद्‌भव शब्दों के साथ ही उन्होंने ग्राम्य तथा प्रांतीय शब्दों का प्रयोग भी किया है। इस तरह के शब्दों ने उनकी भाषा को एक नयी शक्ति और ताजगी दी है। साथ ही इनसे कविताओं में लोकभाषा की लय और सीधापन आ गया है।

मिश्र जी ने अधिकतर छोटी-छोटी कविताएँ लिखी हैं। छोटे से छंद की दो-दो पंक्तियों के बाद वे तुक बदल देते हैं। इससे भाषा में लय और गति आ गई है। इन्हीं छोटे छंदों में वे छोटी से छोटी वस्तु और बड़ी से बड़ी बात का भी बहुत सुन्दर और लयात्मक वर्णन करते हैं।

मिश्र जी की काव्य भाषा में बिम्बात्मक और प्रतीकात्मक क्षमता भी है। उनके बिम्ब और प्रतीक भी बहुत स्पष्ट और सहज हैं। उनमें कहीं भी जटिलता या बोझिलता नहीं मिलती। लाक्षणिक-आलंकारिक तत्सम काव्य शैली को उन्होंने प्राय: कहीं नहीं अपनाया है। वस्तुत: वे ठीक उसी प्रकार लिखते हैं जिस प्रकार हम रोजमर्रा के जीवन में बोलते हैं। अभिव्यक्ति की सहजता, आत्मीयता और कलात्मकता उनकी काव्य शैली की महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अनुभूति और अभिव्यक्ति की इन अप्रतिम विशेषताओं ने मिश्र जी को आधुनिक हिन्दी कवियों में एक विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान किया है।

व्याख्या/अर्थ :

(1) सतपुड़ा के घने जंगल। नींद में डूबे हुए से .... ऊँघते अनमने जंगल॥

अर्थ- कवि ने इन पंक्तियों में सतपुड़ा के घने जंगलों का वर्णन किया है। सतपुड़ा के जंगल बहुत हरे-भरे अर्थात् बहुत घने हैं। इस कारण मानो वह नींद में डूबे हुए से लगते हैं, अर्थात् घने होने के कारण झुके हुए हैं, जिस कारण देखने में वह सो गए ऐसा आभास होने लगता है। नींद में ऊँघते हुए उदासीन जैसे प्रतीत होने लगते हैं। जंगल के वृक्ष बहुत ही नीचे से ऊपर दिखाई देते हैं। अर्थात् वहाँ छोटे-बड़े हर प्रकार के वृक्ष हैं जो अपनी आँखें बंद करे उस जंगल में चुपचाप खड़े हैं। उस जंगल में घास भी चुप है और कास भी चुप है। शोभायमान शाल भी चुप है और पलाश भी चुप है। वहाँ के सभी वृक्ष चुप हैं, शांत हैं। कवि कहते हैं कि आप इस जंगल में घुसना चाहते हैं तो घुस जाओ इनमें इस उदास भरे जंगल में हवा भी पास नहीं हो पाती, ऐसे सतपुड़ा के घने जंगलों का वर्णन कवि ने किया है।

(2) सड़े पत्ते, गले पत्ते, हरे पत्ते, जले पत्ते .... ऊँघते अनमने जंगल॥

अर्थ- कवि कहते हैं कि इन जंगलों में सड़े-गले पत्तों का वर्णन करते हुए वह आगे कहते हैं कि इस जंगल में कई प्रकार के पत्ते हैं जिसमें सड़े, गले, हरे, जले, पत्ते हैं। कीचड़ में सने हुए भी पत्ते हैं। इन पत्तों की वजह से उस जंगल का रास्ता ढँक जाता है। यानि पत्ते गिरने के कारण उस वन या जंगल का रास्ता ढँका हुआ है, जिस वजह से जंगल में जाने के बाद कोई मार्ग दिखाई नहीं देता। घूमने आए हुए अपना मार्ग भटक सकते हैं। अगर इन भटकते हुए रास्तों पर चल सको या अपना मार्ग ढूँढ सको तो उस घने जंगल में प्रवेश करो, ऐसा कवि कहते हैं। अर्थात् कवि ने यहाँ पाठकों को चुनौती दी है। अगर ये इस घने या घृणा उत्पन्न करने वाले जंगल के दलदल को पार करने के लिए तैयार हैं तो इस ऊँघते हुए नींद में डूबे उदास जंगलों को देखने जाओ।

(3) अटपटी-उलझी लताएँ, डालियों को खींच खाएँ .... ऊँघते अनमने जंगल॥

अर्थ- कवि आगे ये कहना चाहते हैं कि सतपुड़ा के घने जंगल में सभी वृक्ष की लताएँ अजीव-अजीब सी फैली हुई हैं। उसमें अटपटी-उलझी हुई हैं। उन डालियों को खींच-खींच कर अथवा उन डालियों को पकड़कर उसका रस चूस लेती है। हम उसके नीचे से जाते हैं तो अचानक पैर पकड़ लेती है। अचानक पकड़ने के कारण प्राणों में कम्पन पैदा कर देती है। कवि उन लताओं का वर्णन करते हुए कहते हैं कि वे जो लताएँ हैं साँप जैसी काली हैं, वह लताएँ एक तरह से बला हैं अर्थात् एक संकट है, अर्थात् वह अत्यंत भयंकर और कष्टदायक भी है। लताओं से बने इस जंगल में ऊँघते, उदासीन जंगल में सब वृक्ष शांत और मौन धारण किए हुए हैं। जब आप इस घने जंगल में प्रवेश करते हैं तो मकड़ियों के जाल मुँह पर आ जाते हैं और हमारे सर के बाल भी मुँह पर आ जाते हैं। मच्छरों के दंश के कारण हमारे मुँह पर काले-काले दाग और घाव पड़ सकते हैं। कवि ने यहाँ सतपुड़ा के घने जंगल में प्रवेश करना कितना कठिन है इसका वर्णन करते हुए कहा कि उस जंगल में चलते समय अनेक संकटों का एवं आँधियों का सामना आपको करना पड़ सकता है और अगर इस सभी कठिनाइयों का सामना करने की या यह खतरा उठाने की आपमें हिम्मत है, खतरा सहन करने की ताकत है तो हिम्मत करके और इस कष्टदायक घने, उदासीन और नींद में डूबे जंगलों को देखने के लिए आप जा सकते हैं।

(4) अजगरों से भरे जंगल। अगम, गति से परे जंगल .... ऊँघते अनमने जंगल॥

अर्थ- कवि आगे इस जंगल का वर्णन करते हुए कहता है कि यह जंगल पूरा अजगरों और साँपों से भरा हुआ है। यह जंगल अपनी गति में सबसे आगे है। इस जंगल में साथ-साथ पहाड़ भी हैं, बड़े-छोटे वृक्ष भी उसमें भरे हुए हैं। इन जंगलों में दहाड़ मारने वाले, गरजने वाले शेर, बाघ भी हैं। इतना घना जंगल है तो इसमें बड़े-बड़े प्राणी भी होंगे तो उन प्राणियों का वर्णन भी कवि ने यहाँ पर किया है, जिनकी आवाज सुनकर व्यक्ति के मन में

एक लहर दौड़ती है या कम्पन पैदा करती है। इन वनों के भीतर या बहुत ही भीतर गोंड जाति के लोगों का एक बसेरा है। उन्होंने चार मुर्गे, चार तीतर, पक्षियों को पाल रखा है और वह इस जंगल में निश्चिंतता से बैठे हुए हैं। उस निर्जन वन में वह लोग रहते हैं। उनके रहने के घर का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है कि उनकी झोपड़ियों पर घास-फूस डाले हुए हैं। जब भी होली का समय आता है उस जंगल के सरसराती घास से गाने और गीतों की आवाज आती है। जंगल में महुँए के वृक्ष की लहराती हुई मदभरी सुगंध भी आती है। होली के अवसर पर ढोल गूँजते हैं। इन लोगों के गीत के बोल सुनाई पड़ते हैं। कवि ने सतपुड़ा के घने जंगल में रहने वाले गोंड जाति का वर्णन किया है। नींद में डूबे हुए जो यह उदास जंगल हैं, उसमें गोंड जाति के लोगों का अपना बसेरा है।

(5) जागते अँगड़ाइयों में, खोह-खड्डों खाइयों में .... ऊँघते अनमने जंगल॥

अर्थ- कवि सतपुड़ा के जंगल का वर्णन करते हुए कहते हैं कि यह जंगल हमेशा अँगड़ाइयाँ लेकर जागते रहते हैं। यह जंगल खड्डों और खाइयों से भरे हुए हैं। इन जंगलों के सभी वृक्ष, घास, कास, शाल और पलाश, लता, वायु, डाल, पत्ते सब पागल हो गए हैं। इन वनों के बहुत ही अंदर मुर्गे और तीतर सब मस्त हो गए। यह घना जंगल आकाश तक फैला हुआ है। ऐसा हमें लगता है। मृत्यु में मैला हुआ सा भयभीत करने वाला है। काली लहर जिस तरह फैल जाती है यह उसी तरह मथित जहर वाले साँप की तरह भी यह फैला हुआ है। अर्थात् मेरू वाला, शेष वाला, शम्भु वाला और सुरेश वाला जो साँप जिसने अपने शीश पर इस धरती को उठाए हुए हैं ऐसी दंत कथाएँ हैं। उसी तरह यह जंगल हमें भयानक प्रतीत होता है उस एक सागर को जानते हो ऐसा सवाल कवि ने किया है कि उस जंगल में ठीक वैसा ही सागर है शांत, घने जंगल में यह सब दिखाई देता है।

(6) धँसों इनमें डर नहीं है, मौत का यह घर नहीं है, ... लताओं के बने जंगल॥

अर्थ- कवि कहते हैं कि यह सतपुड़ा के घने जंगल का वर्णन करने के बाद आप डर से भयभीत होकर यह जंगल देखने नहीं जाएंगे या जाने के बारे में सोचेंगे ही नहीं, किन्तु आपको डरना नहीं है इन जंगलों में प्रवेश कर लो यह मौत का घर नहीं है। भले ही इनमें कठिनाइयाँ, कष्ट, संकट हैं, उस जंगल में उतरकर अनेक बहते हैं अर्थात् जब वहाँ जाते हैं। जब बाहर आते हैं तो वहाँ के अनेक अनुभव की कथा भी कहते हैं। इन जंगल में नदी, नाले, निर्झर इन वनों ने गोद में जो पाला है जिन वृक्षों को वहाँ के प्राणियों को, पशु-पक्षियों को सभी अनुभव को बाहर आकर बता सकते हैं। लाखों पक्षी, सौ से अधिक हिरण के दल इस वन में निवास करते हैं। चाँदनी कितने किरणों के दल हैं। झूमते वन, फूल हैं जो कलियाँ हमें दिखाई देंगी। उस जंगल में अनेक अज्ञात कलियाँ भी खिलती हुई दिखाई देंगी। कष्ट और संकट के अलावा भी इस जंगल में देखने योग्य सुन्दरता बहुत है ऐसा कवि का मानना है। आगे कवि कहते हैं कि हरी-भरी घास या दूर्वा पूर्ण रक्त फूल, किसलय, पावन पूर्ण रसमय इस सतपुड़ा के घने जंगल पूर्णतय: लताओं से भरे हुए हैं।

निष्कर्ष :
सतपुड़ा के जंगल का सूक्ष्म वर्णन
जंगलों का कष्टदायक सफर का वर्णन
गोंड जाति के लोगों का वर्णन
कवि द्वारा दी गई चुनौती का वर्णन
जंगल का कष्टदायक सफर पूरा करने का अनुभव
जंगल के सौन्दर्य का वर्णन
प्रकृति-चित्रण

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. भवानी प्रसाद मिश्र, अज्ञेय द्वारा सम्पादित किस सप्तक में शामिल है?
(क) तार सप्तक, (ख) दूसरा सत्पक,
(ग) तीसरा सप्तक, (घ) चौथा सप्तक

2. भवानी प्रसाद मिश्र का जन्म म.प्र. के किस जिले में हुआ था?
(क) भोपाल (ख) ग्वालियर,
(ग) नर्मदापुरम (होशंगाबाद), (घ) सिवनी

3. मिश्र जी को 'कविता का गाँधी' किस कहानीकार ने कहा था?
(क) स्वयं प्रकाश (ख) कमलेश्वर,
(ग) उदय प्रकाश, (घ) उषा प्रियंवदा

4. मिश्र जी को साहित्य अकादमी पुरस्कार से किस काव्य संग्रह के लिए सम्मानित किया गया है?
(क) गीत फरोश, (ख) बुनी हुई रस्सी,
(ग) कमल के फूल, (घ) घर की याद

5. मिश्रजी ने किस मासिक पत्रिका का सम्पादन कार्य किया था?
(क) माधुरी, (ख) कल्पना,
(ग) जागरण, (घ) इनमें से कोई नहीं।

6. 'सतपुड़ा के जंगल' कविता में किस जनजाति का वर्णन किया गया है?
(क) भील, (ख) कोरकू, (ग) बैगा, (घ) गोंड

7. कवि ने 'सतपुड़ा के जंगल' को क्या कहकर वर्णित किया गया है?
(क) नींद में डूबे हुए से, (ख) ऊँघते अनमने जंगल
(ग) अजगरों से भरे जंगल, (घ) इनमें से सभी।

8. कवि ने इस कविता में कितने मुर्गे और तीतर का उल्लेख किया है?

(क) चार, (ख) तीन, (ग) दो, (घ) सौ

9. मिश्र जी ने 'सतपुड़ा के जंगल' में किस त्योहार का उल्लेख किया है?

(क) होली, (ख) पूर्णिमा, (ग) सावन, (घ) लोहड़ी

10. मिश्र जी द्वारा रचित संस्मरण है–

(क) तुकों के खेल, (ख) जिन्होंने मुझे रचा,

(ग) रक्तकमल, (घ) सन्नाटा

11. मध्यप्रदेश शासन द्वारा दिया गया सम्मान है–

(क) शरद जोशी, (ख) कबीर सम्मान,

(ग) शिखर सम्मान, (घ) इनमें से कोई नहीं

12. 'सतपुड़ा के जंगल' कविता में वर्णन किया गया है।

(क) जंगल के सौन्दर्य का वर्णन, (ख) गोंड जाति के लोगों का वर्णन

(ग) प्रकृति-चित्रण, (घ) इनमें से सभी।

13. भवानी प्रसाद मिश्र को किस उपनाम से जाना जाता है?

(क) बालमोहन, (ख) ब्रजमोहन

(ग) ब्रजकिशोर, (घ) मोहन

14. निम्नलिखित में से कौन सी रचना भवानी प्रसाद मिश्र की नहीं है?

(क) कमल के फूल, (ख) कागज के फूल

(ग) तुकों के खेल, (घ) तूस की आग

15. ''जी हाँ, हुजूर, मैं गीत बेचता हूँ, मैं तरह-तरह के गीत बेचता हूँ, मैं किसम-किसिम के गीत बेचता हूँ।'' प्रस्तुत पंक्तियाँ मिश्रजी की कविता से ली गई हैं?

(क) गीत-फरोश, (ख) सतपुड़ा के जंगल

(ग) खुशबू के शिलालेख, (घ) चकित है दु:ख

16. ''मैंने अपनी कविता में प्राय: वही लिखा है जो मेरी ठीक पकड़ में आ गया है। दूर से कौड़ी लाने की महत्वाकांक्षा भी मैंने कभी नहीं की।'' यह कथन मिश्रजी ने किस पुस्तक की भूमिका में लिखा है।

(क) तार सप्तक, (ख) तीसरा सप्तक

(ग) दूसरा सप्तक, (घ) चतुर्थ सप्तक

17. ''जिस तरह हम बोलते हैं, उस तरह तू लिख, और इसके बाद भी हमसे बड़ा तू दिख।'' प्रस्तुत पंक्ति किस कवि की है?

(क) माखनलाल चतुर्वेदी, (ख) मैथिलीशरण गुप्त

(ग) रामधारी सिंह दिनकर, (घ) भवानी प्रसाद मिश्र

18. 'सतपुड़ा के जंगल' का मुख्य विषय क्या है?

(क) यह एक लंबी कविता जंगल पर आधारित है।

(ख) यह एक लंबी कविता प्रकृति-चित्रण पर आधारित है।

(ग) क एवं ख दोनों

(घ) इनमें से कोई नहीं

19. 'त्रिकाल संध्या' नामक पुस्तक के लेखक हैं।

(क) भवानी प्रसाद मिश्र, (ख) विद्यानिवास मिश्र

(ग) गोविन्द मिश्र, (घ) इनमें से कोई नहीं।

20. 'कुछ नीति कुछ राजनीति' निबंध-संग्रह के लेखक हैं।

(क) विद्यानिवास मिश्र, (ख) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

(ग) भवानी प्रसाद मिश्र, (घ) इनमें से कोई नहीं।

उत्तरमाला

1. (ख),	2. (ग),	3. (ग),	4. (ख),	5. (ख),	6. (घ),
7. (घ),	8. (क),	9. (क),	10. (ख),	11. (ग),	12. (घ),
13. (क),	14. (ख),	15. (क),	16. (ग),	17. (घ),	18. (ग),
19. (क),	20. (ग)				

https://kavitakosh.org (सतपुड़ा के जंगल-भवानी प्रसाद मिश्र)

2

वापसी

(उषा प्रियंवदा)

जीवन परिचय :

उषा प्रियंवदा नई कहानी के दौर की चर्चित महिला कहानीकारों की त्रयी में एक। अन्य दो, मन्नू भण्डारी और कृष्णा सोबती हैं।

उषा प्रियंवदा का जन्म 24 दिसम्बर, 1931 को कानपुर, उत्तर-प्रदेश में हुआ था। उन्होंने उच्च शिक्षा 'इलाहाबाद विश्वविद्यालय' से हासिल की। उषा प्रियंवदा की गणना उन कथाकारों में होती है, जिन्होंने आधुनिक जीवन की ऊब, छटपटाहट, संत्रास और अकेलेपन की स्थिति को पहचाना और व्यक्त किया है। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में एक ओर आधुनिकता का प्रबल स्वर मिलता है तो दूसरी ओर उसमें विचित्र प्रसंगों तथा संवेदनाओं के साथ हर वर्ग का पाठक तादात्म्य का अनुभव करता है।

कार्यक्षेत्र

दिल्ली के लेडी श्रीराम कॉलेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्राध्यापन के बाद फुलब्राइट स्कालरशिप पर अमरीका प्रस्थान किया, जहाँ ब्लूमिंगटन, इंडियाना में दो वर्ष पोस्ट डाक्टरल अध्ययन किया। विस्कांसिन विश्वविद्यालय, मैडीसन से दक्षिण एशियाई विभाग में प्रोफेसर के पद से अवकाश प्राप्त किया।

प्रमुख कृतियाँ

उषा जी के कथा साहित्य में शहरी परिवारों के बड़े ही अनुभूति प्रवण चित्र हैं और आधुनिक जीवन की उदासी, अकेलेपन, ऊब आदि का अंकन करने में उन्होंने अत्यंत गहरे यथार्थबोध का परिचय दिया है। उनकी प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार हैं–

कहानी संग्रह

जिन्दगी और गुलाब के फूल (1961), फिर वसंत आया (1961), एक कोई दूसरा (1966), वनवास, शून्य, प्रसंग, मेरी प्रिय कहानियाँ, कितना बड़ा झूठ (1972), जाले, छुट्टी का दिन, कच्चे धागे, पूर्ति, कंटीली छांह, पहला पाठ, भटकती राख, वापसी, मछलियाँ, प्रतिध्वनि, दो अंधेरे, चाँद चलता रहा, दृष्टिदोष, ट्रिप, सुरंग, स्वीकृति, झूठा दर्पण, पिघलती हुई बर्फ, टूटे हुए, आधा शहर, पुनरावृत्ति इत्यादि।

उपन्यास

- पचपन खम्भे लाल दीवारें (1961)
- भया कबीर उदास (2007)
- रुकोगी नहीं राधिका (1967)
- शेष यात्रा (1984)
- अंतर्वंशी (2000), नदी (2013)

सम्मान : 2007 में केंद्रीय हिन्दी संस्थान द्वारा पद्मभूषण

उषा प्रियंवदा की कहानियों का मूल कथ्य और विशेषताएँ : उषा जी की समस्त कहानियाँ मध्यवर्गीय जीवन के सुख-दुःख, आशा, निराशा एवं जीवन संघर्ष पर आधारित है। स्त्रियों की दशा को लेकर नई पुरानी पीढ़ी के टकराव का चित्रण किया है। होस्टल में पढ़ने वाली छात्रा, नौकरीपेशा अकेली रहने वाली औरत, विदेश जाने वाली स्त्री के संत्रास का चित्रण इन्होंने बखूबी किया है।

राजेन्द्र यादव के अनुसार ''वापसी कहानी हमारे समाज के टूटन की कहानी है, जिसमें युवा वर्ग अपने ही बुजुर्गों को अवमानना की जिन्दगी बिताने के लिए मजबूर करता है। आपकी कहानियों में मुख्यतः मध्यवर्गीय व्यक्तिवादी चेतना व्यंजित हुई है।''

उषाजी की कहानियाँ भारतीय नारी की असहायता एवं मजबूरियों को उजागर करती हैं। नारी होने के नाते वे नारी की पीड़ा को समझती भी हैं और सशक्त कथानक व भाषा शैली में व्यक्त करने में भी सक्षम हैं। इनकी कहानियाँ की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं। भारतीय नारी के आदर्श स्वरूप की स्थापना, उसकी रिक्तयोजित ईर्ष्या का वर्णन एवं नारी की दयनीय स्थिति का चित्रण। नारी के स्वभावगत गुण विनम्रता, दशा एवं समर्पण की भावना को बड़ी तीव्रता के साथ अभिव्यंजित किया है। वह किसी का हो जाने में गर्वित अनुभव करती है। पश्चिमी नारी की भांति पुरुष बनाना और बदलना उसकी फितरत में नहीं है। मछलियाँ एवं प्रतिध्वनि ऐसी ही कहानियाँ हैं।

उषा प्रियंवदा की कहानी कला

उषा प्रियंवदा नई कथाकारों की पंक्ति में अग्रगण्य हैं। स्त्री लेखन को समृद्ध और नई ऊँचाइयाँ प्रदान करने में इनका विशेष योगदान है। उषा जी का अधिकांश लेखन नारी विमर्श पर आधारित है। उन्होंने भारतीय नारी की असहाय स्थिति एवं मूक सहन-शीलता का चित्रण बखूबी किया है। साथ ही मध्यमवर्गीय परिवार की समस्याओं, विघटनकारी स्थिति एवं बुजुर्गों की उपेक्षा का चित्रण भी सटीक भाषा में किया है। भारतीय परिवारों में नारी आदर्श रूपा रही है। वह अपने त्याग, प्रेम एवं समर्पण द्वारा परिवार के सदस्यों के लिए अपना सुख भूल जाती है। उसका पति के प्रति एकनिष्ठ प्रेम व समर्पण अतुलनीय है।

'मछलियाँ' कहानी की बिजी कहती हैं–

''नटराजन मुनिष् कहा करता था कि प्यार चुक जाता है, भावनाएँ मर जाती हैं। अक्सर

मैं सोचती हूँ कि मुझमें ऐसा क्यों नहीं होता है। मैं क्यों निर्मम कठोर क्यों नहीं हो पाती।" इस कथन में नारी की समर्पण भावना व्यक्त हुई है।

उषा जी की कहानियों में पुरुष के लम्पट स्वभाव का चित्रण भी हो गया है। उषा जी की कहानियाँ भावमूलक हैं। कहानियों में आर्थिक विषमता का भी चित्रण हुआ है, किन्‍ पात्र भावात्मक धरातल पर ही जीते हैं।

उषा प्रियंवदा की उपलब्धियाँ

विदेश में रहकर हिन्दी भाषा तथा साहित्य में अहम योगदान देने वाले साहित्यका में उषा जी भी एक हैं। अपना जीवन साहित्य के प्रति पूर्ण समर्पित कर देने वाली इस हिन्द सेविका को मोटूरि सत्यनारायण पुरस्कार से भी सम्मानित किया जा चुका है। इन्होंने कथ साहित्य में खोते हुए भारतीय मूल्यों को पुनः स्थापित कर पारिवारिक विघटन को रोकने लिए आव्हान किया है। इन्होंने आज के जीवन की मुख्य समस्याएँ जैसे ऊब, छटपटाह संत्रास और अकेलेपन को पहचाना तथा सटीक चित्रण भी किया।

वापसी कहानी की समीक्षा

उषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों में पारिवारिक जीवन की परिवर्तित व्यवस्था एवं प्र संबंधों के बदलते स्वरूप को अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनकी कहानियों में आधुनिक परिवा में बदलते मानवीय सम्बन्धों की व्याख्या बहुत सुन्दर और स्वाभाविक ढंग से की गयी है 'वापसी' उनकी चर्चित कहानियों में से एक है। यह कहानी संयुक्त परिवार के विघटन क कहानी है। इसमें एक व्यक्ति के रिटायर होकर घर लौटने और पुनः घर छोड़कर अन्यत्र जा की कहानी को बहुत मार्मिकता से अभिव्यक्त किया गया है।

कथानक : 'वापसी' एक रिटायर्ड रेल्वे कर्मचारी की कहानी है।

गजाधर बाबू पैंतीस वर्ष की नौकरी के पश्चात् अत्यन्त उत्साह के साथ घर लौटते हैं उन्हें अपने परिवार से बहुत स्नेह था। स्त्री और बच्चों को उन्होंने पढ़ाई की सुविधा की दृ से शहर छोड़ दिया था तथा स्वयं रेल्वे क्वार्टर में रहते थे। जिस समय रिटायर वे होते हैं उन्हें एक परिचित संसार को छोड़ने का दुख है, किन्तु उन्हें अपने परिवार के साथ रह सक की प्रसन्नता भी होती है। लेकिन अपने घर में आकर जब इसके विपरीत होता है। तब अकेलेप का अहसास और गहरा हो जाता है।

वे अपने घर में अपनी व्यर्थता का अनुभव करते हैं। जैसे किसी मेहमान के लिए अस्था चारपाई का प्रबंध कर दिया जाता है, वैसे ही उनके लिए बैठक में एक पतली सी चारपा डाल दी गयी। वे अपनी पत्नी से भी बातचीत में सहानुभूति का अभाव पाते हैं और अनुभ करते हैं कि उनकी लड़की, पुत्र, पुत्रवधु को किसी भी बात में उनका हस्तक्षेप सहन न है। उनकी उपस्थिति घर में ऐसी लगने लगी जैसे बैठक में उनकी चारपाई थी। उन्होंने अनुभ किया कि वह अपनी पत्नी और बच्चों के धनोपार्जन का साधन मात्र थे।

अंत में वह किसी दूसरी नौकरी पर चले जाते हैं, तब भी पत्नी उनके साथ नहीं जा और उनकी उपस्थिति की प्रतीक चारपाई कमरे से बाहर निकाल दी जाती है। यह सम्पू

कथा बहुत सुंदर ढंग से प्रस्तुत की गयी है। रोचकता आद्यतन बनी रहती है। पाठक को यह घर-घर की कहानी प्रतीत होती है। पीढ़ी का संघर्ष कुछ इस रूप में मुखरित हुआ है कि पुरानी पीढ़ी में सामंजस्य का अभाव नहीं है, अपितु नयी पीढ़ी में हृदय-हीनता एवं पुरानी पीढ़ी के प्रति उदासीनता ही अधिक दिखाई पड़ती है।

चरित्र-चित्रण- कहानी में सर्वाधिक महत्वपूर्ण चरित्र गजाधर बाबू का ही है। प्रारम्भ में ही वह एक सहृदय एवं स्नेही व्यक्ति के रूप में हमारे सामने आते हैं। घर जाने की खुशी में भी वह एक विषाद का अनुभव करते हैं, जैसे एक परिचित स्नेह, आदरमय, सहज संसार से उनका नाता टूट रहा हो। उनका सेवक गनेशी उनके जाने पर दुखी होता है तो वे कहते हैं- "कभी कुछ जरूरत हो तो लिखना गनेशी, इस अगहन तक बिटिया की शादी कर दो।"

उन्हें अपनी पत्नी और बच्चों से बहुत लगाव था, किन्तु जब वह यह जान लेते हैं कि वह उनके लिए धनोपार्जन के निमित्त मात्र हैं तो वह चुपचाप उनके जीवन से दूर नौकरी करने चले जाते हैं। उनमें सामंजस्य की क्षमता का अभाव नहीं है, किन्तु उनकी पत्नी, बच्चों के साथ गृहस्थ में रम गयी हैं। पति को उसकी सहानुभूति की कितनी आवश्यकता है, इसका उसे जरा सा भी अहसास नहीं होता है। नरेन्द्र आधुनिक युग का वह युवक है जो पिता के साथ रहना पसंद नहीं करता है। वह माँ से कहता है- "अम्मा तुम बाबू जी से कहती क्यों नहीं? बैठे बिठाये कुछ करते नहीं तो नौकर को ही छुड़ा दिया। अगर बाबूजी यह समझें की मैं साइकिल पर गेहूँ रखकर आटा पिसाने जाऊँगा तो मुझसे यह नहीं होगा। बूढ़े आदमी हैं, चुपचाप पड़े रहें। हर चीज में दखल क्यों देते हैं।" बसंती भी पिता के टोकने के कारण उनसे बोलती तक नहीं है। उसे और उसकी भाभी को गजाधर बाबू का नौकर छुड़ाना बहुत बुरा लगता है। गजाधर बाबू के पुनः नौकरी पर चले जाने से सभी बहुत प्रसन्न होते हैं।

भाषा-शैली- 'वापसी' कहानी की भाषा इसके कथ्य एवं चरित्रों के अनुकूल ही है। कहानी की भाषा दैनिक प्रयोग में आने वाली सरल भाषा है। उसमें समप्रेषणीयता एवं गति है। कहानी के मूलभाव स्वरूप घर में गजाधर की स्थिति को व्यक्त करने वाली भाषा का एक उदाहरण इस प्रकार है- "किसी भी बात में हस्तक्षेप न करने के निश्चय के बाद भी उनका अस्तित्व उस वातावरण का एक भाग न बन सका। उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी जैसे सजी हुई बैठक में उनकी चारपाई थी। उनकी सारी खुशी एक उदासीनता में डूब गयी।"

संवाद प्रयोग- संवाद कहानी की नाटकीयता एवं सजीवता में वृद्धि करते हैं। प्रस्तुत कहानी के संवादों की भाषा सरल है। वे सहज, स्वाभाविकता से पूर्ण हैं तथा कथानक को गति प्रदान करते हैं। पात्रों की मनस्थिति का परिचय देने में ये संवाद विशेष रूप से सहायक हुए हैं। उदाहरण-

नरेन्द्र ने थाली सरकाकर कहा, "मैं ऐसा खाना नहीं खा सकता।"

बसंती तुनककर बोली, "तो न खाओ" कौन तुम्हारी खुशामद करता है?

'तुमसे खाना बनाने को कहा किसने था?' नरेन्द्र चिल्लाया, 'बाबूजी ने।'

'बाबूजी को बैठे-बैठे यही सूझता है।'

वातावरण- उषा प्रियंवदा ने 'वापसी' कहानी में विघटित होते हुए संयुक्त परिवा को सफलतापूर्वक उभारा है। संयुक्त परिवार का एक चित्र इन पंक्तियों में मिल जायेगा- "आ और उसकी बहु की शिकायतें बहुत थीं। उनका कहना था कि गजाधर बाबू हमेशा बैठक में ही पड़े रहते हैं। कोई आने जाने वाला हो तो बैठाने की जगह नहीं। अमर को अब भ वह छोटा सा समझते थे और मौके बेमौके टोक देते थे। बहु को काम करना पड़ता था औ सास जब तब फूहड़पन पर ताने देती रहती थी।"

उद्देश्य- वापसी कहानी में विघटित हुए संयुक्त परिवार की झाँकी प्रस्तुत की गयी है। पीढ़ी संघर्ष एवं नवीन पीढ़ी की हृदयहीनता का चित्रण लेखिका ने सफलतापूर्वक किया है। गजाधर बाबू नयी पीढ़ी व पुरानी पीढ़ी के संघर्ष के संदर्भ में विवशतापूर्ण अकेलापन चुनने के लिए बाध्य हैं। पुराने संस्कारों के कारण वह नये के साथ सामंजस्य नहीं कर पाये, यह दृष्टिकोण एकांकी होगा, नये के पास वह सहृदय ही नहीं है जो उन्हें सामंजस्य का अवतार भी प्रदान करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि 'वापसी' कहानी कला की कसौटी पर खरी उतरती है।

निष्कर्ष - 'वापसी' कहानी, कहानी-कला की कसौटी पर खरी उतरती है। यह पारिवारिक विघटन को प्रस्तुत करने वाली कहानियों में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कथावस्तु, चरित्र, वातावरण, उद्देश्य आदि सभी दृष्टियों से यह एक विशिष्ट और प्रभावी कहानी है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. गजाधर बाबू पैंतीस वर्षों तक कहाँ कार्यरत थे?
(क) बैंक ऑफ इंडिया (ग) शिक्षण संस्थान
(ख) रानीपुर रेलवे स्टेशन (घ) इनमें से कोई नहीं

2. गजाधर बाबू किस कहानी के पात्र हैं?
(क) वापसी (ग) दोपहर का भोजन
(ख) उसने कहा था (घ) पत्नी

3. गजाधर बाबू के कुल कितने बच्चे थे?
(क) चार (ग) तीन (ख) दो (घ) एक

4. 'वापसी' कहानी का प्रकाशन वर्ष है-
(क) 1960, (ख) 1970, (ग) 1980, (घ) 1950

5. वापसी कहानी में कौन रानीपुर रेलवे स्टेशन में चाय-नाश्ता, पूरिया, जलेबी आदि बेचता था, जो गजाधर बाबू का बिस्तर बाँध रहा था?
(क) गणेश, (ख) शंकर, (ग) गणेशी, (घ) भोलाराम

6. वापसी कहानी में- "आप अकेले क्यों बैठे हो और बच्चे कहाँ चले गए?" यह प्रश्न किसने किससे पूछा है?

(क) गजाधर बाबू से उनकी पत्नी ने (ख) गजाधर बाबू से पड़ोसी ने
(ग) अपनी पत्नी से गजाधर बाबू ने (घ) इनमें से कोई नहीं।

7. गजाधर के बड़े बेटे का नाम क्या था?
(क) अमर, (ख) गणेश, (ग) नरेन्द्र, (घ) मोहन

8. गजाधर की छोटी बेटी का नाम क्या था?
(क) बसंती, (ख) कांति, (ग) सुमन, (घ) मालती

9. गजाधर बाबू के लिए मधुर संगीत क्या था?
(क) पटरी पर रेल के पहियों की खट-खट
(ख) सड़क मार्ग का कोलाहल
(ग) रेल इंजन की आवाज़ (घ) इनमें से कोई नहीं।

10. गजाधर बाबू का स्वभाव कैसा था?
(क) स्नेही, (ख) गुस्सैल,
(ग) मनोविनोद, (घ) इसमें से कोई नहीं

11. गजाधर बाबू के कितने बच्चों का विवाह हो चुका था?
(क) अमर और कांति, (ख) बसंती और नरेन्द्र
(ग) कांति और बसंती, (घ) इनमें से कोई नहीं।

12. गजाधर बाबू दोबारा कहाँ नौकरी पर गये?
(क) पेपर मिल, (ख) मैदा मिल,
(ग) कारखाना, (घ) चीनी मिल

13. गजाधर बाबू के दोबारा नौकरी पर जाने का कारण था?
(क) पत्नी की उपेक्षा, (ख) मात्र धनोपार्जन का साधन होना
(ग) पुत्री, बहु व पुत्र की नाराजगी, (घ) इनमें से सभी।

14. 'शीला' कहानी में कौन है?
(क) बड़ी बेटी, (ख) छोटी बेटी, (ग) पत्नी, (घ) पड़ोसी

15. नई कहानी के दौर की चर्चित महिला कहानीकारों में त्रयी रूप में शामिल है।
(क) उषा प्रियंवदा, (ख) मन्नू भण्डारी
(ग) कृष्णा सोबती, (घ) इनमें से सभी

16. उषा प्रियंवदा की प्रमुख रचनाओं का विषय रहा है।
(क) आधुनिक जीवन की उदासी, (ख) अकेलापन
(ग) शहरी परिवेश का चित्रण, (घ) इनमें से सभी

वातावरण- उषा प्रियंवदा ने 'वापसी' कहानी में विघटित होते हुए संयुक्त परिवा को सफलतापूर्वक उभारा है। संयुक्त परिवार का एक चित्र इन पंक्तियों में मिल जायेगा- ''आप और उसकी बहु की शिकायतें बहुत थीं। उनका कहना था कि गजाधर बाबू हमेशा बैठक में ही पड़े रहते हैं। कोई आने जाने वाला हो तो बैठाने की जगह नहीं। अमर को अब भी वह छोटा सा समझते थे और मौके बेमौके टोक देते थे। बहु को काम करना पड़ता था औ सास जब तब फूहड़पन पर ताने देती रहती थी।''

उद्देश्य- वापसी कहानी में विघटित हुए संयुक्त परिवार की झाँकी प्रस्तुत की गयी है। पीढ़ी संघर्ष एवं नवीन पीढ़ी की हृदयहीनता का चित्रण लेखिका ने सफलतापूर्वक किया है। गजाधर बाबू नयी पीढ़ी व पुरानी पीढ़ी के संघर्ष के संदर्भ में विवशतापूर्ण अकेलापन चुनने के लिए बाध्य हैं। पुराने संस्कारों के कारण वह नये के साथ सामंजस्य नहीं कर पाये, यह दृष्टिकोण एकांकी होगा, नये के पास वह सहृदय ही नहीं है जो उन्हें सामंजस्य का अवता भी प्रदान करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि 'वापसी' कहानी कला की कसौटी पर खरी उतरती है।

निष्कर्ष - 'वापसी' कहानी, कहानी-कला की कसौटी पर खरी उतरती है। यह पारिवारिक विघटन को प्रस्तुत करने वाली कहानियों में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कथावस्तु, चरित्र, वातावरण, उद्देश्य आदि सभी दृष्टियों से यह एक विशिष्ट और प्रभावी कहानी है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. गजाधर बाबू पैंतीस वर्षों तक कहाँ कार्यरत थे?
   (क) बैंक ऑफ इंडिया (ग) शिक्षण संस्थान
   (ख) रानीपुर रेलवे स्टेशन (घ) इनमें से कोई नहीं
2. गजाधर बाबू किस कहानी के पात्र हैं?
   (क) वापसी (ग) दोपहर का भोजन
   (ख) उसने कहा था (घ) पत्नी
3. गजाधर बाबू के कुल कितने बच्चे थे?
   (क) चार (ग) तीन (ख) दो (घ) एक
4. 'वापसी' कहानी का प्रकाशन वर्ष है-
   (क) 1960, (ख) 1970, (ग) 1980, (घ) 1950
5. वापसी कहानी में कौन रानीपुर रेलवे स्टेशन में चाय-नाश्ता, पूरिया, जलेबी आदि बेचता था, जो गजाधर बाबू का बिस्तर बाँध रहा था?
   (क) गणेश, (ख) शंकर, (ग) गणेशी, (घ) भोलाराम
6. वापसी कहानी में- ''आप अकेले क्यों बैठे हो और बच्चे कहाँ चले गए?'' यह प्रश्न किसने किससे पूछा है?

   (क) गजाधर बाबू से उनकी पत्नी ने (ख) गजाधर बाबू से पड़ोसी ने
   (ग) अपनी पत्नी से गजाधर बाबू ने (घ) इनमें से कोई नहीं।
7. गजाधर के बड़े बेटे का नाम क्या था?
   (क) अमर, (ख) गणेश, (ग) नरेन्द्र, (घ) मोहन
8. गजाधर की छोटी बेटी का नाम क्या था?
   (क) बसंती, (ख) कांति, (ग) सुमन, (घ) मालती
9. गजाधर बाबू के लिए मधुर संगीत क्या था?
   (क) पटरी पर रेल के पहियों की खट-खट
   (ख) सड़क मार्ग का कोलाहल
   (ग) रेल इंजन की आवाज़ (घ) इनमें से कोई नहीं।
10. गजाधर बाबू का स्वभाव कैसा था?
   (क) स्नेही, (ख) गुस्सैल,
   (ग) मनोविनोद, (घ) इसमें से कोई नहीं
11. गजाधर बाबू के कितने बच्चों का विवाह हो चुका था?
   (क) अमर और कांति, (ख) बसंती और नरेन्द्र
   (ग) कांति और बसंती, (घ) इनमें से कोई नहीं।
12. गजाधर बाबू दोबारा कहाँ नौकरी पर गये?
   (क) पेपर मिल, (ख) मैदा मिल,
   (ग) कारखाना, (घ) चीनी मिल
13. गजाधर बाबू के दोबारा नौकरी पर जाने का कारण था?
   (क) पत्नी की उपेक्षा, (ख) मात्र धनोपार्जन का साधन होना
   (ग) पुत्री, बहु व पुत्र की नाराजगी, (घ) इनमें से सभी।
14. 'शीला' कहानी में कौन है?
   (क) बड़ी बेटी, (ख) छोटी बेटी, (ग) पत्नी, (घ) पड़ोसी
15. नई कहानी के दौर की चर्चित महिला कहानीकारों में त्रयी रूप में शामिल है।
   (क) उषा प्रियंवदा, (ख) मन्नू भण्डारी
   (ग) कृष्णा सोबती, (घ) इनमें से सभी
16. उषा प्रियंवदा की प्रमुख रचनाओं का विषय रहा है।
   (क) आधुनिक जीवन की उदासी, (ख) अकेलापन
   (ग) शहरी परिवेश का चित्रण, (घ) इनमें से सभी

17. गजाधर बाबू ने अपनी नौकरी में कितने वर्ष अकेले व्यतीत किए थे?
(क) 35 वर्ष, (ख) 36 वर्ष, (ग) 32 वर्ष, (घ) 30 वर्ष

18. गजाधर बाबू के स्वभाव की इनमें से कौन सी विशेषताएँ नहीं थीं?
(क) वे स्नेही थे, (ख) वे परिवार के साथ रहना चाहते थे।
(ग) वह महत्वाकांक्षी थे (घ) वह मनोविनोदी स्वभाव के थे।

19. अमर को अपने पिताजी से क्या शिकायत थी?
(क) पिताजी का बेमौके टोक देना, (ख) हर चीज में हस्तक्षेप करना
(ग) अभी भी छोटा सा समझना, (घ) इनमें से सभी

उत्तरमाला

1. (ख),	2. (क),	3. (क),	4. (क),	5. (ग),	6. (क),
7. (क),	8. (क),	9. (क),	10. (क),	11. (क),	12. (घ),
13. (घ),	14. (घ),	15. (घ),	16. (घ),	17. (क),	18. (ग),
19. (घ)					

https://bharatdarshan.co.nz (वापसी–उषा प्रियंवदा)

■■■

3

शिकागो व्याख्यान

(स्वामी विवेकानंद)

जीवन परिचय :

स्वामी विवेकानंद का जन्म 12 जनवरी, 1863 को कलकत्ता (कोलकाता) में हुआ। आपके पिता का नाम विश्वनाथ दत्त और माता का नाम भुवनेश्वरी देवी था। संन्यास धारण करने से पहले आपका नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था आप नरेन के नाम से भी जाने जाते थे। आपका परिवार धनी, कुलीन और उदारता व विद्वता के लिए विख्यात था। विश्वनाथ दत्त कोलकाता उच्च न्यायालय में अटॉर्नी–एट–लॉ थे। वे कलकत्ता उच्च न्यायालय में वकालत करते थे। वे एक विचारक, अति उदार, गरीबों के प्रति सहानुभूति रखने वाले, धार्मिक व सामाजिक विषयों में व्यवहारिक और रचनात्मक दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्ति थे।

आपके पिता पाश्चात्य सभ्यता में विश्वास रखते थे। वे अपने पुत्र नरेन्द्र को भी अंग्रेजी पढ़ाकर पाश्चात्य सभ्यता के ढर्रे पर चलाना चाहते थे। नरेन्द्र की बुद्धि बचपन से तीव्र थी और परमात्मा में व अध्यात्म में ध्यान था। इस हेतु आप पहले 'ब्रह्म समाज' में गये किन्तु वहाँ आपके चित्त संतुष्ट न हुआ। इसी समय में आप अपने धार्मिक व अध्यात्मिक संशयों की निवारण हेतु अनेक लोगों से मिले लेकिन कहीं भी आपकी शंकाओं का समाधान न मिला। एक दिन आपके एक संबंधी आपको रामकृष्ण परमहंस के पास ले गये। नरेन्द्र दत्त स्वामी परमहंस के शिष्य बन गए। आप वेदान्त मत के दृढ़ अनुयायी बन गए थे।

1887 से 1892 के बीच स्वामी विवेकानंद अज्ञातवास में रहकर साधनारत रहने के बाद भारत–भ्रमण पर रहे।

आप वेदान्त और योग को पश्चिम संस्कृति में प्रचलित करने के लिए महत्वपूर्ण योगदान देना चाहते थे।

स्वामी विवेकानंद वेदांत के विख्यात और प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु थे। उनका वास्तविक नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। आपने अमेरिका स्थित शिकागो में 1893 में आयोजित विश्व धर्म महासभा में भारत की ओर से सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया था। भारत का वेदान्त अमेरिका और यूरोप के हर एक देश में स्वामी विवेकानंद के कारण ही पहुँचा। आपने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की जो आज भी अपना काम कर रहा है। आप स्वामी रामकृष्ण परमहंस के सुयोग्य व प्रतिभावान शिष्य थे। आपको अमरीका में दिए गए अपने भाषण की शुरुआत "मेरे अमेरिकी भाइयों एवं बहनों" के लिए जाना जाता है। 4 जुलाई, 1902 को आपका महाप्रयाण हुआ।

स्वामी विवेकानंद के अनमोल वचन

(1) उठो, जागो और ध्येय की प्राप्ति तक रुको मत।

(2) सफलता के तीन आवश्यक अंग हैं- शुद्धता, धैर्य और दृढता।

लेकिन, इन सबसे बढ़कर जो आवश्यक है वह है- प्रेम।

स्वमी विवेकानंद के प्रसंग व कथाएँ-

(1) ज्ञान- एक बार स्वामी विवेकानंद ने अपने गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस पूछा, ''बहुत से पंडित अनेक शास्त्रों का पाठ करते हैं। वेद-पाठ में ही सम्पूर्ण जीवन बि देते हैं- तथापि उन्हें ज्ञान-लाभ क्यों नहीं होता?''

स्वामी जी ने हँसते हुए उत्तर दिया, ''चील, गिद्ध आदि पक्षी उड़ते तो बहुत ऊँचे पर हैं, लेकिन उनकी दृष्टि पृथ्वी पर पड़े मांस के टुकड़ों पर ही रहती है। ठीक उसी प्रक वेद-शास्त्रों एवं ग्रंथों का पाठ करने से क्या लाभ होगा? यदि मन हमेशा सांसारिक वस्तु की ओर ही लगा रहे।''

(2) डर- एक बार स्वामीजी दुर्गाजी के मंदिर से निकल रहे थे तभी बहुत से बंद ने उन्हें घेर लिया। वे उनके नज़दीक आने लगे और डराने लगे। स्वामीजी भयभीत हो ग और खुद को बचाने के लिए दौड़कर भागने लगे, पर बंदर तो मानो पीछे ही पड़ गए औ वे उन्हें दौड़ाने लगे। पास खड़े एक वृद्ध संन्यासी ये सब देख रहे थे। उन्होंने स्वामीजी क रोका और बोले, ''रुको! उनका सामना करो।'' स्वामीजी तुरन्त पलटे और बंदरों के तरफ बढ़ने लगे। ऐसा करते ही सभी बंदर भाग गए। इस घटना से स्वामीजी को एक गम्भीर सीख मिली और कई सालों बाद उन्होंने एक सम्बोधन में कहा, ''यदि तुम कभी किसी चीज़ से भयभीत हो तो उससे भागो मत, पलटो और सामना करो।''

इस तरह 'पवहारी बाबा', 'निर्भीक बालक', 'मानव धर्म सर्वोपरि' एवं 'गुरुमात का आर्शीवाद', प्रसंग व कथाएँ प्रसिद्ध हैं।

प्रमुख कविताएँ-

(1) काली माता

(2) सागर के वक्ष पर

शिकागो व्याख्यान की संक्षिप्त सारांश

अमेरिकावासी मेरे भाइयों और बहनों, आपने जिस स्नेह के साथ हम लोगों का स्वागत किया है उसके प्रति आभार प्रकट करने के निमित्त खड़े होते समय मेरा हृदय हर्ष से पूर्ण हो रहा है।

संसार में संन्यासियों की सबसे प्राचीन परम्परा की ओर से मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और सभी सम्प्रदायों एवं मतों के कोटि-कोटि हिन्दुओं की ओर से भी धन्यवाद देता हूँ। मैं इस मंच पर से बोलने वाले उन कतिपय वक्ताओं के प्रति भी धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ

जिन्होंने आपको यह बतलाया है कि सुदूर देशों के ये लोग सहिष्णुता का भाव विविध देशों में प्रचारित करने के गौरव का दावा कर सकते हैं।

मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करता हूँ जिसने संसार को सहिष्णुता तथा सार्वभौम स्वीकृत- दोनों की ही शिक्षा दी है।

हम भारतीय लोग सब धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते वरन समस्त धर्मों को सच्चा मान कर स्वीकार करते हैं।

मुझे ऐसे देश का व्यक्ति होने का अभिमान है जिसने इस पृथ्वी के समस्त धर्मों और देशों के उत्पीड़ितों और शरणार्थियों को आश्रय दिया है, मुझे आपको यह बतलाते हुए गर्व होता है कि हमने अपने हृदय में उन यहूदियों के विशुद्धतम अवशिष्ट को स्थान दिया था। जिन्होंने दक्षिण भारत आकर उसी वर्ष शरण ली थी जिस वर्ष उनका पवित्र मन्दिर रोमन जाति के अत्याचार से धूल में मिला दिया गया था।

ऐसे धर्म का अनुयायी होने में मैं गर्व का अनुभव करता हूँ जिसने महान जरथुष्ट जाति को शरण दी और जिसका पालन वह अब तक कर रहा है।

भाईयों मैं आप लोगों को कुछ पंक्तियाँ सुनाता हूँ जिसकी आवृत्ति मैं बचपन से कर रहा हूँ और जिसकी आवृत्ति प्रतिदिन लाखों मनुष्य किया करते हैं:

रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषाम्।

नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव॥

अर्थात् जैसे विभिन्न नदियाँ भिन्न-भिन्न स्त्रोतों से निकलकर समुद्र में मिल जाती है उसी प्रकार हे ईश्वर, भिन्न-भिन्न रुचि के अनुसार विभिन्न रास्ते से जाने वाले लोग अन्त में तुझमें ही आकर मिल जाते हैं।

यह सभा, जो अभी तक आयोजित सर्वश्रेष्ठ पवित्र सम्मेलनों में से एक है स्वतः ही गीता के इस अद्‌भुत उपदेश की घोषणा करती है।

ये यथा माँ प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥

अर्थात् जो कोई मेरी ओर आता है, चाहे किसी प्रकार से हो, मैं उसको प्राप्त होता हूँ, लोग भिन्न मार्ग द्वारा प्रयत्न करते हुए अन्त में मेरी ही ओर आते हैं।

साम्प्रदायिकता, हठधर्मिता और उनकी वीभत्स वंशधर धर्मान्धता इस सुन्दर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुकी हैं।

ये सब वो कारक हैं जो पृथ्वी को हिंसा से भरते रहे हैं, सभ्यताओं को नष्ट करते हुए पूरे के पूरे देशों को निराशा के गड्ढे में डालते रहे हैं।

यदि ये राक्षसी शक्तियाँ न होतीं तो मानव समाज आज की अवस्था से कहीं अधिक उन्नत हो गया होता, पर अब उनका समय आ गया है और मैं आन्तरिक रूप से आशा करता हूँ कि आज सुबह इस सभा के सम्मान में जो करतल ध्वनि हुई है वह समस्त धर्मान्धता का

तलवार या लेखनी के द्वारा होने वाले सभी उत्पीड़नों का तथा एक ही लक्ष्य की ओर अ
होने वाले मानवों की पारस्परिक कटुता का मृत्यु निनाद सिद्ध हो।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. स्वामी विवेकानंद के गुरु कौन थे–
   (क) शंकराचार्य, (ख) महर्षि अरविंद
   (ग) स्वामी रामकृष्ण परमहंस, (घ) आचार्य विनोबा भावे
2. स्वामी विवेकानंद का जन्मदिन किस रूप में मनाया जाता है–
   (क) युवा दिवस, (ख) मातृ दिवस
   (ग) बाल दिवस, (घ) संन्यासी दिवस
3. स्वामी विवेकानंद ने शिकागो व्याख्यान किस दिन दिया था–
   (क) 11 सितम्बर, 1893, (ख) 11 सितम्बर, 1896
   (ग) 11 सितम्बर, 1897, (घ) 11 सितम्बर, 1894
4. स्वामी विवेकानंद ने शिकागो व्याख्यान में श्रोताओं को क्या कह कर सम्बोधित कि
   था–
   (क) माताओं और बहनों, (ख) अमेरिकावासी बहनों तथा भा
   (ग) अमेरिका के श्रोताओं, (घ) अमेरिका के भाइयों
5. शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन में स्वामी विवेकानंद ने किस देश के प्रतिनिधि
   रूप में व्याख्यान दिया था–
   (क) मॉरीशस, (ख) श्रीलंका (ग) भारत, (घ) अमेरि
6. 'युवा दिवस' कब मनाया जाता है?
   (क) 11 सितम्बर, (ख) 12 सितम्बर (ग) 11 जनवरी, (घ) 12 जन
7. 'उठो, जागो तब तक मत रुको जब तक लक्ष्य प्राप्त न जो जाए' कथन किसका है
   (क) महर्षि अरविंद (ख) महात्मा गाँधी
   (ग) स्वामी रामकृष्ण परमहंस, (घ) स्वामी विवेकानंद
8. स्वामी विवेकानंद का वास्तविक/बचपन का नाम क्या था?
   (क) नरेन्द्र, (ख) महेन्द्र
   (ग) देवेन्द्र, (घ) इनमें से कोई नहीं
9. कितने वर्ष की आयु में स्वामी विवेकानंद गेरुए वस्त्र धारण कर सम्पूर्ण भारत की
   पैदल यात्रा पर चल दिए थे?
   (क) 25 वर्ष, (ख) 30 वर्ष (ग) 21 वर्ष, (घ) 28 वर्ष

10. रामकृष्ण मिशन की स्थापना कब और किसके द्वारा की गई?
    (क) 1897, स्वामी विवेकानंद, (ख) 1893, महर्षि अरविंद
    (ग) 1892, महात्मा गाँधी, (घ) 1898, रामकृष्ण परमहंस
11. पवित्र गीता में दिया गया सिद्धांत : ''जो भी मुझ तक आता है, चाहे वह कैसा भी हो, मैं उस तक पहुँचता हूँ। लोग चाहे कोई भी रास्ता चुनें, आखिर में मुझ तक ही पहुँचते हैं।'' यह किसने अपने व्याख्यान में कहा है।
    (क) स्वामी श्रद्धानंद, (ख) स्वामी विवेकानंद
    (ग) अरविन्दो, (घ) इनमें से कोई नहीं।
12. ''जब तक आप खुद पर विश्वास नहीं करते तब तक आप भगवान पर विश्वास नहीं कर सकते हैं।'' उक्त कथन किसका है?
    (क) स्वामी श्रद्धानंद, (ख) स्वामी अरविन्द
    (ग) स्वामी विवेकानंद, (घ) इनमें से कोई नहीं।
13. 'शिकागो व्याख्यान' में स्वामी विवेकानंद ने किन बातों पर जोर दिया है?
    (क) सबका ईश्वर एक ही है, ना ही ईश्वर सवा है, ना ही डेढ़।
    (ख) उन्होंने लोगों को वीर, साहसी और दयालु बनने पर जोर दिया है।
    (ग) उन्होंने धर्मांतरण कां विरोध किया है।
    (घ) इनमें से सभी।
14. स्वामी विवेकानंद का जन्म कब हुआ था?
    (क) 12 जनवरी, 1863, (ख) 12 जनवरी, 1873
    (ग) 12 जनवरी, 1853, (घ) 12 जनवरी, 1883

उत्तरमाला

1. (ग), 2. (क), 3. (क), 4. (ख), 5. (ग), 6. (घ),
7. (घ), 8. (क), 9. (क), 10. (क), 11. (ख), 12. (ग),
13. (घ), 14. (क)

https://bharatdarshan.co.nz (शिकागो व्याख्यान-स्वामी विवेकानंद)

4

आँगन का पंछी

(पं. विद्यानिवास मिश्र)

जीवन परिचय :

पं. विद्यानिवास मिश्र का जन्म 28 जनवरी, 1926 ई. को उत्तरप्रदेश के गोरखपुर जनपद के पकड़डीहा गाँव में हुआ था। हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार, सफल सम्पादक, संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान और जाने-माने भाषाविद् थे। हिन्दी साहित्य को अपने ललित निबंधों और लोक जीवन की सुगंध से सुवासित करने वाले विद्यानिवास मिश्र ऐसे साहित्यकार थे, जिन्होंने आधुनिक विचारों को पारम्परिक सोच में खपाया था। साहित्य समीक्षकों के अनुसार-संस्कृत मर्मज्ञ मिश्र जी ने हिन्दी में सदैव आँचलिक बोलियों के शब्दों को महत्व दिया। विद्यानिवास मिश्र के अनुसार- ''हिन्दी में यदि आँचलिक बोलियों के शब्दों को प्रोत्साहन दिया जाये तो दुरुह राजभाषा से बचा जा सकता है, जो बेहद संस्कृतनिष्ठ है।''

1945 ई. में प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. करने के पश्चात् हिन्दी साहित्य सम्मेलन में राहुल सांकृत्यायन के निर्देशन में कोश कार्य किया। तदुपरान्त विंध्य प्रदेश और उत्तरप्रदेश के सूचना विभागों से सम्बद्ध रहे। वर्ष 1957 में विश्वविद्यालय सेवा से जुड़े डॉ. मिश्र ने गोरखपुर विश्वविद्यालय, सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय और आगरा विश्वविद्यालय में संस्कृत और भाषा-विज्ञान का अध्यापन किया। काशी विद्यापीठ एवं सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के कुलपति और नवभारत टाइम्स के प्रधान सम्पादक भी रहे।

व्यक्ति व्यंजक, निबंधकारों में विद्यानिवास मिश्र का महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय संस्कृति के प्रति उनकी आस्था एवं अद्‌भुत पाण्डित्य के साथ-साथ भावुकता उनके निबंधों में स्थान-स्थान पर झलकती है। एक ललित निबंधकार के रूप में भी मिश्र जी ने हिन्दी पाठकों पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है।

ललित निबंध परम्परा में मिश्र जी आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी और कुबेरनाथ राय के साथ मिलकर एक त्रयी रचते हैं।

प्रमुख रचनाएँ- मिश्र जी की प्रकाशित कृतियों की संख्या सत्तर से अधिक है, जिनमें व्यक्ति व्यंजक निबंध-संग्रह, आलोचनात्मक तथा विवेचनात्मक कृतियाँ, भाषा चिन्तन के क्षेत्र में शोध ग्रंथ और कविता-संकलन सम्मिलित हैं। डॉ. विद्यानिवास मिश्र आधुनिक ज्ञान-विज्ञान, समाज-संस्कृति, साहित्य कला की नवीनतम चेतना और तेजस्विता से मण्डित हैं।

संस्कृत भाषा के साथ हिन्दी और अंग्रेजी साहित्य के मर्मज्ञ डॉ. मिश्र अनेक संस्थाओं के सम्मानित सदस्य हैं।

प्रमुख निबंध

(1) छितवन की छांह (निबंध संग्रह), (2) कदम की फूली डाल
(3) तुम चंदन हम पानी, (4) मैंने सिल पहुँचाई
(5) आँगन का पंछी और बंजारा मन, (6) मेरे राम का मुकुट भीग रहा
(7) वसंत आ गया पर कोई उत्कण्ठा नहीं, (8) हल्दी-दूब
(9) कंटीले तारों के आर-पार, (10) कौन तू फुलवा बीनन हारी
(11) अग्निरथ (निबंध संग्रह), (12) लागो रंग हरो (निबंध संग्रह)
(13) थोड़ी सी जगह दें, (14) रहिमन पानी राखिये

कहानी संग्रह - भ्रमरानंद का पचड़ा

काव्य संग्रह - पानी की पुकार

आलोचनात्मक ग्रंथ -

(1) तुलसीदास भक्ति प्रबंध का नया उत्कर्ष, (2) आज के हिन्दी कवि अज्ञेय
(3) कबीर वचनामृत (4) रहीम रचनावली
(5) रसखान ग्रंथावली

अन्य ग्रंथ-

(1) हिन्दी शब्द सम्पदा, (2) पाणिनीय व्याकरण की विश्लेषण पद्धति
(3) रीति विज्ञान, (4) हिन्दी और हम
(5) हिन्दी साहित्य का पुनरावलोकन, (6) साहित्य के सरोकार
(7) व्यक्ति व्यंजना, (8) वाचिक कविता भोजपुरी
(9) वाचिक कविता अवधी, (10) लोक और लोक का स्वर
(11) चिड़िया रैन बसेरा, (12) परम्परा बंधन नहीं
(13) फागुन दुई रे दिना, (14) राधा माधव रंग रंगी
(15) भारतीय संस्कृति के आधार, (16) कितने मोरचे
(17) स्वरूप - विमर्श, (18) गाँधी का करुण रस
(19) महाभारत का काव्यार्थ, (20) भारतीय भाषा दर्शन की पीठिका
(21) सपने कहाँ गए

विशेषताएँ– मिश्र जी के ललित निबंधों में भावात्मकता के साथ-साथ लोक संस्कृति की छटा विद्यमान है। इनके निबंधों में प्रसादमयी भाषा-शैली, कथात्मक चित्रों की अधिकता और विवेचना की तथ्यपूर्ण गम्भीरता दिखाई देती है। अज्ञेय के अनुसार – ''विद्यानिवास जी ने संस्कृत साहित्य को मथकर उसका नवनीत चखा है और लोकवाणी की गौरव गंध से सदा स्फूर्ति भी पाते रहे हैं।'' ललित निबंध वह लिखते हैं तो लालित्य के किसी मोह से नहीं, इसलिए कि गहरी, तीखी, चुनौती भरी बात भी एक बेलाग और निर्दोष बल्कि कौतुकभरी सहजता से कह जाते हैं।

मिश्र जी के निबंधों को विचारात्मक, समीक्षात्मक, वर्णनात्मक एवं संस्करणात्मक वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ है, किन्तु उसमें उर्दू, अंग्रेजी एवं ग्रामीण जीवन के शब्द भी मिलते हैं। शैली की विविधता उनके निबंधों की प्रमुख विशेषता है। आलंकारिक शैली, तरंग शैली, व्यंग्यपूर्ण शैली, व्याख्यात्मक शैली, आलोचनात्मक शैली उनके निबंधों में है।

पुरस्कार तथा सम्मान

- पद्मश्री – 1988
- मूर्तिदेवी पुरस्कार – 1989
- विश्व भारती सम्मान – 1996
- साहित्य अकादमी का महत्तर सदस्यता सम्मान – 1996
- पद्मभूषण – 1999
- मंगला प्रसाद पारितोषिक – 2000
- हेडगेवार प्रज्ञा पुरस्कार
- के.के. बिड़ला फाउंडेशन के चौथी श्रेणी का सम्मान 'शंकर सम्मान'
- राजग (राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन) शासनकाल में उन्हें राज्यसभा का सदस्य मनोनीत किया गया।

निधन : 14 फरवरी, 2005 को एक दुर्घटना के कारण लगभग अस्सी वर्ष की उम्र में दिवंगत हुए।

महत्वपूर्ण तथ्य

विद्यानिवास मिश्र ललित निबंध के वैचारिक बिन्दुओं की पहचान के लिए तीन प्रमुख सूत्रों को उल्लिखित करते हैं– (1) अखण्ड विश्व दृष्टि, (2) मुक्त निबंध फक्कड़ भाव और (3) सामान्य में निगूढ़तम वैशिष्ट्य की तलाश। उनके अनुसार ''हमारी परम्परा की सबसे बड़ी क्षमता उसका स्वीकार भाव है।''

विद्यानिवास मिश्र अपने निबंधों में आज के दौर की विसंगतियों, राजनैतिक प्रलोभनों एवं आधुनिक वैज्ञानिक रूढ़ से जुड़ी असंगत एवं पाखण्डरत असमानताओं को पर्त-दर-पर्त उधेड़ते चले जाते हैं। उनके निबंध संग्रह 'आँगन का पंछी' और 'बंजारा मन' के सभी निबंध

नए दौर में आँख मूँदकर चलने की प्रवृत्ति पर प्रश्न उठाते हैं। संग्रह के पहले निबंध 'आँगन का पंछी' में चीन सरकार द्वारा गौरैया पक्षी को खेती का शत्रु मान उसके खिलाफ छेड़े गए अभियान से उद्वेलित होकर मिश्र जी 'आँगन का पंछी' के साथ-साथ आँगन का पौधा और आँगन की बेटी के साथ जुड़ाव महसूस करते हैं। गौरैयों के साथ लिया जाने वाला 'यह नादिरशाही बदला' उन्हें नागवार गुजरता है और वे सहज रूप से भारतीय कौटुम्बी भाव से जुड़ पाते हैं।

मिश्र जी लिखते हैं, पारिवारिक साहचर्य भाव ही हमारे साहित्य की सबसे बड़ी थाती है। यह कुटुम्ब भाव ही हमें चर-अचर, जड़-चेतन जगत के साथ कर्तव्यशील बनाता है। हम 'अगोरणीयान' और 'महतो महीयान' को एक-सी नजर से देखने के आदी हैं। इसी दृष्टि के कारण मिश्र जी भारत में फैली प्रान्तीयता के प्रति सद्भाव विकसित करने का प्रयास करते हैं। निबंधकार ने अनेक उत्प्रेरक तत्वों द्वारा प्राचीन एवं नवीन के बीच की खाई को पाटने हेतु अपने विचार संजोये हैं।

विद्यानिवास मिश्र रचित 'आँगन का पंछी' निबंध की समीक्षा

'आँगन का पंछी' इस निबंध में मिश्र जी ने प्रकृति की एक सरल, सहज, साधारण सी रचना पंछी गौरैया को लेकर गहन विचार व्यक्त किए हैं। इन विचारों में मिश्र जी की लोकोन्मुखी चेतना के अतिरिक्त देशीपन बिखेरने वाली माटी की सुगंध बिखरते हुए गहरे चिंतन से मिश्र जी को जोड़ जाती है।

लोक चेतना कहती है भारतीय जनविश्वास है कि जिस घर में गौरैया घोसला नहीं बनाती वह घर निर्वंश हो जाता है।

मिश्र जी इस संवेदना को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि गौरैया का ढीट होकर आँकन में चहकना, दाने चुभना, तिनके बिखेरना, घूम-फिरकर वापस उसी घर में रात गुजारता। दर असल निश्चल, निठलपट मासूम बच्चों की किलकारी शरारत और भयहीन उच्छृंखलना का प्रतीक है। घर, परिवार, वंश की वृद्धि चाहने वाले जीवन क्रम को बढ़ाने की चाहत रखने वाले लोग जिस तरह बच्चों की महत्वपूर्ण को समझते हैं उसी तरह 'आँगन का पंछी' गौरैया भी बालसुलभ जीवन का प्रतीक है।

मिश्र जी गौरैया की तुलना भारतीय परम्परा एवं चिंतन में तुलसी की महत्ता के साथ जोड़ते हैं। वह कहते हैं कि सुंदर, खुशबूदार, चटकीले फूल- गुलाब, जूही, चमेली आदि आँगनों में कम मिलते हैं, किन्तु भारतीय परम्परा में शायद ही कोई घर ऐसा हो जहाँ तुलसी की वेदी और तुलसी की मंजूरी न मिले। तुलसी की पौधों में घनी छाया की शीतलता है न गंध, न रूप का जादू फिर भी हर एक आँगन में तुलसी की उपस्थिति सम्भवत: यही प्रदर्शित करती है मानों दुख-दर्द बाँटने के लिए उसका प्रत्येक घर आँगन में होना आवश्यक है।

मिश्र जी कहते हैं कि हमारे यहाँ शास्त्रों में तुलसी पूजन का विधान है शायद इसीलिए बड़े विश्वास से हर घर आँगन में तुलसी उपस्थित है, किन्तु गौरैया तो एक जन विश्वास को लेकर हर घर आँगन में मिल जाती है। गौरैया रंग रूप में अतिसाधारण होती है कोयल आदि पंक्षियों की तरह उसके कण्ठ में कोई जादू नहीं है ऊँची उड़ान भरने का भी घमण्ड भी उसमें नहीं है, है तो बस आँगन में स्वच्छ फुदकने के योग्यता।

चिड़ियों का शिकार करने वाले भी गौरैया को मंगलकार्य करने वाली मानते हुए उसका शिकार करना पाप समझते हैं। गौरैया खेत और फसल की क्या शत्रु हो सकती है? यह विचार आने से पहले मिश्रजी उल्लेख करते हैं, उनके ससुराल के आँगन में धानों की बालियाँ ओरियों अर्थात् छप्पर के उस छोर से जहाँ से बारिश का पानी टपकता है वहाँ से नीचे लटकाई जाती है। यह व्यवस्था इसलिए की जाती है ताकि आँगन में सूख रहे धान को गौरैया का दल नुकसान ना पहुँचाए और गौरैया को उनके भाग्य का धान भी सुलभ होता रहे। बावजूद इसके ओरियों से लटकी धान की बालियों का धान खत्म नहीं होता। मिश्रजी बड़ा रोचक उत्तर देते हैं कि ऐसा सम्भवतः इसलिए होता है, क्योंकि गौरैया को भी इसके प्रति मोह है। आँगन में धान सूखता है, गौरैया का दल आते हैं, तितर-बितर किए जाते हैं पर फिर हाजिर हो जाते हैं।

निबंध के अगले अनुच्छेद में मिश्रजी उस सूत्र को प्रदर्शित करते हैं जो दरअसल इस निबंध को लिखने का कारण है। चीन ने गौरैया को खेती का शत्रु मानकर उनके विरुद्ध एक अभियान की अखबारी खबर मिश्रजी के इस वैचारिक उद्वेलना का कारण है। बंदूक दागदागकर झुण्ड के झुण्ड गौरैया को बेदंग होते तक खदेड़ने के तरुण चीनियों के सामूहिक अभिमान पर मिश्र जी टिप्पणी करते हैं कि यह गौरैया पर वीरता का अपवय है। मासूम मनुष्य के प्रति सहज विश्वास रखने वाले पंक्षी को निर्मूल करने की योजना सचमुच उन्माद से प्रेरित है। लेखक इस अभियान की अनावश्यकता पर विचार करते हुए उस सोच के प्रति भी प्रश्न चिह्न लगाते हैं। जहाँ कला की सेवा इसलिए अनावश्यक समझी जाती है; क्योंकि मनुष्य अभावग्रस्त है यह सारे तर्क कि चींटी और मछली को आटे की गोलियाँ न दी जाए, क्योंकि मनुष्य भूखों मर रहा है। कफन के लिए तरस रहा है गुलाब इसलिए पैदा न किया जाए क्योंकि गेहूँ की पैदावार जरूरी है। बुद्धिवादी सोच को प्रमाणित करने वाला यह तर्क कहीं न कहीं इस सृष्टि एवं प्रकृति पर मनुष्य मात्र की सम्प्रभुता के विचार से ग्रस्त है। इसलिए लेखक कहता हैं कि गौरैया यदि दाना चुभ भी लेती है तो उसके बदले वह एक बड़ा काम यह भी करती है कि अनाज में उगने वाले कीड़ों को साफ करती रहती है। लेखक का प्रश्न है कि यदि मान भी लिया जाए कि वह दाना लेती भर है देती कुछ नहीं तो भी क्या प्रकृति ने जिस तरह हर जीव की सत्ता और महत्व अलग-अलग स्थापित किया है ऐसी प्रकृति की व्यवस्था के साथ मनुष्य क्या केवल इसलिए खिलवाड़ करने को स्वतंत्र है क्योंकि वह इस सृष्टि का बुद्धिशाली प्राणी है, बुद्धि के बल पर एक-एक मनुष्य दूसरे देश के मनुष्य के साथ व्यवहार कर रहा है।

रचना से ज्यादा शक्ति विध्वंस पर खर्च हो रही है। इसी बुद्धि का परिणाम है कि पता नहीं प्यार प्राप्त करने की होड़ में एक-दूसरे की नाश की स्पर्धा चरम पर पहुँच चुकी है। बुद्धि ने सदैव भौतिकता की राह दिखाई है जब भी केवल बुद्धि हावी होती है। नैतिकता समरसता की भावना मानवता के प्रतिरूप के मूल्य ध्वस्त हो जाते हैं। कितनी छोटी सोच है कि कम पैदावार होने का आरोप हम निरीह पशु-पक्षियों, प्राणियों पर लगाते हैं। यह कहे कि नन्हीं सी जीव चिड़िया के खाने के कारण अन्न का अभाव है। तुच्छ प्राणी, चूँहे कुतर जाते हैं। या प्राणी नष्ट कर रहे हैं। यह भी कह सकते हैं कि धूप सुखा देती है तो इन सब पर नियंत्रण लगाया जाए। मिश्रजी कहते हैं कि चीन मेधा बुद्धि प्रज्ञा की दृष्टि से सम्पन्न है। बुद्ध की दया, मैत्री, करुणा का संदेश यह माना जाता है परस्पर सहयोग, प्रेम, उद्धार आदि

नैतिक मानव मूल्यों की दुहाई देने वाले देश चीन हैं। ऐसे चीन में यदि गौरैया का समूल नष्ट करने की योजना यद्यपि पैदा करती है कि यदि क्या वहाँ घर नहीं, घर है तो आँगन नहीं, है तो क्या बच्चे नहीं या मुक्त हंसी और प्रेम विश्वास क्या वहाँ शेष नहीं।

कबूतर की तरह गौरैया पत्र वाहक नहीं हो सकती, तोते की तरह रटकर दोहराना नहीं जानती, उसके पास न ही खूबसूरत पंख है, न पंखों के सुर्ख रंग है, न ही मुर्गे की तरह कैलगी है न सुबह-सुबह बांग देने की कला, गौरैया आकाश में विचरने वाली सुवह की साथी नहीं किन्तु उससे भी बड़ी बात यह है कि दोपहर की साथी है अर्थात् मनुष्य के सुख-दुख में साथ निभाकर आँगन का पंछी है। एक सोच गौरैया का समूल खत्म करना चाहती है तो बात आदिकाल से मनुष्य का साथ दे रहे निरीह प्राणियों की उपादेयता पर भी आ जाती है। प्रश्न चिह्न लगाकर उन्हें खत्म करते हुए बात घर के अंदर मौजूद प्राणियों तक भी पहुंच जाती है। मिश्रजी भारतीय चिंतन परम्परा एवं विश्वासों के आधार पर तर्क देते हैं हमारी भारतीय सोच एवं चिंतन की परम्परा में यह सिखाया है कि प्रकृति हमारे अधीन नहीं है हम प्रकृति के अधीन है।

एकरसता और समरसता में ही हमारा गौरव निहित है। गौरैया के प्रति हमारा लगाव भी एक स्वार्थ की पुष्टि करता है कि गौरैया के माध्यम से हम अपनी सम्पत्ति को विश्वास स्वच्छंद व्यवहार, आनंद की विरासत सौंपना चाहते हैं। मिश्रजी आगे वसुंधैव कुटुम्बकम को मानने वाले भारतीय चिंतन को व्याख्यायित करते हैं दरअसल पर्यावरण, परिवेश और प्रकृति के प्रति हमारे चिंतन में कृतज्ञता का भाव बहुत पुराना है।

इसी भाव, विचार का परिणाम है। प्रकृति के छोटे से छोटे, बड़े से बड़े अंश को अपने परिवार के समान जोड़ते हैं और इसी सोच से स्वयं को सम्पन्न पाते हैं। सूर्य, चंद्र और ग्रहों की अराधना नदी, पर्वतों के प्रति देवतुल्य विश्वास वट, पीपल आदि। आँवला, तुलसी जैसे पेड़-पौधों के पूजनीय भाव के पीछे पर्यावरण और प्रकृति के प्रति हमारा गहरा कर्तव्य बोध एवं उससे जुड़ी संवेदना एवं संचेलना अभिव्यक्त होती है।

मिश्रजी उल्लेख करते हैं कि छोटी बालिका मिनी जब आँगन की गौरैया को देखकर नाचती है। उन्हें पास बुलाती है, खुशी से ताली बजाती है, उन्हें डाँटती, धमकाती, मनाती है तो ऐसा लगता है कि सृष्टि की दो चरम आनंद प्रदान करने वाली अभिव्यक्तियाँ एक-दूसरे में समा गई हों।

मनुष्य होने के नाते दायित्व है मनुष्यता, बंधुता की, विश्वास की, ममता की रक्षा। मिश्रजी जिक्र करते हैं कि चिड़ियों से बसी सुंदर प्रकृति मनुष्य को चित्रकार बनाती है तो कभी उसे कथाकार भी बनाती है। तो क्या प्रकृति की उन तमाम उपादानों से जिनसे मनुष्य सृजक बनता रहा उनकी रक्षा करना उसका दायित्व निरीह है। अंत में मिश्रजी कहते हैं कि यह प्रकृति, यह सृष्टि, यह धरती हमें कितना कुछ देती है लोगों के लिए धरती पैरों के नीचे जरूर हो सकती है किन्तु भारतीय चिंतन उसकी व्याख्या इस तरह करता है- ''धरती की गोद में है-हम, धरती के असंख्य अन्य शिशुओं की तरह धरती की व्यापक सत्ता और उसकी विरासत को सहेजना, सरल नहीं।''

मिश्रजी कहते हैं कि धरती की विरासत सम्भालना आसान नहीं उस विरासत के असंख्य साझेदारों को मिलाए बिना तुम घर के कर्ता नहीं बन सकते। यह गौरैया, यह तुलसी, यह मेरी मिनी नहीं तुम्हारी भी मिनी है तो उस विरासत की असली मालिक यही है। बिना माँगे अपनी मिल्कियत लुटा देती है। उनके प्रति कृतज्ञ बनो। अपने आप तुम्हारी बढ़ती होगी।

इस पूरे निबंध में लालित्य एवं भाव प्रवणता की उपस्थिति है। ललित भाषा, ललित शब्दावली, ललित वाक्य विन्यास, भाव एवं अभिव्यक्ति में भी लालित्य है।

कोष के अनुसार- ''अनाचार्योपदिष्टंस्याल्ललितम्।''

अर्थात् जो आचार्यों या उनके शास्त्रों से उपदिष्ट न हो हर प्रकार के बंधन से मुक्त हो ऐसी बनावट वाली रचना ललित है।

जिस रचना के अंग विन्यास में सुकुमारता हो वह ललित है। 'आँगन का पंक्षी' गौरैया को लेकर गहन विचार प्रस्तुत कर देना उसे रोचक पाठ्य में परिवर्तित कर देना इस लालित्य का ही प्रभाव है। यहाँ विचार है पर अनरगल नहीं है। व्यर्थ नहीं है। व्यक्ति और आत्म की छटा से इस निबंध में गहरी सामाजिकता प्राप्त होती है।

मिश्रजी शब्द-शिल्पी रचनाकार थे। लोक में प्रचलित शब्दावली के अतिरिक्त संस्कृत के संस्कारों में ढली शब्दावली और इन दोनों के अद्भुत सम्मिश्रण से प्रभाव की, लालच की, दुतधारा भाषा में सरलता, सहजता, प्रभावोत्कता का गुण उत्कृष्ट है। आम पाठक पूरी रचना का आंनद लिए बगैर रचना से मुक्त होना नहीं चाहता। कथ्य, भाषा शैली का यह प्रभाव विशेष रेखांकित करने वाला है, जोकि इस निबंध में स्पष्ट रूप से दृष्टव्य है। आधुनिकता एवं परम्परा दोनों दृष्टि का समुचित प्रभाव देखा गया है।

मिश्रजी का मन 'आँगन का पंछी' की तरह स्वच्छंद हिरण की योग्यता रखते हुए आँगन से जुड़ी जमीन को कभी नहीं छोड़ता।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

'आँगन का पंछी' किस चिड़िया को कहा गया है?

(क) गौरैया, (ख) मोर (ग) पेंगुइन, (घ) कबूतर

'आँगन का पंछी' और 'बंजारा मन' के लेखक कौन हैं?

(क) हजारी प्रसाद द्विवेदी, (ख) विद्यानिवास मिश्र

(ग) विवेकी राय, (घ) कुबेरनाथ राय

'पानी की पुकार' काव्य-संग्रह के लेखक हैं।

(क) कुबेरनाथ राय, (ख) विवेकी राय

(ग) विद्यानिवास मिश्र, (घ) रघुवीर सहाय

4. 'तुम चंदन हम पानी' मिश्रजी द्वारा रचित किस विधा की रचना है?

(क) काव्य, (ख) कहानी

(ग) निबंध, (घ) आलोचना ग्रंथ

मिश्रजी को निम्नलिखित में से कौन-से सम्मान से सम्मानित किया गया है?

(क) पद्मश्री, (ख) पद्मभूषण

(ग) मूर्तिदेवी पुरस्कार, (घ) इनमें से सभी

विद्यानिवास मिश्रजी के निबंध संग्रह हैं-

(क) छितवन की छांह, (ख) अग्निरथ

(ग) लागो रंग हरो, (घ) इनमें से सभी

'हिन्दी शब्द सम्पदा' एवं 'हिन्दी और हम' के लेखक हैं?

(क) विद्यानिवास मिश्र, (ख) विवेकी राय

(ग) हजारी प्रसाद द्विवेदी, (घ) रामस्वरूप चतुर्वेदी

8. लेखन ने इस निबंध में किस बालसखा के सम्पादक का उल्लेख किया है?

(क) हजारी प्रसाद द्विवेदी, (ख) सोहनलाल द्विवेदी

(ग) महावीर प्रसाद द्विवेदी, (घ) इनमें से कोई नहीं

9. 'आँगन के पंछी' में गौरैया से बातें करने वाली पात्र का नाम है?

(क) मोना, (ख) मिनी (ग) मिली, (घ) तितली

10. मिश्रजी ने सोहनलाल द्विवेदी को किसकी फोटोग्राफ भेजी?

(क) मिनी, (ख) मिली (ग) मोना, (घ) तितली

इस निबंध में मिश्रजी ने किस पौधे का उल्लेख किया है?

(क) नीम, (ख) पीपल

(ग) तुलसी, (घ) इनमें से कोई नहीं।

'आँगन के पंछी' निबंध में किस देश की तुलना भारत से की गई है?

(क) भारत, (ख) चीन (ग) अफगानिस्तान, (घ) नेपाल

13. ''पंडित विद्यानिवास मिश्र के हृदय से निकले ललित निबंध तो वे हैं जिनमें कहीं गाँव के खलिहान में खुशी से झूमते अल्हड़ किसान के मुँह से निकले भोजपुरी लोकगीत का आह्लाद है, कहीं धान कूटती ग्रामीण युवतियों की चूड़ियों की खनक है, कहीं संयुक्त परिवार के नववधुओं की मंद-मंद हँसी।''

किसका कथन है?

(क) सोहनलाल द्विवेदी, (ख) प्रभाकर श्रोत्रिय
(ग) अज्ञेय, (घ) हजारी प्रसाद द्विवेदी

14. गौरैया को क्या कहा गया है?
(क) दोपहर की साथी, (ख) आँगन की पंछी
(ग) गगन की पंछी नहीं, (घ) सभी विकल्प सही है।

15. ललित निबंधकार त्रयी के नाम से जाने जाते हैं?
(क) हजारी प्रसाद द्विवेदी, (ख) कुबेरनाथ राय
(ग) विद्यानिवास मिश्र, (घ) यह तीनों

उत्तरमाला

1. (क),	2. (ख),	3. (ग),	4. (ग),	5. (घ),	6. (घ),
7. (क),	8. (ख),	9. (ख),	10. (क),	11. (ग),	12. (ख),
13. (ख),	14. (घ),	15. (घ)			

https://cdtripathi.blogspat.com (आँगन का पंछी–विद्यानिवास मिश्र)

5

आत्मकथा के अंश

(महात्मा गाँधी)

जीवन परिचय :

''बापू'' के नाम से लोकप्रिय हमारे देश के राष्ट्रपिता (फादर ऑफ नेशन) महात्मा गाँधी (वास्तविक नाम मोहनदास करमचंद गाँधी) का जन्म 2 अक्टूबर, 1869 ईसवी को गुजरात के पोरबंदर नामक स्थान पर हुआ। आपके पिता करमचंद गाँधी पहले पोरबंदर, बाद में राजकोट रियासत के दीवान रहे। माता पुतलीबाई धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थीं। आपके स्वभाव एवं चरित्र पर माता का व्यापक प्रभाव पड़ा। 13 वर्ष की आयु में आपका विवाह कस्तूरबा से हुआ।

गाँधीजी का विद्यार्थी जीवन एक औसत विद्यार्थी के रूप में रहा। आपके अध्यापक ने आपकी अंक तालिका पर टिप्पणी लिखी थी कि ''अंग्रेजी में अच्छा, गणित में ठीक ठाक, भूगोल में खराब, चाल चलन अच्छा और लिखावट अत्यंत खराब, मोहनदास एक औसत विद्यार्थी है।'' गाँधीजी ने 1887 में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर भावनगर के कॉलेज में पढ़ने के बाद 4 सितम्बर, 1888 को 19 वर्ष की आयु में बैरिस्टरी करने अर्थात् कानून की शिक्षा प्राप्त करने साउथ अफ्रीका गए तथा जून 1891 ईसवी में बैरिस्टर बनकर भारत लौटे। गाँधीजी के व्यक्तित्व का विकास एक बैरिस्टर, वकील के रूप में प्रारम्भ हुआ आपके व्यक्तित्व निर्माण में 1893 से 1914 तक के दक्षिण अफ्रीका के प्रवास का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

महात्मा गाँधी का भारत आगमन

दक्षिण अफ्रीकी में नस्लभेद के खिलाफ संघर्ष करने के पश्चात् गाँधीजी 9 जनवरी, 1915 को स्वदेश लौटे और देश की स्वतंत्रता में अपना योगदान देना शुरू किया। गाँधीजी की अफ्रीका यात्रा से लौटने के उपलक्ष्य में 9 जनवरी को 'प्रवासी भारतीय दिवस' मनाया जाता है। गाँधीजी ने गोपाल कृष्ण गोखले को अपना राजनीतिक गुरु माना था, जिनकी सलाह पर उन्होंने एक वर्ष तक भारत भ्रमण करके देश को समझा।

महात्मा गाँधी द्वारा किए गए आन्दोलन

गाँधीजी द्वारा देश में कई प्रमुख आन्दोलन किये गए जिन्हें देश की जनता का भरपूर समर्थन प्राप्त हुआ।

चम्पारण सत्याग्रह- स्वदेश लौटने के पश्चात् गाँधीजी का सत्याग्रह का पहला प्रयोग बिहार के चम्पारण में किया गया था।

राजकुमार शुक्ल नामक किसान के आग्रह पर गाँधीजी उत्तर भारत के नील उत्पाद किसानों की दशा देखने आये। इस सत्याग्रह के परिणामस्वरूप ब्रिटिशर्स को अपनी नी में बदलाव करना पड़ा था।

अहमदाबाद मिल-मजदूर आंदोलन- चम्पारण के पश्चात् गाँधीजी ने अहमदाबा में कॉटन मिल-मजदूरों के समर्थन में आंदोलन किया। अहमदाबाद में कॉटन मिल में श्रमि और फैक्ट्री मालिकों के बीच सैलरी को लेकर विवाद की मध्यस्थता की गई।

खेड़ा सत्याग्रह- वर्ष 1918 में गुजरात के खेड़ा जिले में अकाल के कारण किसा की फसल खराब हो गयी जिस पर किसानों द्वारा ब्रिटिश सरकार से लगान में रियायत लिए गाँधीजी ने समर्थन किया था।

रौलेट एक्ट का विरोध, 8 मार्च, 1919 खिलाफत आन्दोलन, 1919, दलित आंदोल 8 मई, 1833 के प्रति गाँधीजी ने भारतीयों की मदद की और इंसाफ दिलाने का भरसक प्रया करते रहे।

महात्मा गाँधी द्वारा किए गए प्रमुख राष्ट्रीय आन्दोलन- गाँधीजी द्वारा अप जीवनकाल में विभिन्न आन्दोलनों का नेतृत्व किया गया था। हालाँकि इन आन्दोलनों में गाँधी द्वारा आयोजित 3 प्रमुख आन्दोलनों का नाम प्रमुखता से आता है जो कि इस प्रकार है- असहयो आन्दोलन, 1920, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, 1930, भारत छोड़ो आन्दोलन, 1942, गाँधीजी द्वारा आयोजित ये तीनों आन्दोलन राष्ट्रीय स्तर के आन्दोलन थे जिनका सम्पूर्ण भारतवर्ष प विस्तृत प्रभाव रहा, इन आन्दोलनों में देश की जनता ने गाँधीजी का बढ़-चढ़कर समर्थन किय था।

महात्मा गाँधी का जीवन दर्शन- महात्मा गाँधी किसी भी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सत्य और अहिंसा को सबसे मजबूत हथियार मानते थे। गाँधीजी का मानना था कि न सिर्फ उद्देश्य पवित्र होना चाहिए अपितु उद्देश्य प्राप्त करने का साधन भी पवित्र होना आवश्यक है। लियो टॉलस्टॉय और हेनरी डेविड थोरों जैसे पश्चिमी विचारकों का गाँधीजी के जीवन पर गहरा प्रभाव था जिनसे गाँधीजी ने अहिंसा का सिद्धांत ग्रहण किया था।

सत्य- गाँधीजी सत्य को जीवन का सबसे बड़ा उद्देश्य मानते थे और इसी के आधार पर गाँधीजी का सम्पूर्ण जीवनदर्शन टिका हुआ है। सत्य के माध्यम से ही वास्तविक विजय पायी जा सकती है। इस कथन के आधार पर उन्होंने अपनी जीवन कथा का नाम भी 'सत्य के मेरे प्रयोग' (*My Experiments with truth*) रखा है।

अहिंसा- गाँधीजी किसी भी उद्देश्य को पाने के लिए अहिंसा को प्रमुख हथियार मानते थे। वह मानते थे कि अहिंसा के लिए आन्तरिक रूप से मजबूत होना आवश्यक है।

सादगी- सादगी में गाँधीजी का दृढ़ विश्वास था। उनका मानना था कि जब तक हम अपने जीवन में सादगी नहीं अपना लेते तब तक समाज में अमीर और गरीब की खाई को नहीं पाटा जा सकता है।

विश्वास- गाँधीजी द्वारा विभिन्न धर्म के मध्य एकता बनाये रखने के लिए विश्वास को प्रमुख तत्व माना गया था। वह मानते थे कि विभिन्न धर्म के लोगों के बीच साम्प्रदायिक सौहार्द्र बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि लोग एक-दूसरे के धर्मों के आवश्यक तत्वों को ग्रहण करें एवं आपसी समझ में वृद्धि को बढ़ावा दें।

ब्रह्मचर्य- गाँधीजी आध्यात्मिकता शुद्धि के लिए देशवासियों को सदैव ब्रह्मचर्य पालन का उपदेश देते थे।

गाँधीजी द्वारा संचालित समाचार पत्र- देश में स्वतंत्रता आन्दोलनों हेतु जनता को जागरूक करने के लिए गाँधीजी द्वारा विभिन्न समाचार पत्रों का संचालन किया जाता, जिसके माध्यम से गाँधीजी के विचारों और देश के लिए उनके संघर्ष की झलक मिलती है। जैसे- इंडियन ओपिनियन, यंग इंडिया, नवजीवन पत्र, हरिजन।

पुस्तकें- ग्राम स्वराज, दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह, हिन्द स्वराज और मेरे सपनों का भारत।

आत्मकथा- सत्य के साथ मेरे प्रयोग

महात्मा गाँधी की मृत्यु- 30 जनवरी, 1948 को संध्या की पूजा के लिए जाते वक्त गोली मारकर हत्या कर दी गयी। गाँधीजी की मृत्यु पर दुनियाभर के महापुरुषों ने शोक जताया था। दिल्ली में राजघाट पर महात्मा गाँधी जी की समाधि है जो आज भी करोड़ों लोग की प्रेरणा का स्रोत है।

अन्य तथ्य- दुनिया के सभी देशों में गाँधीजी को आदर और सम्मान के साथ देखा जाता है और दुनिया के अनेक देशों में उनकी प्रतिमा भी स्थापित की गयी है।

अमेरिका और दक्षिण अफ्रीका में नस्लभेद के खिलाफ लड़ने वाले मार्टिन लूथर, किंग जूनियर और नेल्सन मंडेला महात्मा गाँधी को अपना आदर्श मानते थे।

हेनरी डेविड थोरो का गाँधीजी के जीवन पर गहरा प्रभाव था।

सत्य के साथ मेरे प्रयोग
(महात्मा गाँधी की आत्मकथा का संक्षिप्त विवरण)

1. जन्म :

गाँधीजी के शब्दों में : कुटुंब में पहले पन्सारी का धंधा होता था, उसके बाद मेरा परिवार लगातार तीन पीढ़ियों से दीवानगिरी करता आया है। मेरे दादा उत्तमचंद गाँधी उर्फ ओता गाँधी टेकवाले आदमी रहे होंगे। दरबारी साजिशों के कारण उन्हें पोरबंदर छोड़ना पड़ा। वहाँ से जाकर उन्होंने जूनागढ़ राज्य में आश्रय लिया। उन्होंने नवाब साहब को सलाम बायें हाथ से किया। किसी ने इस स्पष्ट अविनय का कारण पूछा तो जवाब मिला, ''दाहिना हाथ तो पोरबंदर को दिया जा चुका है।''

ओता गाँधी के दो ब्याह हुए। पहली पत्नी से चार लड़के, दूसरी से दो। अपने बचपन को याद करते हुए यह बात मेरे ख्याल में भी नहीं आती कि ये भाई सौतेले थे। इनमें पाँचवें

कर्मचांद उर्फ कबा गाँधी और अंतिम तुलसीदास गाँधी थे। कबा गाँधी और पितृदेव थे। पोरबं
का प्रधानमंत्रित्व छोड़ने के बाद वह राजस्थानिक कोर्ट के सभासद रहे। फिर राजकोट में अ
कुछ समय बीकानेर में दीवान रहे। मृत्यु के समय राजकोट दरबार के पेंशनर थे।

कबा गाँधी की भी चार शादियाँ हुई थीं। अंतिम पुतलीबाई से एक लड़की और ती
लड़के। जिसमें सबसे छोटा मैं हूँ। पिता जी कुटुंब प्रेमी, सत्यप्रिय, शुर और उदार किन्तु क्रोध
थे। पिताजी को पैसे बटोरने की हवस कभी नहीं थी। इस कारण हम लोगों के लिए थोड़
सम्पत्ति छोड़ गए।

पिताजी की शिक्षा केवल अनुभव की थी जिसे आज हम गुजरात की पाँचवीं पोथ
को पढ़ाई कहते हैं, उतनी शिक्षा उन्हें मिली होगी। उनका व्यावहारिक ज्ञान इतने ऊँचे द
का था कि सूक्ष्म से सूक्ष्म प्रश्नों को सुलझाने या हजार आदमियों से काम लेने में उन्हें कठिना
न होती थी। धार्मिक शिक्षा नहीं के बराबर थी, पर मंदिरों में जाने और कथा आदि सुनने से
जो धर्मज्ञान असंख्य हिन्दुओं को सहज ही मिल जाता है वह उन्हें मिला था।

मेरे मन पर यह छाप है कि माताजी साध्वी स्त्री थीं। बड़ी भावुक, पूजा-पाठ के बिना
कभी भोजन न करतीं। हवेली (वैष्णव मंदिर) पर रोज जातीं। मैंने जबसे होश संभाला, याद
नहीं पड़ता कि उन्होंने चातुर्मास्य का व्रत कभी छोड़ा हो। एक बार की बात मुझे याद है कि
उन्होंने चांद्रायण व्रत आरम्भ किया था। उसमें बीमार पड़ गईं, पर व्रत न छोड़ा। एक चौमासे
में उन्होंने सूर्यनारायण के दर्शन करने के बाद ही भोजन करने का व्रत लिया था। मुझे ऐसे
दिन याद हैं कि जब सूर्य को हम देखते और चिल्लाते, "माँ-माँ, सूर्य निकला", माँ जल्दी-जल्दी आतीं, तब तक सूर्य भाग जाता। वह यह कहते हुए लौट जातीं, "कोई बात नहीं आज खाना बढ़ा नहीं है।" और जाकर अपने काम में लग जातीं।

इन माता-पिता के यहाँ संवत् 1925 की भादो वदी द्वादशी के दिन, अर्थात् 2 अक्टूबर, 1869 को पोरबंदर अथवा सुदामापुरी में मेरा जन्म हुआ। बचपन पोरबंदर में ही बीता। ऐसा याद है कि मैं किसी पाठशाला में बैठाया गया था। मुश्किल से कुछ पहाड़े सीखे होंगे।

2. बचपन : पोरबंदर से पिताजी राजस्थानिक कोर्ट के सदस्य होकर राजकोट गए। तब मेरी उम्र कोई सात बरस की रही होंगी। मैं राजकोट की ग्राम-पाठशाला में पढ़ने भेजा गया। गाँव की पाठशाला से कस्बे की पाठशाला में और वहाँ से हाईस्कूल तक पहुँचने में मेरा बारहवाँ वर्ष बीत गया। मैं बहुत ही झेंपू लड़का था। पाठशाला में मुझे बस काम से काम रहता था।

हाईस्कूल के पहले ही साल की, परीक्षाकाल की, एक घटना उल्लेखनीय है। शिक्षा-विभाग के इंस्पेक्टर जाइल्स स्कूल के मुआइने के लिए आए थे। उन्होंने पहले दरजे के लड़कों को पाँच शब्द लिखवाए। उनमें एक शब्द केटल (Kettle) था। उसके हिस्से मैंने गलत लिखे। मास्टर ने मुझे अपने बूट की नोक से चेताया; पर मैं क्यों चेतने लगा। मैं यह सोच भी न सका कि मास्टर मुझे सामने के लड़के की स्लेट देखकर हिस्से दुरुस्त कर लेने का इशारा कर रहे हैं। मैंने तो यह मान रखा था कि मास्टर वहाँ इसके लिए तैनात है कि हम एक-दूसरे की नकल न कर सकें। सब लड़कों के पाँचों शब्द सही निकले, अकेला मैं बेवकूफ बना। मेरी

'मूर्खता' मास्टर ने मुझे बाद को बतलाई, पर मेरे मन पर उसका कोई असर न हुआ। मुझे दूसरे लड़कों की नकल करना कभी न आया।

इतने पर भी मास्टर के प्रति मेरा आदर कभी घटा नहीं। बड़ों के दोष न देखने का गुण मुझमें स्वाभाविक था। इसी समय के प्रसंग मुझे याद रहे हैं। मुझे साधारणतः स्कूल किताबों के सिवा और कुछ पढ़ने का शौक नहीं था, इसलिए पाठ पढ़ता था, पर मन अलसाता था। इससे सबक अक्सर कच्चा रह जाता। उस दशा में और कोई चीज पढ़ने की कहाँ सूझती! पर पिताजी की खरीदी हुई एक किताब पर मेरी नज़र पड़ी। वह था श्रवण-पितृ-भक्ति नाटक। उसे पढ़ने की इच्छा हुई और मैं उसे बड़े चाव से पढ़ गया। मैंने श्रवण के अपने माता-पिता को कांवर में बिठाकर यात्रा के लिए ले जाने का चित्र भी देखा। दोनों चीजों का मुझ पर गहरा असर पड़ा। मुझे भी श्रवण के समान होना चाहिए, यह भाव मन में उठने लगा। इस बीच कोई नाटक कम्पनी आई। मुझे उसका नाटक देखने की इजाजत मिली। उसमें हरिश्चंद्र की कथा थी। यह नाटक देखने से मेरी तृप्ति ही न होती थी। उसे बार-बार देखने को जी चाहता; पर बार-बार जाने कौन देता? किन्तु मन में इस नाटक को सैकड़ों बार दोहराया होगा। "हरिश्चंद्र - जैसे सत्यवादी सब क्यों नहीं हो जाते?" यह धुन रहती। विपत्तियों को भोगना और सत्य का पालन करना ही वास्तविक सत्य है।

3. बाल-विवाह : तेरह वर्ष की उम्र में मेरा विवाह हो गया। आज मेरी नज़रों के सामने बाहर-तेरह बरस के बाल मौजूद हैं। तेरह बरस की उम्र में हुए अपने ब्याह के समर्थन में एक भी नैतिक दलील मुझे नहीं सूझती।

हम तीन भाई थे। उनमें सबसे जेठे ब्याहे जा चुके थे। मंझले मुझसे दो या तीन साल बड़े थे। उनका और मेरे चाचा के छोटे लड़के का, जिसकी उम्र मुझसे शायद एकाध साल अधिक रही होगी और हम तीनों का विवाह एक साथ करने का निश्चय बड़ों ने किया। इसमें हमारे भले का कोई ख्याल नहीं था। हम तीनों भाइयों ने तो सिर्फ तैयारियों से ही जाना कि हमारा ब्याह होने वाला है। उस समय अच्छे-अच्छे कपड़े पहनने, बाजे-गाजे, घोड़े पर चढ़ने, बढ़िया भोजन मिलने और एक नई लड़की विनोद के लिए पाने इत्यादि हौसलों के सिवा मन में और कोई बात रही हो, इसकी मुझे याद नहीं है।

4. पतिरूप में : जब मेरा विवाह हुआ उन दिनों, निबंधों के छोटे-छोटे परचे-पैसे-पैसे या पाई-पाई के, यह याद नहीं है- निकला करते थे। उनमें दम्पती- प्रेम, किफायतशारी, बालविवाह आदि विषयों की चर्चा रहती थी। उनमें से कोई-कोई निबंध मेरे हाथ पड़ जाता और मैं उसे पढ़ जाता था। मैंने पढ़ा कि एक पत्नीवृत का पालन करना पति का धर्म है और बात दिल में बैठ गई।

मैं अपनी पत्नी को आदर्श स्त्री बनाना चाहता था। मेरी यह भावना थी कि वह स्वच्छ हो जाए, स्वच्छ रहे, मैं जो सीखता हूँ वह सीखे, मैं जो पढ़ता हूँ वह पढ़े, और हम दोनों एक-दूसरे में ओतप्रेत रहें। कस्तूरबाई की भी यह भावना थी या नहीं, इसका मुझे पता नहीं। वह निरक्षर थी। स्वभाव से सीधी, स्वतंत्र, मेहनती और मेरे साथ तो मितभाषिणी थी। मैंने अपने बचपन में कभी उसकी यह इच्छा नहीं पाई कि मैं पढ़ता हूँ तो उसे भी पढ़ना चाहिए।

इससे मानता हूँ कि मेरी भावना एकपक्षीय थी। कठियावाड़ में घूँघट का निकम्मा और जंगली रिवाज उस समय था। आज भी बहुत कुछ बना हुआ है। इससे पढ़ाने के संयोग भी मेरे लिए प्रतिकूल थे।

5. हाईस्कूल में : ब्याह के समय मैं हाईस्कूल में पढ़ता था। उस समय हम तीनों भाई एक ही स्कूल में पढ़ते थे। विद्याभ्यास और विवाह, दोनों साथ-साथ हिन्दू संस्कार में ही चलते हैं। मेरी पढ़ाई जारी रही। हाईस्कूल में मैं मंदबुद्धि विद्यार्थी नहीं माना जाता था। शिक्षकों का प्रेम तो मैंने सदा प्राप्त किया। हर साल माता-पिता के पास विद्यार्थी की पढ़ाई के साथ-साथ चाल-चलन के बारे में भी प्रमाण पत्र भेजा जाता था।

संस्कृत मेरे लिए रेखागणित की अपेक्षा अधिक कठिन सिद्ध हुई। रेखागणित में कुछ रटना नहीं रहता, पर संस्कृत में तो मेरी दृष्टि से अधिक काम रटने का ही था। संस्कृत के अध्यापक बहुत सख्त थे। उन्हें विद्यार्थियों को बहुत सा पढ़ा देने का लोभ था। आज मेरी आत्मा कृष्णशंकर मास्टर की कृतज्ञ हैं; क्योंकि जितनी संस्कृत उस समय मैंने पढ़ी यदि उतनी भी न पढ़ी होती तो आज मैं संस्कृत शास्त्रों में जो रस ले रहा हूँ वह न ले पाता।

आज तो मैं यह मानता हूँ कि भारत के उच्च शिक्षण क्रम में अपनी भाषा के सिवा राष्ट्रभाषा हिन्दी, संस्कृत, फारसी, अरबी और अंग्रेजी को स्थान मिलना चाहिए। हिन्दी, गुजराती और संस्कृत की एक भाषा में गणना की जा सकती है। उसी प्रकार फारसी और अरबी को एक माना जा सकता है।

6. दुःखद प्रसंग : मित्र कहे जा सकने वाले ऐसे मेरे दो मित्र भिन्न-भिन्न समयों में थे। एक मित्रता तो दूर तक नहीं निभी, दूसरा साथ मेरे जीवन का दुःखद अध्याय है। उस मित्रता में मेरी सुधारक दृष्टि थी।

आगे चलकर मालूम हुआ कि मेरा अनुमान सही नहीं था। सुधार करने के लिए भी आदमी को गहरे पानी में नहीं उतरना चाहिए। हम जिसका सुधार करना चाहते हों उसके साथ मित्रता नहीं चल सकती। मित्रता में अद्वैत भावना होती है। ऐसी मित्रता दुनिया में बहुत कम देखने में आती है। मित्रता समान गुणों वालों की ही शोभती और निभती है। मित्रों का एक-दूसरे पर असर पड़े बिना नहीं रह सकता। इसलिए मित्रता में सुधार की गुंजाइश बहुत थोड़ी होती है। मेरा मत है कि अंतरंग मित्रता अनिष्टकारक है, क्योंकि मनुष्य दोष को बड़ी जल्दी अपनाता है। गुण-ग्रहण करने में प्रयास की आवश्यकता है। मेरा व्यक्तिगत मित्रता-सम्पादन का प्रयास निष्फल रहा।

7. पिताजी की मृत्यु और मेरी नालायकी : उस समय मेरा सोलहवाँ वर्ष था। भगंदर की बीमारी से पिताजी के एकदम खाट पकड़ लेने की बात कह चुका हूँ। उनकी सेवा में माताजी, घर का एक पुराना नौकर और मैं ये तीन जने अधिकतर रहते थे। मेरा काम नर्स का शुश्रूषा करने का था। उनका घाव धोना, उस पर मलहम लगाना, दवा पिलाना और दवा को घर पर तैयार करना, मेरा खास काम था। रोज रात को उनके पैर दबाना और अनुज्ञा मिलने या उन्हें नींद आ जाने पर मेरा सोने जाना यह मेरा नियम था। ये दिन हाईस्कूल के तो थे ही, अतः खाने-पीने के बाद बचा हुआ मेरा समय स्कूल में अथवा पिताजी की सेवा में ही लगता

था। उनकी आज्ञा मिलती और उनकी तबीयत ठीक दिखाई देती तो शाम को टहलने जाता था।

इसी साल पत्नी गर्भवती हुई। यह मेरे लिए दोहरी लज्जा की बात थी। पिताजी की बीमारी बढ़ती जा रही थी। वैद्यों ने अपने लेप आजमाए, हकीमों ने मरहम-पट्टी। अंग्रेज डॉक्टर ने नश्तर के सिवा दूसरा इलाज नहीं कहा। कुटुंब के मित्रवैद्य ने रोका। पिताजी ने अधिक जीने की आशा छोड़ दी थी। कमजोरी बढ़ती गई, कष्ट बढ़ता गया। पिताजी का स्नानादि के लिए बिछौने से उतरने का आग्रह देखकर मैं तो आश्चर्यचकित ही रह जाता और मन ही मन उनकी स्तुति किया करता।

अवसान की काल रात्रि निकट आ गई। उस समय मेरे चाचाजी राजकोट में थे, पिताजी का समाचार सुनकर आ गए थे। किसी को यह आशंका तो थी ही नहीं कि यही उनकी आखिरी रात होगी, यों तो डर हमेशा ही बना रहता था। रात के साढ़े दस या ग्यारह बजे होंगे। चाचाजी ने मुझसे कहा, ''तू जा, अब मैं बैठूंगा'' मेरे आने के पाँच-सात मिनट के बाद नौकर ने किवाड़ खटखटाये कहा, ''उठो, बाबूजी ज्यादा बीमार हैं।'' ज्यादा बीमार तो थे ही, यह मैं जानता था।

अब मेरे पछताने से क्या होना था? मैं बहुत शर्माया, बहुत दुःखी हुआ। सोचा कि मैं विषयांध न होता तो इस आखिरी घड़ी में वियोग मेरे नसीब में न आता और मैं पिताजी की अंतिम घड़ी में उनके पैर दबाता होता।

अपनी इस दोहरी शर्म के प्रकरण को पूरा करने के पहले यह भी कह देना चाहता हूँ कि पत्नी को जो बच्चा पैदा हुआ वह दुनिया में दो-चार दिन ही रहकर चल बसा। दूसरा परिणाम हो भी क्या सकता था? जो माता-पिता या बाल-दम्पती चेतना चाहे वे इस दृष्टांत से सबक लें।

8. धर्म की झाँकी : सोलह साल का होने तक पढ़ा, पर पाठशाला में कहीं भी धर्मशिक्षा न मिली। यहाँ धर्म का उदार अर्थ लेना चाहिए। धर्म अर्थात् आत्मबोध, आत्मज्ञान। जो मंदिर में न मिला वह कुटुंब की पुरानी नौकरानी दाई से मिला। बचपन में भूत-प्रेत से बचने के लिए रंभाबाई द्वारा बताया गया रामनाम का जप आज मेरे लिए अमोघ शक्ति बना है। मैं आज तुलसीदास की रामायण को भक्तिमार्ग का सर्वोत्तम ग्रंथ मानता हूँ।

राजकोट में मुझे सब सम्प्रदायों के प्रति समान भाव रखने की शिक्षा मिली। इसके अलावा पिताजी के पास जैन, मुसलमान और पारसी मित्रों के आने-जाने के कारण उनके धर्मों की जानकारी प्राप्त होती रही।

इस प्रकार मेरे मन में अन्य धर्मों के प्रति समभाव तो आया, पर इससे यह नहीं कहा जा सकता कि मुझमें ईश्वर के प्रति कुछ आस्था थी। पर एक बात ने मन में जड़ जमा ली-यह संसार नीति पर टिका हुआ है। नीतिमात्र का समावेश सत्य में है। नीति विषयक एक छप्पय ने भी दिल में घर कर लिया। अपकार का बदला अपकार नहीं; बल्कि उपकार ही हो सकता है, यह बात जीवन सूत्र बन गई। उसने मेरे मन पर राज करना आरंभ कर दिया। अपकारी का भला चाहना और करना, इसका अनुरागी बन गया। उसके अगणित प्रयोग किए।

9. विलायत की तैयारी : सन् 1887 में मैट्रिक्युलेशन परीक्षा पास की। राजकोट से अहमदाबाद का अकेले किया हुआ यह मेरा पहला सफर था। कॉलेज की पढ़ाई शामलदास कॉलेज, भावनगर से हुई। कुटुंब के पुराने मित्र और सलाहकार एक विद्वान व्यवहार कुशल ब्राह्मण मावजी दवे थे। उन्होंने केवलराम (मावजी दवे के लड़के का नाम) की पढ़ाई के बारे में बताया और सलाह दी कि मुझे भी विलायत बैरिस्टर की पढ़ाई के लिए भेज देना चाहिए।

सभी मान गए किन्तु माता को तसल्ली कैसे हो? उसने सब तरह से जाँच शुरू की। कोई कहता, युवक विलायत जाकर बिगड़ जाते हैं। कोई कहता मांस खाते हैं। कोई कहता वहाँ, शराब के बिना काम ही नहीं चलता। माता ने यह सब मुझे सुनाया। मैंने कहा, "पर तू मेरा विश्वास नहीं करती? मैं तुझसे विश्वासघात नहीं करूंगा। कसम खाकर कहता हूँ कि इन तीनों चीजों से बचूँगा। ऐसी जोखिम होती तो जोशीजी भला कैसे जाने को कहते?"

माता ने मांस-मदिरा और स्त्री संगत से दूर रहने की प्रतिज्ञा करवाकर जाने की अनुमति दे दी। बड़ों का आशीर्वाद लेकर बम्बई के लिए रवाना हुआ।

10. बिरादरी से बाहर : माता की अनुज्ञा और आशीर्वाद लेकर और कुछ महीनों का बच्चा स्त्री की गोद में छोड़कर मैं बड़ी उमंगों के साथ बम्बई पहुँचा। बम्बई में दिन काटना कठिन हो गया। मुझे विलायत के ही सपने आया करते। इसी बीच बिरादरी में खलबली मची। पंचायत बुलाई गई। मुझे पंचायत में हाजिर होने का हुक्म हुआ। सरपंच ने मुझसे कहा- "बिरादरी समझती है कि तुम्हारा विलायत जाने का विचार ठीक नहीं है। हमारे धर्म में समुद्र यात्रा की मनाही है। फिर, हम यह भी सुनते हैं कि विलायत में धर्म की रक्षा नहीं हो सकती। वहाँ साहबों के साथ खाना-पीना पड़ता है।"

मैंने उत्तर दिया, "मुझे तो ऐसा लगता है कि विलायत जाने में तनिक भी अधर्म नहीं है। मुझे तो वहाँ जाकर विद्याभ्यास ही करना है। फिर, जिन चीजों का आपको डर है उनसे दूर रहने की मैं अपनी माता के सामने प्रतिज्ञा कर चुका हूँ। अत: उनसे मैं दूर रह सकूँगा।"

"पर बिरादरी का हुक्म तुम न मानोगे?"

"मैं लाचार हूँ। मेरा ख्याल है कि इस मामले में बिरादरी को दखल नहीं देना चाहिए।" इस घटना के बाद मैं अधिक अधीर हो गया।

विलायत की यात्रा का सब सामान तैयार कराना था। एक-दूसरे अनुभवी मित्र थे, उन्होंने सामान तैयार कराया। मेरे ठहरने की मित्रों ने त्रयंबकराय मजूमदार (उपर्युक्त जूनागढ़ वाले वकील) के कमरे में व्यवस्था की थी। मैं अठारह साल का, दुनिया के अनुभवों से शून्य युवक था। मजूमदार ने मेरे मित्रों से मेरे बारे में बेफिक्र रहने को कहा। इस प्रकार मैंने 4 सितम्बर, 1888 को बम्बई बंदरगाह छोड़ दिया।

11. विलायत पहुँच ही गया : मेरे पास चार सिफारिशी पत्र थे। डॉक्टर प्राणजीवन मेहता, दलपतराम शुक्ल, प्रिंस रणजीत सिंह और दादाभाई नौरोजी के नाम। जहाज में किसी ने विक्टोरिया होटल में उतरने की सलाह दी थी। मैं तो अपने सफेद कपड़ों की शर्म से ही

दबा जा रहा था। होटल पहुँचने पर जब यह मालूम हुआ कि कल रविवार होने की वजह से सोमवार तक ग्रिंडले के यहाँ से सामान न आएगा तो मैं परेशान हो उठा।

सात-आठ बजे के लगभग डॉक्टर मेहता आए। मैंने अनजाने उनकी रेशमी रोंयेदार टोपी देखने को उठा ली उस पर उलटा हाथ फेर दिया। इससे टोपी के रोंये सीधे हो गए। उनके रोकने का इतना ही नतीजा हुआ कि फिर कभी वह न हो। यहीं से यूरोपीय रीति-रिवाज की मेरी शिक्षा का श्रीगणेश समझना चाहिए। डॉक्टर मेहता हँसते-हँसते बहुत सी बातें समझाते जाते थे। विलायत रच नहीं रहा था और देश को लौटा नहीं जा सकता। विलायत आया था तो तीन साल पूरे करने ही थे।

12. मेरी पंसद : मैंने अब घुमाई शुरू की। मुझे निरामिष अर्थात् अन्नाहारी होटल तलाश करना था। घर की मालकिन ने भी बतलाया था कि लंदन में ऐसे भोजन गृह हैं। मैं रोज दस-बारह मील का चक्कर लगाता। किसी साधारण भोजनालय में जाकर पेटभर रोटी खा लिया करता था; पर तृप्ति न होती थी। यों भटकते-भटकते मैं एक दिन फेरिंग्टन स्ट्रीट पहुँचा और 'वैजिटेरियन रेस्तरां' (अन्नाहारी होटल) का साइन बोर्ड पढ़ा। माता से की हुई प्रतिज्ञा अब मेरे लिए विशेष आनंददायक हो गई।

13. 'सभ्य' वेश में : मैंने 'सभ्यता' सीखने का अपने सामर्थ्य से बाहर का और छिछला रास्ता पकड़ा। विलायती होते हुए भी बम्बई काट के कपड़ों के उच्च अंग्रेज समाज में न फबने के खयाल से मैंने 'आर्मी' और 'नेवी' स्टोर में कपड़े बनवाए। टाई बांधने की कला सीखी। बाल बनाना सीखा। पर इतनी टीम-टाम ही बस न थी। अकेली सभ्य पोशाक से थोड़े ही सभ्य बना जा सकता है? सभ्यता के अन्य कई बाह्य लक्षण भी जान और सीख लिए थे। आगे फ्रेंच भाषा सीखने के साथ वायोलिन बजाना सीखा, भाषण कला सीखना चाहा। पिट का भाषण शुरू किया।

इन बेलसाहब ने मेरे कान में घण्टी (बेल) बजाई। मैं जागा। मुझे इंग्लैण्ड में जिन्दगी कहाँ बितानी है? लच्छेदार भाषण करना सीखकर क्या होगा? नाच-गाकर मैं सभ्य कैसे बनूँगा? बायोलिन तो अपने देश में भी सीखा जा सकता है। मैं तो विद्यार्थी हूँ। मुझे तो विद्या-धन जोड़ना चाहिए। सभ्य बनने की मेरी सनक कोई तीन महीने चली होगी। पोशाक की टीम-टाम बरसों चली। पर अब मैं विद्यार्थी बन गया।

14. फेरफार : सादगी के कारण मेरे जीवन में कोई नीरसता नहीं आई। इसके विपरीत फेरफार के कारण मेरी आंतरिक और बाहरी स्थिति में एकता हो गई; कौटुम्बिक स्थिति के साथ मेरे रहन-सहन का मेल हो गया; जीवन अधिक सत्यमय हो गया। आत्मिक आनंद की सीमा न रही।

15. खुराक के प्रयोग : जीवन में ज्यों-ज्यों मैं गहरा उतरता गया त्यों-त्यों मुझे बाह्य और आंतरिक आचार में परिवर्तन करने की आवश्यकता अनुभव होने लगी। जिस गति से रहन-सहन तथा खर्च में परिवर्तन किया उसी गति से अथवा और भी वेग से भोजन में फेरफार करना आरम्भ किया। आरोग्य की दृष्टि से उन्होंने मिर्च-मसाला छोड़ देने की सलाह दी है। व्यावहारिक अथवा आर्थिक दृष्टि से अन्नाहार को ही उन्होंने सस्ती से सस्ती खुराक बताया है।

आर्थिक दृष्टि तो मेरे सामने थी ही। उस समय एक पंथ ऐसा भी था जो चाय कहवे को हानिकारक मानता और कोको का समर्थन करता था। इस समय तक के मेरे प्रयोग आर्थिक तथा आरोग्य की दृष्टि से होते थे। विलायत में उन्होंने धार्मिक रूप नहीं पकड़ा था। धार्मिक दृष्टि से मेरे कठोर प्रयोग दक्षिण अफ्रीका में हुए जिनकी छानबीन आगे करनी होगी। पर यह कह सकता हूँ कि उनका बीजारोपण विलायत में ही हुआ था।

16. लज्जाशीलता- मेरी ढाल : मेरी लज्जाशीलता विलायत में अंत तक बनी रही। किसी के यहाँ मिलने जाता तो भी जहाँ पाँच-सात आदमियों की मण्डली जुटी कि मैं गूंगा बन जाता।

विलायत में सभी बोलने का अंतिम प्रयत्न मैंने विलायत छोड़ते समय किया था। विलायत छोड़ने के पूर्व मैंने अन्नाहारी मित्रों को हार्बन भोजनालय में न्यौता दिया था। मेरे भाषण करने का समय आया। मैं खड़ा हुआ। एडीसन के संकोची स्वभाव के बारे में मैं पढ़ चुका था।

कह सकता हूँ कि यह 'झेंपूपन' दक्षिण अफ्रीका पहुँचने पर ही गया। बिलकुल छूट गया यह आज भी नहीं कहा जा सकता। बोलते समय सोचना तो पड़ता ही है। नये समाज में बोलते सकुचाता हूँ। इस शर्मीली प्रकृति के कारण मेरी फजीहत तो हुई, पर मेरा नुकसान कुछ न हुआ; बल्कि आज तो देखता हूँ कि इससे कुछ फायदा हुआ। बोलने का जो संकोच मुझे पहले दुःखकर था वह अब सुखकर है।

अनुभव ने मुझे यह भी सिखाया कि सत्य के पुजारी के लिए मौन का सेवन उचित है। जाने-अनजाने भी मनुष्य अक्सर अतिशयोक्ति करता है अथवा जो कहने योग्य है उसे छिपाता है या भिन्न रूप में कहता है। ऐसे संकटों से बचने के लिए भी अल्पभाषा का होना आवश्यक है। थोड़ा बोलने वाला बिना विचारे न बोलेगा, अपने प्रत्येक शब्द को तौलेगा।

अतः आरंभ में यद्यपि अपनी लज्जाशीलता मुझे चुभती थी; पर आज उसका स्मरण मेरे लिए आनंददायक है। यह लज्जाशीलता मेरी ढाल थी। इससे मुझे परिपक्व होने का लाभ मिला अपनी सत्य की पूजा में मुझे उससे सहायता मिली।

17. असत्यरूपी विष : चालीस साल पहले विलायत जाने वालों की संख्या आज की अपेक्षा कम थी। उनमें यह रिवाज सा पड़ा हुआ था कि ब्याहे भी अपने का कुमार बताएँ। बालविवाह इसी जमाने में प्रचलित हुआ था। कह सकते हैं कि विलायत में बाल विवाह जैसी वस्तु नहीं है। अतः हिन्दी युवकों को वही अपने को ब्याहा बताते लाज लगती है। पाँच-छः वर्ष पहले से ही विवाहित और एक लड़के का बाप होते हुए भी अपने को कुंवारा बताते मैं नहीं हिचका। मैं बोल नहीं पाता तो कौन लड़की फालतू बैठी थी जो मेरे साथ बातें करें! मेरे साथ घूमने भी शायद ही कोई लड़की निकलती थी।

मैं तब तक लजाया हुआ ढाल कैसे उतारूँ, यही सोच रहा हूँ। वह नीचे खड़ी हँस रही है; मुझे हिम्मत बंधा रही है, कहती है- आऊँ, हाथ पकड़कर उतार लाऊँ? इतना बेशऊर साबित होना मैं कैसे मंजूर करता। इस प्रकार अपने भीतर असत्य का जो विष भर गया था उसे मैंने निकाल बाहर किया, इसके बाद तो और कहीं भी अपने विवाह इत्यादि की बातें करने में मुझे घबराहट न होती थी।

18. धार्मिक परिचय : विलायत में रहते करीब एक साल हुआ होगा इसी बीच दो थियासोफिस्ट सज्जनों से परिचय हुआ। उन्होंने मुझसे गीता के विषय में बातें कीं। वे एडविन अर्नाल्ड के गीता का अनुवाद पढ़ते थे, लेकिन मुझे उन्होंने गीता अपने साथ संस्कृत में पढ़ने को नियंत्रित किया। मैं शरमाया, क्योंकि मैंने तो गीता न संस्कृत में पढ़ी थी, न भाषा में ही। मुझे उनसे कहना पड़ा, "मैंने गीता पढ़ी नहीं है, पर आप लोगों के साथ में गीता पढ़ने को तैयार हूँ। मेरा संस्कृत का अभ्यास भी नहीं के बराबर ही है। मैं उसे इतना ही समझ सकूँगा कि अनुवाद में गलत अर्थ किया गया हो तो सुधार सके।" मूल ग्रंथ के भावों की रक्षा भी की गई है, फिर भी वह ग्रंथ उथला जैसा नहीं लगता। उस समय का यह वाचन मेरा गीता अभ्यास करना नहीं कहला सकता। मेरे नित्यवाचन का ग्रंथ तो वह कई बरस बाद हुआ।

विषयों का चिंतन करने वाले पुरुष को उनमें आसक्ति उपजती है, आसक्ति से कामना होती है और कामना से क्रोध उपजता है, क्रोध से मूढ़ता उत्पन्न होती है, मूढ़ता से स्मृति भ्रांत हो जाती है, स्मृति भ्रांत होने से ज्ञान का नाश हो जाता है और जिसका ज्ञान नष्ट हो गया, वह मृतक तुल्य है। मैं धर्म के इस परिचय से आगे न बढ़ सका। अपनी परीक्षा की पुस्तकों के सिवा और कुछ पढ़ने की फुर्सत न निकाल सका। पर मेरे मन में गाँठ बंधी कि मुझे धार्मिक पुस्तकें पढ़नी हैं और सब मुख्य धर्मों का उचित परिचय प्राप्त कर लेना है।

19. निर्बल के बल राम : धर्मशास्त्र की तथा दुनिया के धर्मों की थोड़ी जानकारी तो हुई पर उतना ज्ञान मनुष्य के बचाव के लिए काफी नहीं साबित होता। आपत्तिकाल में मनुष्य को जो वस्तु बचाती है उसका उस समय उसे न भान होता है, न ज्ञान। नास्तिक बच जाने पर कहता है कि मैं संयोगवश बच गया। आस्तिक ऐसे अवसर पर कहेगा कि मुझे ईश्वर ने बचाया। जिसे अपने संयम के बल का अभिमान रहता है उसके संयम को मिट्टी में मिलते किसने नहीं देखा है? शास्त्र ज्ञान तो ऐसे अवसर पर खोखला सिद्ध होता है।

इस बौद्धिक धर्मज्ञान के मिथ्यात्व का अनुभव मुझे विलायत में हुआ। पहले जो ऐसे भय में से मैं बचा, उसका विश्लेषण करना सम्भव नहीं। मेरी उम्र उस समय बहुत कच्ची थी; पर अब तो मैं बीस साल का था। गृहस्थाश्रम का काफी अनुभव हो चुका था।

धर्म क्या है, ईश्वर क्या है, वह हममें किस तरह काम करता है, यह सब मैं उस समय नहीं जानता था। साधारण रूप में मैंने उस समय यही समझा कि ईश्वर ने मुझे बचा लिया; पर ऐसे अनुभव मुझे विविध क्षेत्रों में हुए हैं। स्तुति, उपासना, प्रार्थना ये वहम नहीं है, बल्कि हमारा खाना-पीना, चलना-बैठना आदि जितना सत्य है उससे भी ये चीजें अधिक सत्य हैं।

यदि हमारा हृदय निर्मल हो जाए, हृतंत्री के तारों को हम सुसंगठित रखें तो उससे निकलने वाला सुर गगनगामी होता है। प्रसाद की प्राप्ति के लिए हममें पूरी-पूरी नम्रता होनी चाहिए।

20. महाप्रदर्शन : सन् 1890 में पेरिस में एक बड़ी नुमाइश हुई थी। उसकी तैयारियों की खबरें मैं पढ़ता रहता था। पेरिस देखने की तो तीव्र इच्छा थी। सोचा, चलो, प्रदर्शनी देखने जाने से एक पंथ दो काज होगा। प्रदर्शनी में एफिल टावर देखने का बड़ा आकर्षण था। पेरिस

की उस प्रदर्शनी की गाइड और नक्शा साथ ले रखा था। उनके सहारे रास्ते खोजकर खास-खास चीजें चीजें देख लीं।

एफिल टॉवर में कोई सौन्दर्य न था। प्रदर्शनी की उससे कोई शोभा बढ़ी हो यह नहीं कह सकते। एक नई चीज, एक बड़ी चीज होने के खयाल से हजारों आदमी उसे देखने को चढ़े। यही उसकी उपयोगिता मानना चाहे तो मान सकते हैं।

21. बैरिस्टर तो बने लेकिन आगे? : जिस काम के बैरिस्टर बनने के लिए मैं विलायत गया था उसका मैंने क्या किया, इसकी चर्चा मैंने अब तक छोड़ रखी थी। अब इस बारे में कुछ लिखने का अवसर आ गया है। कानून की पढ़ाई आसान थी। बैरिस्टरों को मजाक में 'डिनर (दावत के) बैरिस्टर' ही कहा जाता था। इंग्लैण्ड के कानून की पढ़ाई में नौ महीने काफी मेहनत करके पूरी कर सका। कानून की किताबों में इतनी ही रुचि से हिन्दुस्तान आने पर मैंने मेइन का 'हिन्दू लॉ' पढ़ा। पर हिन्दुस्तान के कानून की चर्चा यहाँ करनी नहीं है। पर मेरी निराशा और भय का अंत न था। मैंने देखा कि कानून तो मैंने जरूर पढ़ लिया, पर ऐसी एक भी बात नहीं सीखी जिससे वकालत करनी आए।

22. मेरी परेशानी : कानून पढ़ा, लेकिन वकालत करना न सीखा। कानून में मैंने कई धर्म-सिद्धांत पढ़े; वे मुझे रुचे। लेकिन पेशे में उनका अमल कैसे किया जा सकेगा, यह समझ में न आया। ''अपना जो कुछ हो उसका इस प्रकार उपयोग करो जिससे दूसरे की मिलकियत को नुकसान न पहुँचे-'' यह तो धर्म वचन है; पर वकालत का पेशा करते हुए मुवक्किल के मामले में उसका किस तरह उपयोग हो सकता है, यह बात अक्ल में न आई। जिन मुकदमों में इस सिद्धांत का उपयोग हुआ था, उन्हें पढ़ गया था, पर उनमें इन सिद्धांतों को काम में लाने का उपाय मुझे न मिला।

इसके सिवा हिन्दुस्तान के कानूनों का तो मेरे पढ़े कानूनों में नाम तक न था। हिन्दूशास्त्र, इस्लामी कानून कैसे होते हैं यह तक न जाना। अर्जी दावा बनाना न सीखा। मुझे तो इसमें भी गहरी शंका होने लगी कि एक वकील की हैसियत से रोजी कमाने की शक्ति भी मुझमें आएगी या नहीं। यों निराशा में तनिक सी आशा का आश्वासन लेकर कांपते पैरों आसाम स्टीमर से बम्बई बंदर में उतरा। बंदर में समुद्र उस समय क्षुब्ध था, इससे लांच पर किनारे आना पड़ा।

23 पूर्णाहूति : सन् 1921 में महासभाओं के नेताओं के साथ इतना अधिक घुल-मिल गया हूँ कि एक भी प्रसंग का वर्णन नेताओं के सम्बन्ध की चर्चा किए बिना मैं यथार्थ रूप में नहीं कर सकता। श्रद्धांनदजी, देशबंधु, लालाजी और हकीम साहब आज हमारे बीच नहीं हैं। महासभा के परिवर्तन के बाद का इतिहास अभी तैयार हो रहा है। मेरे मुख्य प्रयोग महासभा के द्वारा हुए हैं।

सत्य को मैंने जैसा देखा है, जिस मार्ग से देखा है, उसे बताने का मैंने सतत प्रयत्न किया है, क्योंकि मैंने यह आशा रखी है कि उससे पाठकों के मन में सत्य और अहिंसा के विषय में अधिक आस्था उत्पन्न होगी। सत्यमय होने के लिए अहिंसा ही एकमात्र मार्ग है। आत्मशुद्धि के बिना जीव-मात्र के साथ एकता नहीं साध सकती। आत्मशुद्धि के बिना अहिंसा

धर्म का पालन सर्वथा असाध्य है। अत: जीवन-पथ के सब क्षेत्रों में शुद्धि की आवश्यकता है। यह शुद्धि साध्य है, क्योंकि व्यष्टि और समष्टि के बीच ऐसा निकट सम्बन्ध है कि एक की शुद्धि अनेक की शुद्धि के बराबर हो जाती है।

हमें मन, वचन और काया से निर्विकार होना चाहिए। हिन्दुस्तान में आने के बाद भी मैंने अपने अंदर से छिपे विकारों को देखा है शरमाया हूँ पर हिम्मत नहीं हारी है। सत्य के प्रयोग करने में मैंने रस लूटा है। आज भी लूट रहा हूँ। अहिंसा नम्रता की पराकाष्ठा है और इस नम्रता के बिना मुक्ति किसी काल में भी नहीं है, यह अनुभव-सिद्ध बात है। ऐसी नम्रता की प्रार्थना करते हुए, उसमें जगत की सहायता की याचना करते हुए, इस समय तो इन प्रकरणों को समाप्त करता हूँ।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 'सत्य के प्रयोग' के अंतिम प्रकरण में किन-किन देशभक्तों का जिक्र किया है?

(क) श्रद्धानंदजी, (ख) देशबंधु,
(ग) लालाजी, (घ) इनमें से सभी

2. 'सत्य के प्रयोग' के अंतिम प्रकरण हैं?

(क) नागपुर में, (ख) पूर्णाहुति,
(ग) असहयोग का प्रवाह (घ) दु:खद प्रसंग

3. गाँधी जी ने गुजरात के किस शहर में घूंघट का निकम्मा और जंगली रिवाज का जिक्र किया है?

(क) पोरबंदर, (ख) भावनगर
(ग) कठियावाड़ (घ) इनमें से कोई नहीं।

4. 'हाईस्कूल' प्रकरण में गाँधी जी को रेखागणित की अपेक्षा कौन-सी भाषा कठिन लगती थी?

(क) फारसी, (ख) गुजराती,
(ग) हिन्दी, (घ) संस्कृत

5. 'विलायत की तैयारी' प्रकरण में मावजी दवे गाँधी जी की विलायत जाने की सलाह देते हुए किसका उदाहरण देते हैं?

(क) केवलराम, (ख) जोशी जी,
(ग) लेलीसाहब (घ) इनमें से कोई नहीं

6. गाँधी जी के पास चार सिफारिशी पत्र में कौन शामिल नहीं थे?

(क) दादाभाई नौरोजी, (ख) प्रिंस रणजीत सिंह,
(ग) लाला जी, (घ) डॉ. प्राणजीवन मेहता

7. 'धार्मिक परिचय' प्रकरण के अंतर्गत एडविन आर्नलड द्वारा अनुदित किस धार्मि पुस्तक का उल्लेख किया है?
(क) रामायण (ख) बुद्ध चरित, (ग) गीता सार (घ) भगवद्गीत

8. गाँधीजी ने विलायत में रहते हुए भगवद्गीता के साथ-साथ किस धार्मिक पुस्त का अध्ययन किया था?
(क) बुद्धचरित्र (लाइट ऑफ एशिया) (ख) त्रिपिटक साहित्य
(ग) रामचरितमानस, (घ) इनमें से कोई नहीं।

9. 'महाप्रदर्शनी' किस शहर में और कब का उल्लेख गाँधीजी ने अपने आत्मकथा के अंश में किया है?
(क) 1890, पेरिस (ख) 1890, लंदन
(ग) 1890, अमेरिका (घ) कोई नहीं।

10. गाँधी जी ने 'रोमनलों' को किस भाषा में पढ़ा था।
(क) लैटिन, (ख) फारसी (ग) फ्रेंच (घ) अंग्रेजी

11. गाँधी जी ने वकालत की परीक्षा पास कर बैरिस्टर की उपाधि कब प्राप्त की?
(क) 1891 (ख) 1892 (ग) 1893 (घ) 1894

12. गाँधीजी ने हिन्दुस्तान में वकालत के मामलों में किसका नाम सुन रखा था?
(क) दादाभाई, (ख) फिरोजशाह मेहता
(ग) मजूमदार जी, (घ) कोई नहीं

13. गाँधीजी को 'राष्ट्रपिता' की उपाधि किसके द्वारा दी गयी थी-
(क) दादाभाई नौरोजी (ख) नेल्सन मंडेला
(ग) गोपालकृष्ण गोखले (घ) सुभाषचंद बोस

14. गाँधीजी को सर्वप्रथम 'महात्मा' किसके द्वारा कहा गया था-
(क) बंकिमचंद्र (ख) गोपालकृष्ण गोखले
(ग) रविन्द्रनाथ टैगोर (घ) इनमें से कोई नहीं

15. गाँधी जी के जन्मदिवस के अवसर पर पूरी दुनिया में 2 अक्टूबर को कौन-सा दिवस मनाया जाता है?
(क) अहिंसा दिवस (ख) गणतंत्र दिवस
(ग) एकता दिवस (घ) संविधान दिवस

16. गाँधीजी को 'अफ्रीका यात्रा' से लौटने के उपलक्ष्य में किस तिथि को 'प्रवासी भारतीय दिवस' मनाया जाता है?
(क) 15 जनवरी (ख) 9 जनवरी
(ग) 10 जनवरी (घ) 30 जनवरी

17. गाँधीजी के राजनीतिक गुरू का नाम था-
(क) गोपालकृष्ण गोखले (ख) लाला लाजपत राय
(ग) रविन्द्रनाथ टैगोर (घ) इनमें से कोई नहीं।

18. गाँधी जी द्वारा 12 मार्च, 1930 को अहमदाबाद के साबरमती आश्रम से शुरूआत किए गए नमक सत्याग्रह आन्दोलन को किस नाम से जाना जाता है?
(क) सविनय अवज्ञा (ख) दांडी यात्रा
(ग) खिलाफत सत्याग्रह (घ) असहसयोग आन्दोलन

19. गाँधी जी द्वारा सुंचालित समाचार पत्र थे-
(क) नवजीवन (ख) हरिजन
(ग) यंग इंडिया (घ) इनमें से सभी

20. गाँधीजी द्वारा लिखित आत्मकथा है-
(क) सत्य के साथ मेरे प्रयोग (ख) मेरी आत्मकथा
(ग) जीवन प्रवाह (घ) जीवनचक्र

21. पिता जी के द्वारा क्रय की गई पुस्तक पर गाँधी जी की दृष्टि बचपन में पड़ी थी-
(क) रामायण (ख) श्रवण पितृ भक्ति नाटक
(ग) गीता (घ) श्रीमद्भागवत् पुराण

22. गाँधी जी ने विवाह को लेकर किस प्रकार की निजी हानि होने की चर्चा की है-
(क) एक साल व्यर्थ हो गया (ख) पढ़ाई में मन नहीं लगा
(ग) पढ़ाई छूट गई (घ) पिताजी की सेवा नहीं कर पाया

23. किस नाटक को देखकर गाँधीजी ने बचपन में ही सत्य-पालन करने का निश्चय किया था-
(क) भक्त प्रहलाद (ख) अमर पुत्र ध्रुव
(ग) हरिश्चंद्र (घ) श्रवण पितृ भक्ति नाटक

24. गाँधी जी के मतानुसार किस गुण के बिना मुक्ति नहीं मिलती है-
(क) नम्रता के बिना (ख) मंत्र जाप के बिना
(ग) सत्य के बिना (घ) आध्यात्म के बिना।

25. गाँधी जी को किस भाषा में सीखने में अधिक रस आया-

(क) अंग्रेजी (ख) हिन्दी

(ग) गुजराती (घ) संस्कृत

26. गाँधी जी ने अपनी आत्मकथा में महाप्रदर्शनी में किस शहर का उल्लेख किया है

(क) लंदन (ख) ग्रीक

(ग) पेरिस (घ) इनमें से कोई नहीं।

27. गाँधी जी का विवाह कितने वर्ष की आयु में कर दिया गया था?

(क) 16 वर्ष (ख) 14 वर्ष

(ग) 13 वर्ष (घ) 15 वर्ष

उत्तरमाला

1. (घ),	2. (ख),	3. (ग),	4. (घ),	5. (क),	6. (ग),
7. (घ),	8. (क),	9. (क),	10. (क),	11. (क),	12. (ख),
13. (घ),	14. (ग),	15. (क),	16. (ख),	17. (क),	18. (ख),
19. (घ),	20. (क)	21. (ख),	22. (क),	23. (ग),	24. (ग),
25. (घ),	26. (ग),	27. (ग)			

(https://www.mkgandhi.org)

6

विश्व के प्रमुख धर्म

• विश्व के प्रमुख धर्म के अन्तर्गत ईसाई, मुसलमान, हिन्दू, सिक्ख, जैन, बौद्ध एवं यहूदी धर्म आदि धर्म आते हैं। विश्व में प्रमुख धर्म संगठित प्रणालियाँ है जो उचित रूप से संरचित है और अच्छी तरह से संहिता- बद्ध धर्मशास्त्रीय मान्यताएँ हैं।

धर्म का मूल अर्थ बहुत व्यापक, सार्वभौमिक और सर्व-कालिक है। भौगोलिक परिस्थिति या काल बदलने से धर्म नहीं बदलता। इस गहरे दृष्टिकोण से धर्म समस्त विश्व के कल्याण का मार्ग हैं। लेकिन, आम जीवन में धर्म का उल्लेख अलग-अलग उपासना पद्धतियों या जीवन सिद्धांतों के लिए किया जाता है। दरअसल, इन्हें धर्म नहीं बल्कि सम्प्रदाय या उपासना पद्धति कहना ज्यादा सही है।

हिन्दू धर्मः

हिन्दू धर्म सृष्टि का आदि धर्म है। जिस प्रकार वेद, अपौरूषेय है, उसी प्रकार हिन्दू धर्म भी अपौरूषेय है। हिन्दू धर्म की प्राणवत्ता, अजर अमरता का रहस्य है - उसकी उदार प्रकृति और समन्वय प्रवृत्ति। समन्वयात्मक प्रवृत्ति का परिचय विदेशी आक्रमण तथा उसके प्रभावों को आत्मसात करने में मिलता है। यूनानी, शक, हूण आदि सबका हिन्दू धर्म में समन्वय हो गया। इसमें कुछ परम्पराएँ तथा सभ्यताएँ सभी हिन्दू धर्म में समा गई।

हिन्दू धर्म की मान्यता है कि नैतिकता एक आत्मगत गुण है, जिसे समाज में रहकर ही अर्जित किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत चरित्र-शिक्षा, लोकतांत्रिक चेतना की शिक्षा, राष्ट्रीय अखण्डता की शिक्षा, आध्यात्मिक शिक्षा तथा समस्त प्राचीन, आधुनिक और समसामयिक मूल्यों का समावेश हो जाता है। कहने का अर्थ यह है कि नैतिक शिक्षा वैयक्तिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक, मानसिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय श्रेयस्कर मूल्यों का समुच्चय हैं। यही कारण कि अनेक पश्चिमी चिंतक भारतीय प्रतिमानों को समझने में रूचि लेने लगे हैं।

हिन्दू धर्म के प्रमुख सिद्धांतः हिन्दूधर्म के प्रमुख सिद्धांत निम्नलिखित है - (1) पुरुषार्थ (2) आश्रम व्यवस्था, (3) ऋण व्यवस्था।

1. पुरुषार्थ : पुरुषार्थ का शाब्दिक अर्थ है- 'पुरुष द्वारा प्राप्त करने योग्य' अर्थात् मानव जीवन के उद्देश्य एवं लक्ष्य। आजकल की शब्दावली में इसे जीवन मूल्य कहा जा सकता है। ये पुरुषार्थ चार हैं : धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।

धर्म का अर्थ – जीवन के नियामक तत्व, जो जीवन को न्यायपूर्ण बिताने को दे। यह नैतिक, प्रतिमानों से जुड़ा, पुरुषार्थ है।

अर्थ का तात्पर्य – जीवन का भौतिक साधन। यह मनुष्य की आजीविका से ... पुरुषार्थ है।

काम का अर्थ – जीवन की वैध कामनाएँ। यह मनुष्य के परिवार से जुड़ा ... है। काम अर्थात् आनंद की प्राप्ति का मुख्य आशय संयम से जीवन व्यतीत करना है।

मोक्ष से अभिप्राय – जीवन में आनंद प्राप्त करने के बाद सभी प्रकार के बं... मुक्ति अर्थात् दूसरों के दुःख दूर करने के लिए जीवन अर्पित करना।

2. आश्रम व्यवस्था : भारत के ऋषियों ने सम्पूर्ण जीवन को चार आश्रमों में वि... किया है –

(i) ब्रह्मचर्य आश्रम – मनुष्य जीवन का प्रारंभ ब्रह्मचर्यावस्था से होता है। इस ... मे मनुष्य शिक्षा अर्जन करता है।

(ii) गृहस्थाश्रम – विवाह करके संतानोत्पत्ति करना तथा परिवार की सुचारू ... करना, यह इसकी व्यवस्था है।

(iii) वानप्रस्थाश्रम – प्रकृति के परिवेश से अंतरंग सम्बंध जोड़कर विश्व... परमात्मा का स्वरूप मानकर मानव-सेवा करना इसका मुख्य लक्ष्य है।

(iv) संन्यास आश्रम– इस आश्रम में व्यक्ति के लिए अर्थ अनुपादेय हो जाता है ... काम (कामना) का दीपक बुझ जाता है। ताकि वह ब्रत में विलीन होने का अभ्यस्त हो ... आनंदमयी मुस्कान के साथ संसार से बिदा ले सके।

3. ऋण व्यवस्था : ऋण व्यवस्था अर्थात् दायित्व पूर्ति की व्यवस्था हिन्दू ... प्रक्रिया की एक विशेषता है। प्रमुख ऋण तीन हैं– पितृ ऋण, ऋषि ऋण, एवं देव ऋण। ... ऋण व्यवस्था वर्णाश्रम व्यवस्था के कार्यान्वयन के रूप में की गई है।

पितृ ऋण– पितृ ऋण का सम्बंध गृहस्थाश्रम से है। इस ऋण द्वारा वंश परम्परा ... अक्षुण्ण रखने की भावना प्रमुख है। पिता पर श्रद्धा करना, अनुशासन में रहना, वृद्ध मा... पिता की सेवा करना, इसका प्रमुख ध्येय है।

ऋषि ऋण– इस ऋण का आशय है– ज्ञान का अर्जन करना। मनुष्य ब्रह्मचर्य का पा... करते हुए ब्रह्मचर्याश्रम में प्रवेश कर ऋषि ऋण से उऋण होता है।

देव ऋण – परमात्मा की उपासना करना। यह कार्य वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्र... में रहकर किया जाता था।

हिन्दूधर्म के प्रमुख नैतिक आयाम – (1) सत्य (2) प्रेम (3) श्रद्धा (4) त्या... (5) अहिंसा (6) क्षमाशीलता (7) दानशीलता (8) आज्ञापालन (9) मातृशक्ति का सम्मान (10) आत्मसंयम (11) समाज-सेवा।

(1) सत्य : नैतिक गुणों में सत्य का सर्वोपरि स्थान है। महात्मा गाँधी तो सत्य को ही ईश्वर मानते थे। उनके मत में जो सत्य बोलते हैं, वे ही ईश्वर की सच्ची पूजा करते हैं। 'सत्यमेव जयते' अर्थात् सत्य की ही विजय होती है।

(2) प्रेम : प्रेम चिरस्थायी मानवीय गुण है। सच्चे प्रेम में समर्पण की झलक होती है। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है, प्रेम का अर्थ किसी को पाना नहीं किन्तु उसमें खो जाना है। श्रीकृष्ण कहते हैं कि हमें प्रेम में त्याग करना पड़ता है। प्रेम वो नहीं है जिसे छीनकर या माँगकर लिया जाए बल्कि प्रेम वहीं है जहाँ त्याग है। परिवार, समाज तथा राष्ट्र की सुख-समृद्धि का साधन पारस्परिक प्रेम में निहित है।

(3) श्रद्धा : श्रद्धा का तात्पर्य है– ईश्वर, गुरुजन, श्रेष्ठजनों के प्रति सच्चा आदर-भाव, सच्चा विश्वास, सच्ची निष्ठा प्रदर्शित करना। सामान्यत: श्रेष्ठता के प्रति अटूट आस्था को श्रद्धा कहा जाता है। आस्था जब सिद्धान्त से व्यवहार में आती है तब उसे निष्ठ कहा जाता है। जब निष्ठ व्यक्ति के जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त करने के भक्ति के क्षेत्र में प्रवेश करती है तब श्रद्धा का रूप ले लेती हैं। वस्तुतः श्रद्धा एक गुण है जो व्यक्ति के सद्‌गुणों, सद्विचारों और उत्कृष्ट विशिष्टताओं के आधार पर उसे श्रेष्ठता प्रदान करता है।

(4) त्याग : जो व्यक्ति दूसरों के हित में अपने सुखों का त्याग कर सकता है, वही साधारण मनुष्य से ऊपर उठकर एक महामानव बनता है। ऐसे महामानव ही समाज, देश और सृष्टि के कल्याण का निमित्त बनते हैं।

(5) अहिंसा : अहिंसा जीवन की परम ज्योति है, जो जीवन को प्रकाशित करती है। वैदिक ऋषियों ने अहिंसा को परम धर्म, परम तप तथा परम सत्य माना है। महाभारत अनुशासन पर्व में कहा गया है–

"अहिंसा परमो धर्मस्थऽहिंसा परं तपः।

अहिंसा परमं सत्यं, ततो धर्म प्रवर्तते।।"

ऐसा कोई धर्म नहीं है, जिसने अहिंसा के महत्व को स्वीकार नहीं किया हो। वस्तुत: अहिंसा ही समस्त शास्त्रों का सारतत्व है। अहिंसा के पालन करने से आत्मसुख का अनुभव होता है। महात्मा गाँधी ने अहिंसा को सर्वोपरि गुण माना है।

भारतीय जीवन-दर्शन अहिंसा को मन का धर्म मानता है। अत: अहिंसा एक जीवन मूल्य है। मन में अहिंसा का भाव सुदृढ़ होने पर व्यक्ति अजातशत्रु बन जाता है।

(6) क्षमाशीलता : क्षमाशीलता का अर्थ है निंदा, अपमान और हानि में अपराध करने वाले को दण्ड देने का भाव न रखना। संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, उनका यह विशेष गुण रहा है। मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बताए गए हैं जिनमें क्षमा का मुख्य स्थान है। क्षमा करना एक दैवीय गुण है।

(7) दानशीलता : दानशीलता का सम्बंध प्राय: धन प्रदान करने से लिया जाता है, किन्तु दानशीलता का गुण बहुआयामी है। विद्या, शक्ति, ज्ञान का दान करना अथवा समय दान, भू-दान, सेवादान भी दानशीलता का उदाहरण है। किसी रोगी की सेवा करना अथवा

बूढ़े, अंधे, अपंग व्यक्ति को सड़क पार कराना भी दानशीलता है।

ऋग्वेद के अनुसार दानी पुरुष अमरत्व प्राप्त करते हैं और उनकी आयु बढ़ जाती है।
अथर्ववेद के कथनानुसार सौ हाथों से धन अर्जित करो और हजार हाथों से उनका दान करो।

(8) आज्ञापालन : भारतीय संस्कृति में मातृभक्ति, पितृभक्ति, गुरुभक्ति का विशे
महत्व है। इन्हीं के द्वारा आज्ञापालन का पाठ बाल्यावस्था से ही संस्कार के रूप में प्राप्त हो
है। आज्ञापालन के भाव से मनुष्य में कर्तव्य निष्ठा का भाव विलसित होता है।

(9) मातृशक्ति का सम्मान : भारतीय परम्परा में महिलाओं को उच्च स्थान दि
गया है। भारतीय दर्शन, संस्कृति और परम्परा में माता का स्थान सर्वोपरि रहा है। यह हमे
से पूजनीय रही है। इसकी पूजा देवताओं ने भी की है। कहा भी गया है, 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्
रमन्तें तत्र देवता।' जहाँ स्त्री का सम्मान होता है, वहाँ देवताओं का वास होता है। अतः ह
भी नारी का सम्मान करना चाहिए। माता कभी कुमाता नहीं हो सकती।

(10) आत्मसंयम : मन या चित्त की वृत्तियों को वश में रखने की क्रिया आत्मसंय
कहलाती है। अर्थात् अपने मन पर नियंत्रण करना। प्राचीन समय में नैतिक शिक्षा का प्रमु
ध्येय इंद्रिय-संयम ही माना जाता था। आत्म संयम के अंतर्गत ही समय-संयम, वाणी-संय
आदि आते हैं। व्यक्ति को विचार, वाणी तथा कर्म के मध्य ठीक से सन्तुलन बिठाना ही सच
आत्म-संयम है।

(11) समाज-सेवा : बिना किसी अपेक्षा के प्यार एवं दया भाव से जरूरतमंदों को
अपनी क्षमतानुसार हरसंभव सहायता करना ही समाज सेवा कहलाता है। जीवन की सार्थकता
स्वयं से हटकर दूसरों के लिए सोचना भी है। तुलसीदास ने भी रामचरित-मानस में कहा है-

"परहित सरस धरम नहीं भाई, पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।" समाज सेवा वैयक्तिक
आधार पर, समूह अथवा समुदाय में व्यक्तियों की सहायता करने की एक प्रक्रिया है जिससे
व्यक्ति अपनी सहायता स्वयं कर सके। अतः हम समाज सेवा को एक समर्थकारी प्रक्रिया
कह सकते हैं।

बौद्ध धर्म -

बौद्ध धर्म का उदय भारत में हुआ। इस धर्म के प्रवर्तक महात्मा बौद्ध हैं उनके उपदेश
शिष्यों द्वारा त्रिपिटक साहित्य में संग्रहीत किए गए हैं। त्रिपिटक के अन्तर्गत विनय पिटक,
सुत्त पिटक एवं अभिधम्म पिटक का समावेश है। धम्मपद बौद्ध धर्म का पवित्र ग्रंथ है।

बौद्ध धर्म के प्रमुख सिद्धांत - बौद्ध धर्म के चार आर्य सत्य इस प्रकार हैं -

1. दुःख - प्रथम आर्यसत्य संसार दुःखमय है। यह संसार दुःख से पूर्ण है जन्म, जरा,
बीमारी एवं मृत्यु अप्रिय का संयोग एवं प्रिय का वियोग दुःख है।

2. दुःख समुदाय- समस्त दुःखों की उत्पत्ति किन्हीं कारणों से होती हैं। इच्छा,
अभिलाषा, लालसा, बौद्ध की भाषा में तृष्णा ही समस्त दुःखों का कारण है। तृष्णा से ही समस्त
दुखों की उत्पत्ति होती है।

3. दुःख निरोध (निर्वाण)- दुःखों का निरोध किया जा सकता है। कारण के नष्ट
कर देने से कार्य स्वतः नष्ट हो जाता है। इन दुःखों का कारण इच्छा, अभिलाषा, लालसा
या तृष्णा। इसका त्याग कर देने से दुःख समाप्त हो जाते हैं।

4. दुःख निरोग मार्ग- दुःखों को त्याग करने का मार्ग है। इस मार्ग को आर्य अष्टांगिक
मार्ग कहते हैं।

आर्य अष्टांगिक मार्ग की निम्नलिखित आठ बातें हैं :

1. **सम्यक दृष्टि**- चार आर्य सत्यों पर पूर्ण रूप से विश्वास करना सम्यक दृष्टि है।
2. **सम्यक संकल्प** - अकार्य को न करने का दृढ़ निश्चय या संकल्प करना।
3. **सम्यक वाक्य या वचन** - असत्य भाषण या बकवास आदि से दूर रहना।
4. **सम्यक व्यवहार या कर्म**- प्राणी हिंसा तथा दुराचार आदि से बचना।
5. **सम्यक आजीव**- सही ढंग से आजीविका चलाना।
6. **सम्यक व्यायाम** - मानसिक दोषों को पराजित करना, मन की शुद्धि करना।
7. **सम्यक स्मृति**- जन्म, जरा, मृत्यु का सदा स्मरण करना।
8. **सम्यक समाधि**- शांति एवं एकाग्रता का आश्रम लेना।

यह अष्टांगिक मार्ग बौद्ध धर्म का साधना पक्ष है।

बौद्ध नैतिक मूल्य :

पंचशील सिद्धांत- (1) अहिंसा, (2) सत्यवादिता (3) अचौर्य (4) ब्रह्मचर्य
(5) मद्यनिषेध।

(1) अहिंसा : बौद्ध धर्म के अनुयायी अहिंसा के पालन में 'जीव हिंसा से विरक्त
रहूँगा, ऐसा व्रत लेते हैं। बौद्ध धर्म ग्रंथ धम्मपद में यह कहा गया है कि इस संसार में हिंसा
को बैरभाव से शांत नहीं किया जा सकता किन्तु अबैर से बैर शांत किया जा सकता है।

(2) सत्यवादिता : यदि कोई व्यक्ति सत्यव्रत धारण करता है तो वह अपना एवं
समाज का कल्याण करता है। सत्य बोलने वाला व्यक्ति किसी की निंदा, चुगली नहीं करता
वह हमेशा उचित एवं सत्य ही बोलता है।

(3) अस्तेय : किसी भी प्रकार की चोरी जैसे- धन चुराना, ठगी करना, रिश्वत
लेना आदि समाज के विकास में बाधक होती है। बौद्ध धर्म में सम्यक् आजीविका पर बल
दिया गया है।

(4) ब्रह्मचर्य : ब्रह्मचर्य इंद्रिय संयम का मूल मंत्र है। किसी भी समाज एवं राष्ट्र
के उत्थान के लिए ब्रह्मचर्य का पालन आवश्यक है। भगवान बुद्ध ने स्वस्थ, सुन्दर, समृद्ध
व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र निर्माण के लिए ब्रह्मचर्य पर बल दिया है।

(5) मद्यनिषेध : मादक द्रव्यों के सेवन से मानसिक एवं शारीरिक दोनों ही संतुलन
बिगड़ जाता है और व्यक्ति विवेकहीन होकर अनैतिक कार्य करने लगता है। बौद्ध धर्म में
मद्यपान के निषेध पर बल दिया गया है।

इस प्रकार बौद्ध धर्म में पंचशील सिद्धांत, सुन्दर एवं स्वस्थ समाज के निर्माण में सामाजिक नैतिक मूल्यों की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जिसकी प्रासंगिकता बनी हुई है।

जैन धर्म :

जैन धर्म हमारे जीवन में अहिंसा और तपश्चर्या की अत्यंत गहराई से प्रतिष्ठा करने वाला धर्म है जो भारत में शताब्दियों पूर्व से विद्यमान है। जैन धर्म मे कुल चौबीस तीर्थंकर हुए हैं, जिन्होंने श्रमण परम्परा का प्रवर्तन किया है। चौबीसवें तीर्थंकर भगवान वर्धमान महावीर आज से 2600 वर्ष पूर्व हुए थे। उन्होंने अपने काम और कठोर तप से केवल्य ज्ञान को प्राप्त किया। जैन धर्मावलंबी 'जिन' कहलाए जिससे इस धर्म का नामकरण जैन धर्म हुआ है। समस्त इन्द्रियों को जीत लेने के कारण ही वर्धमान को 'जिन' कहा गया।

भगवान महावीर के चिन्तन में तीन अत्यंत महत्वपूर्ण तत्व हैं– 1. अहिंसा 2. अपरिग्रह 3. अनेकान्तवाद।

जैन धर्म ने प्रमुखतः पाँच प्रमुख सिद्धांतों का उपदेश दिया जिनसे कर्म और पुनर्जन्म के बंधनों से मुक्ति पायी जा सकती है। इन्हें पंचव्रत कहते हैं–

1. **अहिंसा** – किसी भी प्राणी की मन, वचन और कर्म से हिंसा नहीं करना।
2. **सत्य** – जीवन में सत्य का सदैव अवलम्बन और निष्ठावान रहना।
3. **अस्तेय** – चोरी नहीं करना, जो प्राप्त है, उसमें संतुष्ट रहना ।
4. **अपरिग्रह** – वस्तुओं का संग्रह नहीं करना अथवा उनसे आसक्त नहीं होना।
5. **ब्रह्मचर्य** – ऐन्द्रिक वासनाओं से दूर रहकर संयम का पालन करना

अहिंसा और अन्य व्रत – जैन धर्म में अहिंसा का स्थान सर्वोपरि जैन धर्म के प्रतीक चिन्ह खुली हुई हथेली पर 'अहिंसा' लिखा रहता है, **जिसका अर्थ है**– ''रुकें और अहिंसा का पालन करें''।

अहिंसा का अर्थ है जीव मात्र के जीवनाधिकार की रक्षा करना, और उसके दायित्व के प्रति चैतन्य होना। अहिंसा महाव्रत का संकल्प जैन धर्म के श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों सम्पदाओं में अनिवार्य है।

नैतिकता, पर्यावरण और सदाचार– हमारे जीवन और पर्यावरण को बचाने के लिए प्रासंगिक मूल्य है पृथ्वी और प्रकृति को बचाने के लिए यह जैन मूल्य चेतना आधुनिक समय की बहुत बड़ी जरूरत हैं। यह चेतना केवल मनुष्य केन्द्रित चेतना नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण सृष्टि ही उसमें जुड़ी हुई है।

जीवन संधारण की अनिवार्यता और नैतिकता की सम्भावना–जीवन- संधारण के लिए जैन धर्म का उद्देश्य है कि इसे कम–से–कम किया जा सके। इसीलिए जैन धर्म शाकाहार पर बल देता है।

परस्परोग्रहो जीवनम् (परस्पर निर्भरता) – जिस सत्य का निर्वहन किया है उसमें प्रकृति के सभी अंगों की जैविक एकता को अन्तरानुभुति का विषय वनाया गया है जो स्वयं एक प्रकार की तपश्चर्या है।

अनेकान्तवाद और परिग्रह– अनेकान्तवाद की मूल स्थापना है कि सत्य वहुकोणीय है और बहुआयामी है। परिग्रह का अर्थ है– वस्तुओं से आसक्ति और उनका निजी स्वार्थ में संग्रह।

अस्तेय और ब्रह्मचर्य – अस्तेय का अर्थ है – चोरी न करना या विना अनुमति के दूसरे की किसी भी सम्पति का उपभोग न करना।

ब्रह्मचर्य के अनुभव के विना सांसारिक वासनाओं से छुटकारा नहीं मिल सकता। स्त्री–पुरुषों की पारस्परिक मर्यादा और संसार की समस्त स्त्रियों के प्रति मातृभावना का विकास भी तभी सम्भव है।

सम्यकत्व– सम्यकत्व का अर्थ है– जीवन को भली–भाँति संतुलित करना पृथ्वी पर मनुष्य का जीवन अशांति में जीने के लिए कल्पित नहीं हुआ है, बल्कि उसे समरसता की दिशा में ले जाने की भावना से सृजित है। यही मूल लक्ष्य है जो 'जियो और जीने दो' की महान प्रेरणा बनकर आज हमारे लोकतंत्र को पुष्ट और शक्तिशाली बनाता है।

उग्रवाद, आंतकवाद, क्रूरता, स्वार्थपरकता, भोगवाद, हिंसावाद, अलगाववाद, उपभोक्तावाद और कट्टरपंथ से ग्रस्त वर्तमान विश्व को इस सत्प्रेरणा की बहुत जरूरत है। यदि मानव जाति इन सिद्धांतों पर मनन करे तो विश्व में फैली अशांति, साम्प्रदायिकता, असुरक्षा, युद्धों की विभीषिका और भोगवाद से मुक्ति पाई जा सकती है।

ईसाई धर्म

ईसाई धर्म; ईसाइयत या मसीही धर्म (क्रिश्चियानिटी) यीशु के जीवन और शिक्षाओं पर आधारित एक इब्राहीमी एकेश्वरवादी धर्म है। यह दुनिया का सबसे बड़ा सर्वाधिक जनसंख्या वाला सबसे व्यापक धर्म है। इसके अनुयायी, जिन्हें ईसाई या मसीही कहा जाता है। 157 देशों और क्षेत्रों में निवास करते हैं। वे यह मानते हैं कि यीशु ईश्वर के पुत्र हैं, जिनकी मसीहा के रूप में भविष्यवाणी हिब्रूबाइबिल (ईसाई धर्म में जिसे पुराना नियम कहा जाता है।) में की गई थी। यह विश्व के प्राचीन धर्मों में से एक है जो प्राचीन यहूदी परम्परा से निकला है।

ईसाई परम्परा के अनुसार इसकी शुरुआत प्रथम सदी ई. में फिलिस्तीन में हुई है।

ईसाई धर्म यीशु के जन्म के बाद पहली शताब्दी में यहूदिया के रोमन प्रांत में हेलेनीयाई प्रभाव वाले एक यहूदी सम्प्रदाय के रूप में शुरू हुआ। ईसाई धर्म ने पाश्चात्य सभ्यता के विकास में, विशेष रूप से यूरोप में प्राचीन काल और मध्य युग से एक प्रमुख भूमिका निभाई।

इस पंथ की मान्यता यह है कि परमेश्वर आत्मा है और आत्मा का हड्डी और माँस नहीं होता है अर्थात् जिसे हम देख नहीं सकते उसकी प्रतिमा कैसे बना सकते हैं। उस सर्वशक्तिमान परमेश्वर को कभी किसी ने भी शारीरिक आँखों से नहीं देखा।

ईश्वर : ईसाई तीन तत्ववादी हैं, और वे ईश्वर को तीन रूपों में समझते हैं- परमपिता परमेश्वर, उनके पुत्र ईसा मसीह (यीशु मसीह) और पवित्र आत्मा।

परमपिता : परमपिता इस सृष्टि के रचयिता हैं और इसके शासक भी।

ईसा मसीह : ईसा मसीह (यीशु) एक यहूदी थे जो इजराइल के गाँव बेतलहम में जन्में थे। (4 ईसा पूर्व) ईसाई मानते हैं कि उनकी माता मरियम थीं। ईसा मसीह उनके गर्भ में परमपिता परमेश्वर की कृपा से चमत्कारिक रूप से आये थे। ईसा मसीह ने इजराइल में यहूदियों के बीच प्रेम का संदेश सुनाया और कहा कि वो ही ईश्वर के पुत्र हैं। इन बातों पर पुराणपंथी यहूदी धर्मगुरु भड़क उठे और उनके कहने पर इजराइल के रोमन राज्यपाल ने ईसा मसीह को क्रॉस पर चढ़ाकर मारने का प्राणदंड दे दिया। ईसाई मानते हैं कि इसके तीन दिन बाद ईसा मसीह का पुनरुत्थान हुआ या ईसा मसीह पुनर्जीवित हो गये। ईसा के उपदेश बाइबिल के नये नियम में उनके 12 शिष्यों द्वारा रेखांकित किये गये।

बाइबिल : ईसाई धर्म ग्रंथ बाइबिल में दो भाग हैं। पहला भाग पुराना नियम कहलाता है, जोकि यहूदियों के धर्म ग्रंथ तनख का ही संस्करण है। दूसरा भाग नया नियम कहलाता तथा ईसा मसीह के उपदेश, चमत्कार और उनके शिष्यों के कामों का वर्णन करता है।

इस्लाम धर्म

इस्लाम का अर्थ है- 'अल्लाह के आदेश के समक्ष झुकना।' इस्लाम एकेश्वरवाद को मानता है। ईश्वर एक है एवं सृष्टि में केवल वही उपासना योग्य है। हर वस्तु जड़ एवं चेतन, दृश्य एवं अदृश्य, ईश्वर की इच्छा के आगे आत्मसमर्पित है।

इस्लाम धर्म के पवित्र ग्रंथ का नाम कुरान है। इसके अनुयायियों को मुसलमान कहा जाता है। उनके अनुसार ईश्वर ने मुहम्मद साहब से पहले भी धरती पर कई दूत भेजे हैं, किन्तु मोहम्मद साहब इस्लाम धर्म का प्रचार करने वाले अंतिम दूत थे और कुरान मुस्लिम धर्म का अंतिम धर्म ग्रंथ है।

मुहम्मद साहब ने ही मुसलमान को इस्लाम के आधारभूत सिद्धांतों की शिक्षा दी। उनकी दी हुई शिक्षा पूर्णतः कुरान पर आधारित थी। मुहम्मद साहब ने पहले स्वयं कुरान में बताए नियमों, सिद्धांतों एवं उसकी शिक्षा को अपने जीवन में उतारा तत्पश्चात् मुसलमानों को उपदेश देना प्रारम्भ किया।

इस्लाम धर्म के पाँच महत्वपूर्ण स्तम्भ हैं -

1. तौहीद- तौहीद का अर्थ है साक्षी होना, गवाही देना। इस्लाम में इसका अर्थ फारसी घोषणा से है- 'ला इलाहा इल्लालाई मुहम्मद उर रसूल अल्लाह।' अर्थात् अल्लाह के सिवा कोई और परमेश्वर नहीं और मुहम्मद उसके रसूल (दूत) हैं।

2. नमाज़ - नमाज़, उर्दू में फारसी शब्द सलात का पर्याय है इसका अर्थ दुआ (प्रार्थना) है। नमाज़ के लिए कुरान में अल्लाह का आदेश है - 'ईमान वालों!' सब्र और नमाज़ों से काम लो।

3. रोज़ा- रोज़ा अर्थात् उपवास। इस्लामी पंचांग का नौवां मास रमज़ान है। इस पूरे माह मुस्लिम समुदाय रोज़ा रखते हैं, कुरान का पठन था पारायण करना, दान, धर्म करना एवं ईश्वर के प्रति आभार प्रदर्शित करना।

4. हज़ - हज़ एक इस्लामी तीर्थयात्रा है। यह मुस्लिम लोगों के पवित्र शहर मक्का में प्रतिवर्ष होने वाला विश्व का सबसे बड़ा जमावड़ा है। हज मुसलमानों का महत्वपूर्ण धार्मिक कर्तव्य है।

5. जकात - इस्लाम के पवित्र ग्रंथ कुरआन के अनुसार प्रत्येक मुसलमान को वर्ष में एक बार अपनी आय का कुछ भाग गरीबों एवं जरुरतमंदों को दान करना चाहिए। इस दान को जकात कहते हैं।

इस्लाम धर्म में निहित नैतिक मूल्यों एवं नैतिक संदेशों का विश्लेषण निम्नानुसार किया जा सकता है :

1. नैतिकता का महत्व एवं प्रकृति - एक सच्चे मुसलमान में एक मूल्य प्रधान इकाई के रूप में स्वाभिमान, दूसरों की भावनाओं का सम्मान, परिवार, समाज, राष्ट्र एवं विश्व कल्याण की भावना इत्यादि गुणों का समावेश होना आवश्यक है।

इस्लाम धर्म के मुख्य उद्देश्यों में मूल्याधारित अनुशासन, चरित्र निर्माण हेतु ज्ञान प्राप्ति, समाज एवं राष्ट्र के निर्माण एवं पुनर्निर्माण में प्रत्येक व्यक्ति की व्यक्तिशः महभागिता, अनुशासित व्यवहार का अभ्यास इत्यादि प्रमुख हैं।

2. मृत्यु उपरान्त जीवन - इस्लाम धर्म में मृत्यु के बाद पाप-पुण्य का हिसाब अथवा लेखा-जोखा होने पर विशेष बल दिया गया है। इस मृत्योपरांत जीवन की कल्पना के आधार पर ही संसार में जीवन व्यतीत करने की सीमित अवधि में अधिक से अधिक सद्कार्य करने हेतु हिदायत दी गई है।

सिक्ख धर्म

'सिक्ख धर्म' शब्द संस्कृत के शिष्य शब्द का पंजाबी रूप है, जिसका अर्थ है - शिष्य या चेला। सिक्ख धर्म के संस्थापक एवं प्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी से ही सिक्खों के इतिहास का प्रारंभ होता है। गुरु साहिब ने स्वयं भी अपनी वाणी से परमेश्वर को शब्द रूप माना है। गुरु नानक देव जी ने ही ''एक ओंकार'' का नारा दिया जिसका मतलब है कि ईश्वर एक है, इसी का नाम सच है और वही सबको बनाने वाला है।

सेवा और समानता - गुरु नानक ने दो महत्वपूर्ण प्रथाओं 'लंगर' और 'सेवा' की शुरुआत की। उनका लंगर समानता, नम्रता और मातृभाव का सूचक है क्योंकि लंगर में संगत की सेवा से जुड़े सभी लोग समान उद्देश्य के साथ जाति-पाति तथा अमीरी-गरीबी का भेदभाव

भुलाकर एक ही पंक्ति में बैठकर भोजन करते हैं, जिसमें परमार्थि विचारों वाले सभी लोग एक समान भाईचारे का अंग बन जाते हैं।

गुरु नानक साहिब के मुख्य रुहानी उपदेश हैं : 1. नाम जपो, 2. बंड छको, 3. किरत करो।

- गुरु नानक साहिब 'स्त्री और पुरुष' की समानता में विश्वास करते थे।
- गुरु जी ने अपने अनुयायियों को बुरे शब्दों का उपयोग करने की भी मनाही की है, वे कहते हैं : 'नानक फिक्का बोलिए, तन मन फिक्का होए।'
- सिक्ख साहित्य में जहाँ-जहाँ ओंकार आया है, उसके आगे 1 अंक होता है। ओंकार के आगे 1 लिखकर श्री गुरु नानक देव ने यह सूचित किया है कि परमेश्वर एक ही है।

यहूदी धर्म

यह विश्व के प्राचीनतम धर्मों में से है, तथा दुनिया का प्रथम एकेश्वरवादी धर्म माना जाता है। इज्राइल और हिब्रू भाषियों का राजधर्म है। येरुसलेम का मंदिर यहूदी धर्म का केन्द्र बना है। इस धर्म के प्रमुख धार्मिक ग्रंथ हैं तनख़, तालमुद तथा मिद्रश।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. हिन्दू धर्म के प्रमुख सिद्धांत निम्न में से कौन-से हैं?
(क) पुरुषार्थ (ख) आश्रम व्यवस्था
(ग) ऋण व्यवस्था (घ) उपर्युक्त सभी

2. इनमें से चार पुरुषार्थ में से एक नहीं है।
(क) धर्म (ख) अर्थ (ग) काम (घ) लोभ

नैतिकता का प्रमुख गुण क्या है?
(क) आत्मगत गुण (ख) वस्तुगत गुण (ग) धर्मगत गुण (घ) भावगत गुण

कर्मवाद का प्रमुख सिद्धांत है :
(क) कर्त्ता को फल प्राप्त होना (ख) भोगों को भोगना
(ग) कर्म फल की इच्छा न करना (घ) कर्त्तव्य का पालन करना

5. महावीर के चिंतन में तीन महत्वपूर्ण तत्वों में से एक है :
(क) सत्य (ख) ब्रह्मचर्य (ग) अस्तेय (घ) अनेकान्तवाद

पंचव्रतों में से कौन-से व्रत के शेष व्रत अनुवर्ती है :
(क) अहिंसा (ख) अपरिग्रह (ग) सत्य (घ) ब्रह्मचर्य

7. "परस्परोपग्रहो जीवनम्" कहकर किस सत्य का निर्वचर किया गया है :
(क) जीवन की परस्पर निर्भरता
(ख) प्रकृति के सभी अंगों की जैविक एकता
(ग) जीवन-जगत की एकता (घ) पर्यावरण विज्ञान

बुद्ध की शिक्षाओं का सार किसमें निहित है?
(क) संघ में (ख) धम्म पद में
(ग) चार आर्य सत्यों में (घ) उपरोक्त सभी में

बुद्ध ने दुःख निरोध के कितने मार्ग बताए हैं?
(क) चार (ख) छह
(ग) आठ (घ) इनमें से कोई नहीं।

10. पंचशील का संबंध है :
(क) बौद्ध धर्म से (ख) हिन्दू धर्म से
(ग) ईसाई धर्म से (घ) इनमें से कोई नहीं

11. मसीही धर्म के अनुसार मनुष्य अपने मूल उद्देश्यों से क्यों भटक गया?
(क) धर्मान्धिता के कारण (ख) पुण्य लाभ के कारण
(ग) पाप के कारण (घ) धनार्जन के कारण

12. यीशु के अनुसार सबसे बड़ा दान कौन-सा है?
(क) धन दान (ख) क्षमा दान (ग) विद्या दान (घ) श्रमदान

13. यीशु की दृष्टि में सच्चे मसीही का क्या होना नितान्त आवश्यक है?
(क) अच्छा नागरिक (ख) शिक्षित होना
(ग) धनवान होना (घ) दानवीर होना

14. इस्लाम धर्म के महत्वपूर्ण स्तम्भ हैं :
(क) नमाज़ (ख) रोज़ा (ग) हज़ (घ) ये सभी

15. जकात शब्द का मूल अर्थ है :
(क) दान (ख) वंचित वर्ग की सहायता
(ग) धन का समान वितरण (घ) मानसिक शांति

16. इस्लाम पंचांग में रमज़ान का माह कहलाता है :
(क) नौवाँ मास (ख) दसवाँ मास
(ग) ग्यारहवाँ मास (घ) बारहवाँ मास

17. गुरुनानक जी द्वारा प्रारंभ किए गए लंगर का उद्देश्य निम्न में से कौन-सा नहीं था?
(क) समानता (ख) नम्रता
(ग) भ्रातृभाव (घ) भेदभाव

18. गुरु नानक जी ने रुहानी उपदेशों में 'वंड छको' का आशय है :
(क) परमात्मा के नामों का स्मरण।
(ख) स्त्री-पुरुष की समानता में विश्वास।
(ग) मिलजुल कर खाना और जरुरतमंदों की सेवा करना।
(घ) ईमानदारी से आजीविका कमाना।

19. जाति-पांति तथा अमीरी-गरीबी का भेदभाव भुलाकर एक ही पंक्ति में बैठकर भोजन करने को कहते हैं :
(क) पंगत (ख) संगत (ग) भण्डार (घ) लंगर

20. सिक्ख धर्म के संस्थापक कौन थे?
(क) गुरु गोविन्द सिंह (ख) रविदास
(ग) गुरु नानक देव (घ) गुरुरामदास

21. 'त्रिपिटक साहित्य' में संग्रहीत है :
(क) विनय पिटक (ख) सुतपिटक
(ग) अभिधम्य पिटक (घ) इनमें से सभी।

22. भगवान वर्धमान महावीर कौन से तीर्थंकर हुए?
(क) चौबीसवें (ख) पच्चीसवें
(ग) सत्ताईसवें (घ) इसमें से कोई नहीं।

23. सिक्ख साहित्य में जहाँ-जहाँ 1 अंक आया है उसका अर्थ है :
(क) एकेश्वरवाद (ख) परमात्मा एक ही है
(ग) समानता (घ) इनमें से कोई नहीं।

24. 'सिक्ख' शब्द संस्कृत के किस शब्द का पंजाबी रूप है?
(क) शिष्य (ख) सीख
(ग) शाक्य (घ) इनमें से कोई नहीं।

25. यीशु मसीही का जन्म उपरान्त किसका शासन था?
(क) रोमन शासन (ख) तुर्की शासन
(ग) यरुशलेम शासन (घ) कोई नहीं।

26. यीशु मसीही ने प्रत्येक नैतिक कार्य के तीन तत्व कौन-कौन से बताए हैं?
(क) कर्म (ख) उद्देश्य
(ग) परिस्थितियाँ (घ) इनमें से सभी।

27. बौद्ध नैतिक मूल्य के पंचशील सिद्धांत के अंतर्गत शामिल नहीं है?
(क) मद्यपान का निषेध (ख) चोरी न करना
(ग) हिंसा (घ) ब्रह्मचर्य

28. बौद्ध धर्म ग्रंथ दीर्घनिकाल के सिगालोवाद सुत्त में किसके प्रति नैतिक सदाचार पर जोर दिया गया है?
(क) परिवार के प्रति (ख) समाज के प्रति
(ग) देश के प्रति (घ) इनमें से कोई नहीं।

29. 'जियो और जीने दो' की महान प्रेरणा किस धर्म से संबंधित है?
(क) बौद्ध धर्म (ख) जैन धर्म
(ग) सिक्ख धर्म (घ) ईसाई धर्म

30. 'अस्तेय' का अर्थ है :
(क) चोरी न करना (ख) मद्यपान न करना
(ग) सत्य (घ) अहिंसा

उत्तरमाला

1. (घ),	2. (घ),	3. (क),	4. (ग),	5. (घ),	6. (क),
7. (क),	8. (ख),	9. (ग),	10. (क),	11. (ग),	12. (ख),
13. (क),	14. (घ),	15. (क),	16. (क),	17. (घ),	18. (ग),
19. (घ),	20. (ग)	21. (घ),	22. (क),	23. (ख),	24. (क),
25. (क),	26. (घ),	27. (ग)	28. (क),	29. (ख),	30. (क)

■■■

7

वाक्य रचना एवं अशुद्धि शोधन

वाक्य :

मनुष्य के विचारों को पूर्णता से प्रकट करने वाले पद समूह को वाक्य कहते हैं। वाक्य सार्थक शब्दों का व्यवस्थित रूप है। यदि शब्द भाषा की प्रारंभिक अवस्था है, तो वाक्य उसका विकास।

वाक्य वह सार्थक ध्वनि है, जिसके माध्यम से लेखक लिखकर तथा वक्ता बोलकर आपने भाव या विचार पाठक या श्रोता पर प्रकट करता है। वाक्य की उपयोगिता व्याकरण में तो है ही, सर्वसाधारण के दैनिक जीवन में भी कम नहीं। अत: सामान्य जीवन में वाक्य का विशेष महत्व है।

भाषा की अभिव्यक्ति का आधार व्याकरण–सम्मत है। भाषा की लघुतम इकाई 'शब्द' है। ध्वनि समूह शब्द बनाते हैं। शब्दों के सार्थक, क्रमबद्ध और उचित संचयन से वाक्य बनता है। भाषा की वास्तविक इकाई वाक्य है। हम कह सकते हैं कि वाक्य सार्थक व उचित शब्दों का वह समूह है जिसमें कर्त्ता व क्रिया दोनों होते है।

"एक पूर्ण विचार सम्प्रेषित करने वाला शब्द समूह वाक्य कहलाता है।" वाक्य के तीन गुण होते हैं : 1. योग्यता, 2. आकांक्षा (आवश्यकता), 3. क्रमबद्धता (आसक्ति)।

वाक्य में आकांक्षा, योग्यता और क्रम का होना आवश्यक है। आकांक्षा से पदविशेष की पूर्ति होती है।

"वाक्य के एक पद को सुनकर दूसरे पद को सुनने या जानने की जो स्वाभाविक उत्कंठा जागती है, उसे आकांक्षा कहते हैं।"

जैसे : '**दिन में काम करते हैं?**' यदि हम कहें कि 'दिन में सभी काम करते हैं', तो 'सभी' कह देने से प्रश्न का उत्तर मिल जाता है और वाक्य ठीक हो जाता है। अत: इस वाक्य में 'सभी' शब्द की आकांक्षा थी, जिसकी पूर्ति करने पर वाक्य पूरा हो गया।

वाक्य में योग्यता का तात्पर्य है, पदों के अर्थबोधन का सामर्थ्य। "जब वाक्य का प्रत्येक पद या शब्द अर्थबोधन में 'सहायक' हो, तो समझना चाहिए कि वाक्य में योग्यता विद्यमान है।"

जैसे : '**किसान लाठी से खेत जोतता है।**' इस वाक्य में 'योग्यता' का अभाव खटकता है, क्योंकि 'लाठी से' खेत जोतने का काम नहीं होता। 'लाठी' के साथ पर 'हल' का प्रयोग होता, तो वाक्य की योग्यता संगत होती।

क्रम, आकांक्षा और योग्यता के विधान को पूर्णता प्रदान करता है। "वाक्यों में प्रयुक्त पदों या शब्दों की विधिवत स्थापना को 'क्रम' कहते हैं।" जैसे : 'रोटी मैंने खाई।' यह वाक्य ठीक नहीं है, क्योंकि 'रोटी' शब्द को 'मैंने' के बाद आना चाहिए।

पदबंध:

डॉ. हरदेव बाहरी ने 'पदबंध' की परिभाषा इस प्रकार दी है : "वाक्य के उस भाग को, जिसमें एक से अधिक पद परस्पर संबद्ध होकर अर्थ तो देते हैं, किन्तु पूरा अर्थ नहीं देते – पदबंध या वाक्यांश कहते हैं।" इस प्रकार रचना की दृष्टि से पदबंध में तीन बातें आवश्यक हैं – एक तो यह कि इसमें एक से अधिक पद होते हैं। दूसरे, ये पद इस तरह से संबद्ध होते हैं कि उनसे एक इकाई बन जाती है। तीसरे, पदबंध किसी वाक्य का अंश होता है। शब्द – भेदों की तरह इसके प्रकार माने गए हैं। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि पदबंध का शब्दक्रम निश्चित होता है।

संज्ञा-पदबंध – वाक्य में संज्ञा का काम करने वाला पद समूह इतने धनी मानी व्यक्ति, भारत के प्रधानमंत्री, रात को पहरा देने वाला, मिट्टी का तेल इत्यादि।

उदाहरण- ● **मगध के राजा** अशोक के दो पुत्र थे। (मगध के राजा)
● **आसमान में उड़ती पतंग** फट गयी। (आसमान में उड़ती पतंग)

सर्वनाम-पदबंध – सर्वनाम का काम देने वाला पद समूह – मुझ अभागे ने, दैव का मारा वह।

उदाहरण- ● **भाग्य का मारा मैं** कहाँ आ पहुँचा। (भाग्य का मारा मैं)
● **चोट खाए हुए तुम** भला क्या खेलोगे। (चोट खाए हुए तुम)

विशेषण-पदबंध – किसी संज्ञा की विशेषता बताने वाला पद समूह – चाँदी से भी प्यारा (मुखड़ा), शेर के समान बलवान (आदमी), एक किलोभार (आटा), गज-दो गज (रस्सी), कुल चार (आदमी), ध्यान में मग्न (साधक), काम में लगा हुआ (आदमी) इत्यादि।

उदाहरण- ● **धीमी चलने वाली** गाड़ियाँ प्राय: देर से पहुँचती है। (धीमी चलने वाली)
● आपका कुत्ता **अत्यंत सुन्दर और फुर्तीला** है। (अत्यंत सुन्दर और फुर्तीला)

क्रिया-पदबंध – क्रिया का काम देने वाला पद समूह– लौटकर कहने लगा, जाता रहता था, कहा जा सकता है, इत्यादि।

उदाहरण- ● वह बाजार की ओर **गया होगा**। (गया होगा)
● श्याम तालाब में **डूब गया**। (डूब गया)
● अब कमरे में **जा सकते है**। (जा सकते है)

क्रिया विशेषण-पदबंध – क्रिया विशेषण का करने वाला पदसमूह- घर से होकर (जाऊँगा), पहले से बहुत धीरे (बोलने वाला), जमीन पर लोटते हुए (चिल्लाया), दोपहर ढले, किसी-न-किसी तरह, इत्यादि।

उदाहरण- ● वह सामान **के साथ** अपने घर चला गया। (**के साथ**)
● **सुबह से शाम तक** वह चलता रहा। (सुबह से शाम तक)

पदबंध और उपवाक्य – उपवाक्य (Clause) भी पदबंध (Phrase) की तरह शब्दों का समूह है, लेकिन इससे केवल आंशिक भाव प्रकट होता है, पूरा नहीं। पदबंध में क्रिया नहीं होती, उपवाक्य में क्रिया रहती है; जैसे : '**ज्योंही वह आया, त्योंही मैं चला गया।**' यहाँ 'ज्यों ही वह आया' एक उपवाक्य है, जिससे पूर्ण अर्थ की प्रतीति नहीं होती।

वाक्य और उपवाक्य – सामान्य तौर पर वाक्य सार्थक शब्द का समूह है, जिसमें कर्ता और क्रिया दोनों होते हैं। जैसे : 'मोहन, सोहन, बाग, घर, मैदान।

यह एक शब्द समूह है, पर क्रियापद एक भी नहीं है। अतएव, इसे हम वाक्य नहीं कह सकते। इसी प्रकार, 'खाता है, रोता है, पढ़ता है, वाचता है, आदि क्रियापदों के समूह को भी वाक्य नहीं कह सकते। वाक्य उसी शब्द समूह को कहेंगे, जब उसमें क्रिया (विधेय) और कर्ता (उद्देश्य) दोनों होंगे। जैसे : मोहन खेलता है।

इसमें 'मोहन' कर्ता के रूप में है और 'खेलता है' क्रिया। इस वाक्य से पूरा अर्थबोध होता है। अतः यह एक वाक्य है। वाक्य में अनेक वाक्य होते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि उसमें एक वाक्य तो प्रधान वाक्य होता है और शेष उपवाक्य। उदाहरण : 'मोहन जल से खेत सींचता है।' इसमें 'मोहन ने कहा' प्रधान वाक्य है और 'कि मैं खेलूँगा' उपवाक्य।

''ऐसा पदसमूह, जिसका अपना अर्थ हो, जो एक वाक्य का भाग हो और जिसमें उद्देश्य और विधेय हो, उपवाक्य कहलाता है। उपवाक्यों के आरंभ में अधिकतर कि, जिससे, ताकि, जो, जितना, ज्यों-ज्यों, चूँकि, क्योंकि, यदि, यद्यपि, जब, जहाँ इत्यादि होते हैं।

उपवाक्य तीन प्रकार के होते हैं :

1. संज्ञा – उपवाक्य : जो आश्रित उपवाक्य संज्ञा की तरह व्यवहृत हों, उसे 'संज्ञा उपवाक्य' कहते हैं। यह कर्म (अकर्मक क्रिया) या पूरक (अकर्मक क्रिया) का काम करता है, जैसे संज्ञा करती है। 'संज्ञा-उपवाक्य' की पहचान यह है कि इस उपवाक्य के पूर्व 'कि' होता है। जैसे : 'राम ने कहा कि मैं पढूँगा।' यहाँ 'मैं पढूँगा' संज्ञा-उपवाक्य है। 'मैं नहीं जानता कि वह कहाँ है – इस वाक्य में 'वह कहाँ है' संज्ञा-उपवाक्य है।

2. विशेषण-उपवाक्य : जो आश्रित उपवाक्य विशेषण की तरह व्यवहृत हो, उसे 'विशेषण-उपवाक्य' कहते हैं। जैसे : वह आदमी जो कल आया था, आज भी आया है। यहाँ 'जो कल आया था' विशेषण – उपवाक्य है। इसमें 'जो', 'जैसा', 'जितना' इत्यादि शब्दों का प्रयोग होता है।

3. क्रिया विशेषण – उपवाक्य : जो उपवाक्य क्रिया विशेषण की तरह व्यवहृत हो, उसे 'क्रिया विशेषण – उपवाक्य' कहते हैं। जैसे : जब उपवाक्य है। इसमें प्रायः 'जब', 'जहाँ', 'जिधर', 'ज्यों', 'यद्यपि' इत्यादि शब्दों का प्रयोग होता है। इसके द्वारा समय, स्थान, कारण, उद्देश्य, फल, अवस्था, समानता, मात्रा इत्यादि का बोध होता है।

वाक्य-भेद

वाक्यों का वर्गीकरण मुख्यतः दो दृष्टियों से होता है : (क) रचना या स्वरूप की दृष्टि से और (ख) अर्थ की दृष्टि से।

(क) रचना की दृष्टि से वर्गीकरण : 1. सरल वाक्य या साधारण वाक्य, 2. मिश्र वाक्य, 3. संयुक्त वाक्य।

1. सरल वाक्य या साधारण वाक्य : ''जिस वाक्य में एक क्रिया होती है और एक कर्ता होता है, उसे 'साधारण वाक्य' या 'सरल वाक्य' कहते हैं। इसमें एक 'उद्देश्य' और एक 'विधेय' रहते हैं। जैसे : 'बिजली चमकती है', 'पानी बरसा'। इन वाक्यों में एक-एक उद्देश्य, अर्थात् कर्ता और विधेय, अर्थात् क्रिया है। अतः ये साधारण या सरल वाक्य हैं।

2. मिश्र वाक्य : जिस वाक्य में एक साधारण वाक्य के अतिरिक्त उसके अधीन कोई दूसरा अंगवाक्य हो, उसे 'मिश्र वाक्य' कहते हैं। दूसरे शब्दों में जिस वाक्य में मुख्य उद्देश्य और मुख्य विधेय के अलावा एक या अधिक समापिका क्रियाएँ हों, उसे 'मिश्र वाक्य' कहते हैं। जैसे : '**वह कौन-सा मनुष्य है, जिसने महाप्रतापी राजा भोज का नाम न सुना हो।**' 'मिश्र वाक्य' के 'मुख्य उद्देश्य' और 'मुख्य विधेय' से जो वाक्य बनता है, उसे 'मुख्य उपवाक्य' और दूसरे वाक्यों को 'आश्रित उपवाक्य' कहते हैं। पहले को 'मुख्य वाक्य' और दूसरे को 'सहायक वाक्य' भी कहते हैं। सहायक वाक्य अपने में पूर्ण या सार्थक नहीं होते, पर मुख्य वाक्य के साथ आने पर उनका अर्थ निकलता है। 'वह कौन-सा मनुष्य है' मुख्य वाक्य है और शेष 'सहायक वाक्य', क्योंकि वह मुख्य वाक्य पर आश्रित है।

3. संयुक्त वाक्य : जिस वाक्य में साधारण अथवा मिश्र वाक्यों का मेल संयोजक अवयवों द्वारा होता है, उसे 'संयुक्त वाक्य' कहते हैं। 'संयुक्त वाक्य' उस वाक्य समूह को कहते हैं, जिसमें दो या दो से अधिक सरल वाक्य अथवा मिश्र वाक्य अव्ययों द्वारा संयुक्त हों। इस प्रकार के वाक्य लंबे और आपस में उलझे होते हैं। जैसे : '**मैं रोटी खाकर लेटा कि पेट में दर्द होने लगा, और दर्द इतना बढ़ा कि तुरंत डॉक्टर को बुलाना पड़ा।**' इस लंबे वाक्य में संयोजक 'और' है, जिसके द्वारा दो मिश्र वाक्यों को मिलाकर संयुक्त वाक्य बनाया गया। इसी प्रकार, 'मैं आया और वह गया' इस वाक्य में दो सरल वाक्यों को जोड़ने वाला संयोजक 'और' है। यहाँ यह याद रखने की बात है कि संयुक्त वाक्यों में प्रत्येक वाक्य अपनी स्वतंत्र सत्ता बनाए रखता है, वह एक-दूसरे पर आश्रित नहीं होता, केवल संयोजक अव्यय उन स्वतंत्र वाक्यों को मिलाते हैं। इन मुख्य और स्वतंत्र वाक्यों को व्याकरण में 'समानाधिकरण' उपवाक्य भी कहते हैं।

(ख) अर्थ की दृष्टि से वर्गीकरण :

1. विधिवाचक वाक्य : जिससे किसी बात के होने का बोध हो। जैसे :

सरल वाक्य – हम खा चुके।

मिश्र वाक्य - मैं खाना खा चुका, तब वह आया।

संयुक्त वाक्य - मैंने खाना खाया और मेरी भूख मिट गई।

2. निषेधवाचक वाक्य : जिससे किसी बात के न होने का बोध हो। जैसे :

सरल वाक्य - हमने खाना नहीं खाया।

मिश्र वाक्य - मैंने खाना नहीं खाया, इसलिए मैंने फल नहीं खाया।

संयुक्त वाक्य - मैंने भोजन नहीं किया और इसलिए मेरी भूख नहीं मिटी।

3. आज्ञावाचक वाक्य : जिससे किसी तरह की आज्ञा का बोध हो। जैसे : 'तुम खाओ। तुम पढ़ो।'

4. प्रश्नवाचक वाक्य : जिससे किसी प्रकार के प्रश्न किए जाने का बोध हो। जैसे : क्या तुम खा रहे हो? तुम्हारा नाम क्या है?

5. विस्मयवाचक वाक्य : जिसमें आश्चर्य, दुःख या सुख का बोध हो। जैसे:

ओह! मेरा सिर फटा जा रहा है।

अरे! तुम अनुत्तीर्ण हो गये।

6. संदेहवाचक वाक्य : जिससे किसी बात का संदेह प्रकट हो। जैसे : 'उसने खा लिया होगा', 'मैंने कहा होगा।'

7. इच्छावाचक वाक्य : जिससे किसी प्रकार की इच्छा या शुभकामना का बोध हो। जैसे : तुम अपने कार्य में सफल रहो।

8. संकेतवाचक वाक्य : जहाँ एक वाक्य दूसरे की संभावना पर निर्भर हो।

जैसे: पानी न बरसता तो धान सूख जाता।

यदि तुम खाओ तो मैं भी खाऊँ।

अशुद्धि शोधन

अशुद्धि या त्रुटि से आशय : भाषा में अशुद्धि अथवा त्रुटि से आशय उसके अशुद्ध लेखन से होता है, जिसमें शब्द या वाक्य को व्याकरण की अज्ञानता, भाषा का अपूर्ण ज्ञान आदि के कारण सम्बन्धित शब्द या वाक्य का सही अर्थ निकलने के बजाय वह निरर्थक हो जाता है अथवा फिर अनर्थक।

अशुद्धियों या त्रुटियों के प्रकार:

हिन्दी में अशुद्धियाँ चार तरह की होती हैं :

1. उच्चारणगत एवं वर्तनीगत अशुद्धियाँ : हिन्दी में स्वरों तथा व्यंजना के दोषपूर्ण उच्चारण से होने वाली अशुद्धियों को उच्चारणगत अशुद्धियाँ कहते हैं।

जैसे : कवि - कवी

नमस्कार - नमश्कार

उच्चारणगत ध्वनि को लिखित रूप प्रदान करने को वर्तनी कहते हैं। लिखने में जो अशुद्धियाँ होती हैं, वे वर्तनीगत अशुद्धियाँ कहलाती हैं।

जैसे : प्राण - प्रान

निपुण - निपुन

2. शब्दगत अशुद्धियाँ : भाषा में शब्द सम्बन्धी भी बहुत-सी भूलें देखी जाती हैं। ये अशुद्धियाँ अनावश्यक प्रत्येक अथवा उपसर्ग के सह- प्रयोग के कारण होती हैं। इस तरह की अशुद्धियाँ शब्दगत अशुद्धियाँ कहलाती हैं।

जैसे : पूजनीय - पूज्यनीय

माधुर्य - माधुर्यता

3. शब्दार्थगत अशुद्धियाँ : शब्दों का सही अर्थ न मालूम होने की स्थिति में प्रायः उनका गलत प्रयोग हो जाता है, जिससे भाषा दोषपूर्ण हो जाती है। इस तरह होने वाली अशुद्धियाँ शब्दार्थगत अशुद्धियाँ कहलाती हैं।

जैसे : भोजन करना - भोजन खाना

प्रतीक्षा करना - प्रतीक्षा देखना

4. वाक्यगत अशुद्धियाँ : वाक्य, संरचना अथवा वाक्य निर्माण में व्याकरण का समुचित ध्यान न रखे जाने के कारण, भाषा में होने वाली अशुद्धियाँ वाक्यगत अशुद्धियाँ कहलाती हैं। व्याकरणगत अशुद्धियाँ – संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, लिंग, वचन आदि के दोष के कारण होती हैं।

जैसे : राम को मृत्युदण्ड की सजा मिली – राम को मृत्युदण्ड मिला।

वाक्य भाषा की महत्वपूर्ण इकाई है अतः वाक्य को बोलते व लिखते समय उसकी शुद्धता, स्पष्टता और सार्थकता का ध्यान रखना आवश्यक है। व्याकरण के नियमों की दृष्टि से 'वाक्य' को शुद्ध होना चाहिए।

वाक्यों में अनेक प्रकार की अशुद्धियाँ होती हैं जो इस प्रकार हैं–

(1) संज्ञा-संबंधी अशुद्धियाँ : संज्ञा के अनावश्यक प्रयोग कर देने के कारण वाक्य में शिथिलता तथा भाषा में अशुद्धता आ जाती है।

जैसे- **अशुद्ध** - राम मेरा अनुज भाई है।

शुद्ध - राम मेरा अनुज है।

अशुद्ध - उसके चक्षुओं में दर्द है।

शुद्ध - उसके आँखों में दर्द है।

अशुद्ध - मैं सोमवार के दिन आपके गाँव आऊँगा।

शुद्ध - मैं सोमवार को आपके गाँव आऊँगा।

अन्य उदाहरण : हिन्दी के प्रचार में आज–भी **बड़े-बड़े संकट** हैं। (बड़ी-बड़ी बाधाएँ)

सीता ने गीत की दो-चार **लड़ियाँ** गायीं। (कड़ियाँ)

कृषि हमारी अर्थव्यवस्था **की रीढ़** है। (का आधार)

(2) सर्वनाम-सम्बंधी अशुद्धियाँ : संज्ञा की तरह सर्वनाम में भी पुरुष, लिंग, वचन आदि का अनुचित प्रयोग कर देने से, वाक्य अशुद्ध हो जाता है।

जैसे- **अशुद्ध** – वो तो कम आएगा।

शुद्ध – वह तो कल आएगा।

अशुद्ध – तुमने तुम्हारा कलम खो दिया।

शुद्ध – तुमने अपना कलम खो दिया।

अशुद्ध – वह तो गया किन्तु वह उसकी पुस्तक नहीं ले गया।

शुद्ध – वह तो गया किन्तु अपनी पुस्तकें नहीं ले गया।

अन्य उदाहरण : मेरे को यह बात पंसद नहीं। (मुझे)

आप **आपका** काम करो। (अपना)

(3) विशेषण-सम्बंधी अशुद्धियाँ : वाक्य में विशेषण के अनावश्यक प्रयोग से वाक्य में अशुद्धियाँ आ जाती है।

जैसे- **अशुद्ध** – राम की माँ भारी दु:खी है।

शुद्ध – राम की माँ बहुत दु:खी है।

अशुद्ध – मोहन कल सारी रातभर जागता रहा।

शुद्ध – मोहन कल रातभर जागता रहा।

अशुद्ध – उनका काम वास्तव में श्रेष्ठतम है।

शुद्ध – उनका काम वस्तुत: श्रेष्ठ है।

अन्य उदाहरण : उसे **भारी** प्यास लगी है। (बहुत)

जीवन और साहित्य का **घोर** सम्बंध है। (घनिष्ठ)

मुझे **बड़ी** भूख लगी है। (बहुत)

यह एक **गहरी** समस्या है। (गम्भीर)

(4) लिंग सम्बंधी अशुद्धियाँ :

जैसे- **अशुद्ध** – यह दही मीठी है।

शुद्ध – दही मीठा है।

अशुद्ध – आज तुमने नया पोशाक पहना है।

शुद्ध – तुमे नई पोशाक पहनी है।

अन्य उदाहरण : परीक्षा की प्रणाली **बदलना** चाहिए। (बदलनी)

हिन्दी की शिक्षा अनिवार्य कर **दिया गया।** (दी गयी)

लड़की ने जोर से हँस **दी।** (दिया)

दंगे में बालक, युवा, नर-नारी सब पकड़ी गयीं। (पकड़े गये)

(5) वचन सम्बंधी अशुद्धि :

जैसे- **अशुद्ध** – भारत में अनेकों राज्य हैं।

शुद्ध – भारत में अनेक राज्य हैं।

अशुद्ध – प्रत्येक वृक्ष फल देते हैं।

शुद्ध – प्रत्येक वृक्ष फल देता है।

अन्य उदाहरण : उसने अनेक प्रकार की **विद्या** सीखीं। (विधाएँ)

वे विविध **विषय** से परिचत हैं। (विषयों)

इस विषय पर एक भी अच्छी **पुस्तकें** नहीं है। (पुस्तक)

(6) क्रिया सम्बंधी अशुद्धि :

जैसे- **अशुद्ध** – राम और सीता वन को गई।

शुद्ध – राम और सीता वन को गए।

अशुद्ध – उनकी बातें सुनते-सुनते कान पक गया।

शुद्ध – उनकी बातें सुनते-सुनते कान पक गए।

अन्य उदाहरण : वह कुरता **डालकर** गया है। (पहनकर)

वह लड़का मोटर **हाँक** सकता है। (चला)

छोटी उम्र शिक्षा **लेने** के लिए है। (पाने)

(7) अव्यय सम्बंधी अशुद्धि :

उदाहरण : पुस्तक **विद्वतापूर्ण** लिखी गयी है। (विद्वतापूर्ण)

एकमात्र दो उपाय है। (केवल)

मैं पहुँचा ही था **जबकि** वह आ गया। (कि)

(8) पदक्रम सम्बंधी अशुद्धि :

उदाहरण : आप जाएँगे क्या? (क्या आप जाएँगे?)

कई बैंक के कर्मचारियों ने प्रदर्शन किया। (बैंक के कई कर्मचारियों)

भीड़ में **चार पटना के व्यक्ति** भी थे। (पटना के चार व्यक्ति)

छात्रों ने मुख्य अतिथि को **एक फूलों की माला** पहनाई। (फूलों की एक मा...)

(9) पुनरुक्ति सम्बंधी अशुद्धि :

उदाहरण : मैं तुम्हारी मदद कर सकता हूँ **बशर्ते कि** तुम मेरा कहा मानो। (...शर्त है कि)

साहित्य के क्षेत्र में **महिला लेखिकाओं** की संख्या कम है। (लेखिकाओं/महिला लेखकों)

प्रात:काल के समय टहलना चाहिए। (प्रात:काल/प्रात:समय)

आपका भवदीय। (आपका/भवदीय)

राजस्थान का **अधिकांश भाग** रेतीला है। (अधिकांश/अधिक भाग)

नौजवान युवकों को दहेज प्रथा का विरोध करना चाहिए। (नौजवानों/युवकों)

(10) शब्द-ज्ञान सम्बंधी अशुद्धि :

उदाहरण : बाण बड़ा उपयोगी **शस्त्र** है। (अस्त्र)

लाठी बड़ा उपयोगी **अस्त्र** है। (शस्त्र)

चिड़िया **गा** रही है। (चहक)

वह नित्य गाने **की कसरत** करता है। (का अभ्यास/का रियाज)

इस समय सीता की **आयु** सोलह वर्ष है। (उम्र/अवस्था)

कर्मवान व्यक्ति को सफलता अवश्य मिलती है। (कर्मवीर)

(11) कारक सम्बंधी अशुद्धि :

जैसे- **अशुद्ध** – राम पुस्तक को पढ़ता है।
शुद्ध – राम पुस्तक पढ़ता है।
अशुद्ध – मोर के पंख सुंदर होता है।
शुद्ध – मोर के पंख सुंदर होते हैं।
अशुद्ध – माँ से कहानी सुनाई।
शुद्ध – माँ ने कहानी सुनाई।

अन्य उदाहरण : मैंने राम **को** पूछा। (से)
सब **से** नमस्ते। (को)

रामायण **का** टीका। (की)

देश **की** सम्मान की रक्षा करो। (के)

जनता **के** अंदर असंतोष फैल गया। (में)

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

किसी भी भाषा की मूलभूत इकाई होती है।
(क) संकेत (ख) वाक्य (ग) ध्वनि (घ) शब्द

रचना या रूप के आधार पर वाक्य होते हैं।
(क) दो (ख) तीन (ग) छह (घ) चार

3. अर्थ के आधार पर वाक्य होते हैं।
(क) आठ (ख) चार (ग) तीन (घ) छह

4. मौखिक अभिव्यक्ति का संबंध होता है।
(क) श्रवण करने से (ख) उच्चारण से (ग) कहने से (घ) बोलने से

लिखित अभिव्यक्ति का संबंध होता है।
(क) वाक्यों से (ख) शब्दों से
(ग) भावों से (घ) मात्रा अथवा वर्तनी से

वाक्य के अवयव हैं।
(क) उद्देश्य (ख) विधेय
(ग) उद्देश्य एवं विधेय (घ) कोई नहीं।

7. वाक्य के तत्व होते हैं।
(क) आकांक्षा (ख) योग्यता (ग) क्रम (घ) सभी

इनमें से शुद्ध शब्द है।
(क) पूज्यनीय (ख) माधुर्यता (ग) चिड़िया (घ) अनुकूल

9. 'जो लड़के अच्छे होते हैं, वे परिश्रमी होते हैं। यह किस प्रकार का वाक्य है?
(क) सरल (ख) संयुक्त
(ग) मिश्र (घ) इनमें से कोई नहीं।

सूर्योदय हुआ और कुहासा जाता रहा।
(क) सरल (ख) संयुक्त (ग) मिश्र (घ) सभी

निम्नलिखित वाक्यों में कौन-सा मिश्र वाक्य है?
(क) हर तरह के संकटों से घिरा रहने पर भी वह निराश नहीं हुआ।
(ख) यद्यपि वह हर तरह के संकट से घिरा था, तथापि निराश नहीं हुआ।
(ग) संकटों ने उसे हर तरह से घेरकर भी निराश नहीं किया।
(घ) संकटों से घिरा रहने पर भी वह आशावान बना रहा।

12. 'कृपया जाएँ।' यह कैसा वाक्य है?
(क) प्रश्नसूचक (ख) अनुरोधवाचक
(ग) आज्ञार्थक (घ) निषेधात्मक

13. 'परीक्षा में चोरी मत करो।' इस वाक्य में 'मत' कौन निपात है?
(क) निषेधवाचक (ख) बलदायक
(ग) अवधारणबोधक (घ) प्रश्नबोधक

14. निम्नलिखित में से कौन-सा वाक्य शुद्ध है?
(क) श्रीकृष्ण के अनेकों नाम हैं।
(ख) कई रेलवे के कर्मचारियों की गिरफ्तारी हुई।
(ग) साहित्य और जीवन का घोर सम्बंध है।
(घ) कृपया आप ही यह बताएँ।

15. निम्नलिखित में से अशुद्ध वाक्य छाँटिए।
(क) मैंने सूई, कंघी, दर्पण और पुस्तकें मोल ली।
(ख) यह कविता अनेक भाव प्रकट करती है।
(ग) मैं आपका दर्शन करने आया हूँ।
(घ) मैं आप पर श्रद्धा रखता हूँ।

16. इनमें 'आज्ञार्थक वाक्य' कौन सा है?
(क) भारत एक महान देश है।
(ख) वह अपना काम पूरा नहीं कर पाया।
(ग) उसने सबको आमंत्रित किया होगा।
(घ) आपको यह कार्य तुरंत कर लेना चाहिए।

17. इनमें 'मिश्र वाक्य' कौन सा है?
(क) उसने चार दिन से खाना नहीं खाया।
(ख) मैं जानता हूँ कि वह घर चला गया है।
(ग) दो लड़के सामने वाले कमरे में व्याकरण की पुस्तक पढ़ रहे हैं।
(घ) चार कमरों के इस मकान में वह अकेला रहता है।

18. इनमें वाक्य रचना से सम्बंधित कौन सा कथन सही नहीं है?
(क) सार्थक शब्द - समूह को वाक्य कहते हैं।
(ख) वाक्य में कर्त्ता और क्रिया का महत्वपूर्ण स्थान है।
(ग) उद्देश्य और विधेय वाक्य के अनिवार्य घटक हैं।
(घ) क्रिया को उद्देश्य और कर्त्ता को विधेय कहते हैं।

19. व्याकरण की दृष्टि से कौन सा वाक्य सही है?
(क) बीमारी के कारण वह उपस्थित नहीं हो सका।
(ख) वसंत के मौसम में फूल खिलने से कौन रोक सकता है।
(ग) सूक्ष्म निरीक्षण से हम बहुत सी बातों को सीखते हैं।
(घ) मैं वहाँ पहुँचा ही था जबकि आप आ गए।

20. राम क्रिकेट खेलता है पर अच्छा नहीं।
(क) सरल वाक्य (ख) संयुक्त वाक्य
(ग) इनमें से कोई नहीं (घ) मिश्र वाक्य

21. ईश्वर तुम्हें सफलता दे।
(क) प्रश्नवाचक वाक्य (ख) इच्छावाचक वाक्य
(ग) आज्ञावाचक वाक्य (घ) विस्मयवाचक वाक्य

22. यदि सही दिशा में परिश्रम करोगे तो अवश्य सफल हो जाओगे।
(क) सरल वाक्य (ख) संयुक्त वाक्य
(ग) मिश्र वाक्य (घ) इनमें से कोई नहीं।

23. 'वर्षा हो रही है।'
(क) निषेधवाचक वाक्य (ख) विधानवाचक वाक्य
(ग) विस्मयवाचक वाक्य (घ) आज्ञावाचक वाक्य

24. 'वाह! कितना सुन्दर दृश्य है।'
(क) इच्छावाचक वाक्य (ख) आज्ञावाचक वाक्य
(ग) निषेधवाचक वाक्य (घ) विस्मयवाचक वाक्य

25. 'सार्थक शब्दों का व्यवस्थित समूह जिससे आपेक्षित अर्थ प्रकट होता है। क्या कहलाता है?
(क) वाक्य (ख) पाठ (ग) अनुराग (घ) सभी

उत्तरमाला

1. (ख), 2. (ख), 3. (क), 4. (ख), 5. (घ), 6. (ग),
7. (घ), 8. (ग), 9. (ग), 10. (ख), 11. (ख), 12. (ग),
13. (क), 14. (घ), 15. (ग), 16. (घ), 17. (ख), 18. (घ),
19. (क), 20. (ख) 21. (ख), 22. (ग), 23. (ख), 24. (घ),
25. (क)

■■■

8

अनुवाद : अर्थ एवं प्रकार

एक भाषा- पाठ में निहित अर्थ या संदेश को दूसरे भाषा – पाठ में यथावत् व्यक्त करना अर्थात् एक भाषा में कही गई बात को दूसरी भाषा में कहना अनुवाद है।

अनुवाद का अर्थ :

अनुवाद शब्द संस्कृत की 'वद्' धातु में 'घ' प्रत्यय एवं 'अनु' उपसर्ग लगने से बना है। 'अनु' उपसर्ग का अर्थ है – पीछे और वद धातु या वाद का अर्थ है– कथन, विचार-विमर्श, बोलना, भाषण आदि।

इस प्रकार अनुवाद शब्द का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ है – 'अनुकथन' या किसी के द्वारा कहने के बाद उसी बात को दोबारा अधिक स्पष्ट करते हुए कहना अथवा पुनः कथन।

कालिका प्रसाद द्वारा सम्पादित 'बृहतकोष' में अनुवाद का अर्थ है – ''फिर से कहना, व्याख्या या समर्थन रूप में पुनरुक्ति, समर्थन अपशब्द, उल्था, भाषांतर।''

भार्गव हिन्दी शब्दकोष में अनुवाद का अर्थ दिया है – पुनरुल्लेख, दोहराव, अनुकरण, निंदा, भाषांतर आदि।

डॉ. रसाल द्वारा सम्पादित 'भाषा शब्दकोष' में अनुवाद से अभिप्राय है – ''वाक्य का वह भेद जिसमें कही गई बात का पुनः-पुनः कथन हो।''

इस प्रकार संस्कृत का 'अनुवाद' शब्द ''किसी एक भाषा में कही गई बात को बोलचाल की प्रचलित भाषा में कहना'' के अर्थ में प्रयुक्त होता था। इसलिए इसे 'भाषा करना' अथवा 'भाषा में कहना' कहा जाता था।

अंग्रेजी विद्वान मोनियर विलियम्स ने सर्वप्रथम अंग्रेजी में 'translation' शब्द का प्रयोग किया था। 'अनुवाद' के पर्याय के रूप में स्वीकृत अंग्रेजी 'translation' शब्द लैटिन के 'trans' तथा 'lation' के संयोग से बना है, जिसका अर्थ है 'पार ले जाना' – यानि एक स्थान बिन्दु से दूसरे स्थान बिन्दु पर ले जाना। जहाँ एक स्थान बिन्दु 'स्त्रोत-भाषा' या 'Source language' है तो दूसरा स्थान बिन्दु 'लक्ष्य-भाषा' या 'Target language' है और ले जाने वाली वस्तु मूल या स्त्रोत भाषा में निहित अर्थ या संदेश होती है।

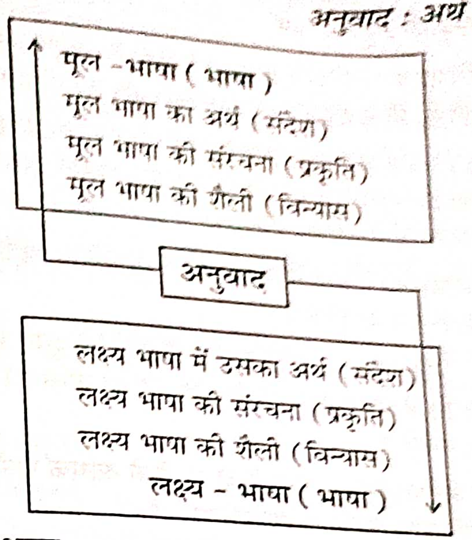

स्त्रोत और लक्ष्य भाषा

स्त्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा का प्रयोग अनुवाद के संदर्भ में किया जाता है। एक भाषा का दूसरी भाषा में कथन अर्थात् एक भाषा के कथन को दूसरी भाषा के कथन में परिवर्तित करना अनुवाद कहलाता है।

अनुवाद के प्रसंग में कम से कम दो भाषाओं का होना अनिवार्य है। इस अनुवाद प्रक्रिया में ''जिस भाषा से अनुवाद किया जाता है उसे स्त्रोत भाषा कहते हैं, तथा जिस भाषा में अनुवाद किया जाता है उसे लक्ष्य भाषा कहते हैं।''

जैसे : अंग्रेजी भाषा में कही गयी बात को हिन्दी में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाए कि दोनों का अर्थ एक ही हो, दोनों का भाव व उद्देश्य एक ही हो।

Tulsidas is a great poet. (अंग्रेजी) (स्त्रोत भाषा)

तुलसीदास एक महान कवि है। (हिन्दी) (लक्ष्य भाषा)

स्त्रोत भाषा को मूल भाषा या मूल पाट और लक्ष्य भाषा को अन्य भाषा या अनुवादित पाट (भाग) भी कहा जाता है। **उदाहरण : कालिदास की रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद लीजिए इसमें संस्कृत स्त्रोत भाषा कहलाएगी और हिन्दी, लक्ष्य भाषा कहलाएगी।**

कोई भी अनुवाद स्त्रोत भाषा की सामग्री को लक्ष्य भाषा में सावधानी से पुनः प्रस्तुत करता है। इसी दृष्टि से एक अनुवादक के लिए स्त्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा दोनों का अच्छा ज्ञान होना अति आवश्यक है।

अनुवाद की परिभाषा:

1. नाइडा : ''अनुवाद का तात्पर्य है स्त्रोत-भाषा में व्यक्त संदेश के लिए लक्ष्य-भाषा में निकटतम सहज समतुल्य संदेश को प्रस्तुत करना। यह समतुल्यता पहले तो अर्थ के स्तर पर होती है फिर शैली के स्तर पर।''

2. जॉन कनिंगटन : ''लेखक ने जो कुछ कहा है, अनुवादक को उसके अनुवाद का प्रयत्न तो करना ही है, जिस ढंग से कहा, उसके निर्वाह का भी प्रयत्न करना चाहिए।''

3. कैटफोड : ''एक भाषा की पाठ्य सामग्री को दूसरी भाषा की समानार्थक पाठ्य सामग्री से प्रतिस्थापना ही अनुवाद है।'' (i) मूल-भाषा (भाषा), (ii) मूल भाषा का अर्थ (संदेश), (iii) मूल भाषा की संरचना (प्रकृति)।

4. सैमुएल जॉनसन : ''मूल भाषा की पाठ्य सामग्री के भावों की रक्षा करते हुए उसे दूसरी भाषा में बदल देना अनुवाद है।''

5. फॉरेस्टन : ''एक भाषा की पाठ्य सामग्री के तत्वों को दूसरी भाषा में स्थानान्तरित कर देना अनुवाद कहलाता है यह ध्यातव्य है कि हम तत्व या कथ्य को संरचना (रूप) से हमेशा अलग नहीं कर सकते हैं।''

6. हैलिडे : ''अनुवाद एक सम्बन्ध है दो या दो से अधिक पाठों के बीच होता है, ये पाठ समान स्थिति में समान प्रकार्य सम्पादित करते हैं।''

7. न्यूमार्क : ''अनुवाद एक शिल्प है, जिसमें एक भाषा में व्यक्त संदेश के स्थान पर दूसरी भाषा के उसी संदेश को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है।''

8. देवेन्द्रनाथ शर्मा : ''विचारों को एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपांतरित करना अनुवाद है।''

9. भोलानाथ तिवारी : ''किसी भाषा में प्राप्त सामग्री को दूसरी भाषा में भाषान्तरण करना अनुवाद है, दूसरे शब्दों में एक भाषा में व्यक्त विचारों को यथा सम्भव और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दूसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास ही अनुवाद है।''

10. पट्टनायक : ''अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सार्थक अनुभव (अर्थपूर्ण संदेश या संदेश का अर्थ) को एक भाषा-समुदाय से दूसरी भाषा-समुदाय में सम्प्रेषित किया जाता है।''

11. रीतारानी पालीवाल : ''स्त्रोत-भाषा में व्यक्त प्रतीक व्यवस्था को लक्ष्य-भाषा की सहज प्रतीक व्यवस्था में रूपान्तरित करने का कार्य अनुवाद है।''

12. दंगल झाल्टे : ''स्त्रोत भाषा के मूल पाठ के अर्थ को लक्ष्य-भाषा के परिनिष्ठत पाठ के रूप में रूपान्तरण करना अनुवाद है।''

13. बालेन्दु शेखर : ''अनुवाद एक भाषा समुदाय के विचार और अनुभव सामग्री को दूसरी भाषा समुदाय की शब्दावली में लगभग यथावत् सम्प्रेषित करने की सोद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है।''

14. डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव : ''एक भाषा (स्त्रोत भाषा) की पाठ्य सामग्री में अंतर्निहित तथ्य का समतुल्यता के सिद्धांत के आधार पर दूसरी भाषा (लक्ष्य भाषा) में संगठनात्मक रूपान्तरण अथवा सर्जनात्मक पुनर्गठन ही अनुवाद कहा जाता है।''

अनुवाद के क्षेत्र

आज की दुनिया में अनुवाद का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है। शायद ही कोई क्षेत्र बचा हो जिसमें अनुवाद की उपादेयता को सिद्ध न किया जा सके। इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि आधुनिक युग के जितने भी क्षेत्र हैं सबके सब अनुवाद के भी क्षेत्र हैं, चाहे न्यायालय हो या कार्यालय, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी हो या शिक्षा, संचार हो या पत्रकारिता, साहित्य का हो या सांस्कृतिक सम्बन्ध। इन सभी क्षेत्रों में अनुवाद की महत्ता एवं उपादेयता को सहज ही देखा-परखा जा सकता है।

भूमण्डलीकरण ने अनुवाद को भी अन्तर्राष्ट्रीय बना दिया। इसका भौगोलिक क्षेत्र भी अत्यंत व्यापक है और वस्तुगत क्षेत्र भी अत्यंत विस्तृत है। इसके क्षेत्र को इन रूपों में देखा जा सकता है :

1. कार्यालयीन अनुवाद
2. प्रशासनिक अनुवाद
3. व्यापारिक - वाणिज्यिक अनुवाद
4. मीडिया और पत्रकारिता के क्षेत्र में अनुवाद
5. साहित्य की प्रत्येक विधा का अनुवाद
6. एक विधा का दूसरी विधा में अनुवाद
7. विधि (कानून) के क्षेत्र में अनुवाद
8. शिक्षा का क्षेत्र
9. तकनीकी (प्रौद्योगिकी) क्षेत्र में अनुवाद
10. कम्प्यूटर एवं जनसंचार माध्यमों के क्षेत्र में अनुवाद
11. सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अनुवाद
12. मौखिक या बोलचाल की भाषा का अनुवाद (द्विभाषिया)
13. अन्तरर्राष्ट्रीय सम्बंध - राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक - साहित्यिक एवं आर्थिक क्षेत्र में अनुवाद।
14. वैज्ञानिक क्षेत्र में अनुवाद
15. कला एवं साहित्य क्षेत्र में अनुवाद

अनुवाद के प्रकार या भेदः

1. सीमा के आधार पर : (क) पूर्ण अनुवाद (Full Translation) (ख) आंशिक अनुवाद (Partial Translation)।

2. भाषिक स्तर के आधार पर : (क) समग्रता में अनुवाद (Total Translation) (ख) निर्बद्ध अनुवाद (Restricted Translation)।

3. श्रेणी या पद के आधार पर : (i) मुक्त अनुवाद (Free Translation) (ii) शब्दानुवाद (Literal Translation)।

वैज्ञानिक आधार के अतिरिक्त अन्य आधारों पर भी अनुवाद के भेद या प्रकार कर सकते हैं। इनमें से प्रमुख आधार इस प्रकार हैं :

1. वाङ्मय के आधार पर : (i) ज्ञान का साहित्य (ii) शक्ति का (भावाश्रित) साहित्य।

2. गद्य-पद्य के आधार पर : (i) पद्यानुवाद (ii) गद्यानुवाद (iii) छंदबद्ध अनुवाद (iv) छंदमुक्त अनुवाद।

3. विधा के आधार पर : (i) काव्यानुवाद (ii) नाट्यानुवाद (iii) कथानुवाद (iv) अन्य साहित्यिक विधाओं का अनुवाद जैसे : आत्मकथा।

4. विषय के आधार पर : (i) ललित साहित्य का अनुवाद (ii) धार्मिक पौराणिक साहित्य का अनुवाद (iii) साहित्यिक अनुवाद (iv) गणित का अनुवाद (v) अभिलेखों, गजेटियरों आदि का अनुवाद (vi) प्रशासनिक अनुवाद (v) काव्यशास्त्रीय तथा भाषा वैज्ञानिक विषयों से सम्बंधित अनुवाद।

5. प्रकृति के आधार पर : (i) शब्दानुवाद (ii) भावानुवाद (iii) छायानुवाद (iv) रूपान्तरण (v) सारानुवाद (vi) भाषा या टीकापरक अनुवाद (vii) आशु अनुवाद (viii) लिप्येकन (Transcription) (ix) लिप्यंतरण (Transliteration)।

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार अनुवादों के भेदों का उल्लेख इस प्रकार है-

1. साहित्य की शैलियों अथवा गद्यत्व-पद्यत्व के आधार पर : (i) गद्यानुवाद (ii) पद्यानुवाद।

2. साहित्यिक विद्याओं के आधार पर : (i) काव्यानुवाद (ii) नाट्यानुवाद।

3. विषय के आधार पर : प्रमुख छः भेद हैं – (i) ललित साहित्य का अनुवाद (ii) धार्मिक-पौराणिक साहित्य का अनुवाद (iii) विधि साहित्य का अनुवाद (iv) समाजशास्त्रीय साहित्य का अनुवाद (v) प्रशासनिक साहित्य का अनुवाद (vi) वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य का अनुवाद।

अनुवाद का महत्व:

अनुवाद सदियों से ही देशकाल निरपेक्ष स्तर पर मानव-मानव के मध्य के अजनबीपन को दूर करता आया है। सुदूर अतीत में दूर-दराज के देशों के मध्य आपसी व्यापार के प्रमाण मिलते हैं। बौद्ध जातक कथाओं में भारत के अन्य देशों के साथ ऐसे ही व्यापार सम्बन्धी विवरण मिलते हैं। स्वाभाविक है कि व्यापारी वर्ग परस्पर अपने देशों में आदान-प्रदान हेतु अनुवाद पर ही निर्भर करता है। भारत की पंचतंत्र की कहानियाँ यहाँ से अरब देशों में गई और वहाँ से होते हुए पश्चिम देशों में पहुँची, जिनका अनुवादित रूप 'अरेबियन नाइट्स' नाम से आज [illegible] समय में रहा होगा।

आधुनिक युग में अनुवाद ही एकमात्र ऐसा साधन है जो विश्व के सभी देशों के निकट लाने में सहायक है। अनुवाद ही प्रत्येक प्रतिभा और विचार को विश्वव्यापी बना रहा है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि आधुनिक युग में जितना महत्व अनुसंधान का है उतना ही महत्व अनुवाद का है। जैसे :

1. भाषाओं में समीपता लाने में सहायक : अनुवाद दो भाषाओं में समीपता लाने का कार्य करता है। अनुवाद को भाषाओं का समीकरण भी कहा जाता है।

2. शब्द भण्डार में वृद्धि करने में सहायक : अनुवाद प्रक्रिया में शब्द भण्डार विकसित होते हैं। जिससे अभिव्यक्ति में भी निपुणता आती है।

3. विभिन्न भाषाओं के साहित्य को जानने में सहायक : अनुवाद प्रक्रिया के माध्यम से विभिन्न भाषाओं के साहित्य को भी जानने में सहायता मिलती है।

4. ज्ञान-वृद्धि करने में सहायक : अनुवाद जहाँ एक तरफ शब्द भण्डार को बढ़ाता है वहीं दूसरी तरफ हमारे ज्ञान को भी बढ़ाता है।

5. भावात्मक एकता स्थापित करने में सहायक : अनुवाद को भावात्मक एकता स्थापित करने का अत्यंत सबल साधन माना जाता है।

अनुवाद के उद्देश्य:

1. मातृभाषा के ज्ञान के अतिरिक्त अन्य भाषा के शब्दों एवं वाक्यों के निर्माण की जानकारी प्राप्त करना।
2. विभिन्न भाषाओं के साहित्य से परिचित होने के अवसर प्राप्त होना।
3. शब्द भण्डार में वृद्धि करना।
4. विचार-विनिमय।
5. दूसरी भाषाओं की शैलियों, मुहावरों, दार्शनिक तथ्यों, वैज्ञानिक एवं तकनीको ज्ञान की प्राप्ति।

अच्छे अनुवाद की विशेषताएँ:

1. अच्छे अनुवाद में अभिव्यक्ति सुबोध; प्राजंल तथा प्रवाहमय होती है। साथ ही प्रामाणिकता के लिए शाब्दिक और वास्तविक परिशुद्धता भी होना आवश्यक है।
2. जिस अनुवाद में स्त्रोत भाषा में कथित अभिव्यक्ति ज्यों-की-त्यों लक्ष्य भाषा में आ जाए, वह उत्तम कोटि का अनुवाद होता है।
3. अच्छे अनुवाद में यह भी प्रयत्न किया जाना चाहिए कि मूल रचना की शैली सुरक्षित रहे। मूल रचना की शैली सुरक्षित रखने का तात्पर्य यह नहीं है कि केवल शाब्दिक अनुवाद कर दिया जाए।
4. अनुवाद की भाषा स्त्रोत भाषा की प्रकृति के अनुरूप हो। यदि स्त्रोत भाषा में कोई मुहावरा है तो उस मुहावरे की प्रकृति से मिलता हुआ मुहावरा लक्ष्य भाषा अनुवाद में भी प्रयुक्त किया जाना चाहिए। इससे स्वाभाविक प्रवाह बना रहता है।

3. श्रेणी या पद के आधार पर : (i) मुक्त अनुवाद (Free Translation) (ii) शब्दानुवाद (Literal Translation)।

वैज्ञानिक आधार के अतिरिक्त अन्य आधारों पर भी अनुवाद के भेद या प्रकार कर सकते हैं। इनमें से प्रमुख आधार इस प्रकार हैं :

1. वाङ्मय के आधार पर : (i) ज्ञान का साहित्य (ii) शक्ति का (भावाश्रित) साहित्य।

2. गद्य-पद्य के आधार पर : (i) पद्यानुवाद (ii) गद्यानुवाद (iii) छंदबद्ध अनुवाद (iv) छंदमुक्त अनुवाद।

3. विधा के आधार पर : (i) काव्यानुवाद (ii) नाट्यानुवाद (iii) कथानुवाद (iv) अन्य साहित्यिक विधाओं का अनुवाद जैसे : आत्मकथा।

4. विषय के आधार पर : (i) ललित साहित्य का अनुवाद (ii) धार्मिक पौराणिक साहित्य का अनुवाद (iii) साहित्यिक अनुवाद (iv) गणित का अनुवाद (v) अभिलेखों, गजेटियरों आदि का अनुवाद (vi) प्रशासनिक अनुवाद (v) काव्यशास्त्रीय तथा भाषा वैज्ञानिक विषयों से सम्बंधित अनुवाद।

5. प्रकृति के आधार पर : (i) शब्दानुवाद (ii) भावानुवाद (iii) छायानुवाद (iv) रूपान्तरण (v) सारानुवाद (vi) भाषा या टीकापरक अनुवाद (vii) आशु अनुवाद (viii) लिप्येकन (Transcription) (ix) लिप्यंतरण (Transliteration)।

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार अनुवादों के भेदों का उल्लेख इस प्रकार है-

1. साहित्य की शैलियों अथवा गद्यत्व-पद्यत्व के आधार पर : (i) गद्यानुवाद (ii) पद्यानुवाद।

2. साहित्यिक विद्याओं के आधार पर : (i) काव्यानुवाद (ii) नाट्यानुवाद।

3. विषय के आधार पर : प्रमुख छः भेद हैं – (i) ललित साहित्य का अनुवाद (ii) धार्मिक-पौराणिक साहित्य का अनुवाद (iii) विधि साहित्य का अनुवाद (iv) समाजशास्त्रीय साहित्य का अनुवाद (v) प्रशासनिक साहित्य का अनुवाद (vi) वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य का अनुवाद।

अनुवाद का महत्वः

अनुवाद सदियों से ही देशकाल निरपेक्ष स्तर पर मानव-मानव के मध्य के अजनबीपन को दूर करता आया है। सुदूर अतीत में दूर-दराज के देशों के मध्य आपसी व्यापार के प्रमाण मिलते हैं। बौद्ध जातक कथाओं में भारत के अन्य देशों के साथ ऐसे ही व्यापार सम्बन्धी विवरण मिलते हैं। स्वाभाविक है कि व्यापारी वर्ग परस्पर अपने देशों में आदान-प्रदान हेतु अनुवाद पर ही निर्भर करता है। भारत की पंचतंत्र की कहानियाँ यहाँ से अरब देशों में गई और वहाँ से होते हुए पश्चिम देशों में पहुँची, जिनका अनुवादित रूप 'अरेबियन नाइट्स' नाम से आज भी उतना ही लोकप्रिय है, जितना कि उस समय में रहा होगा।

आधुनिक युग में अनुवाद ही एकमात्र ऐसा साधन है जो विश्व के सभी देशों के निकट लाने में सहायक है। अनुवाद ही प्रत्येक प्रतिभा और विचार को विश्वव्यापी बना रहा है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि आधुनिक युग में जितना महत्व अनुसंधान का है उतना ही महत्व अनुवाद का है। **जैसे :**

1. भाषाओं में समीपता लाने में सहायक : अनुवाद दो भाषाओं में समीपता लाने का कार्य करता है। अनुवाद को भाषाओं का समीकरण भी कहा जाता है।

2. शब्द भण्डार में वृद्धि करने में सहायक : अनुवाद प्रक्रिया में शब्द भण्डार विकसित होते हैं। जिससे अभिव्यक्ति में भी निपुणता आती है।

3. विभिन्न भाषाओं के साहित्य को जानने में सहायक : अनुवाद प्रक्रिया के माध्यम से विभिन्न भाषाओं के साहित्य को भी जानने में सहायता मिलती है।

4. ज्ञान-वृद्धि करने में सहायक : अनुवाद जहाँ एक तरफ शब्द भण्डार को बढ़ाता है वहीं दूसरी तरफ हमारे ज्ञान को भी बढ़ाता है।

5. भावात्मक एकता स्थापित करने में सहायक : अनुवाद को भावात्मक एकता स्थापित करने का अत्यंत सबल साधन माना जाता है।

अनुवाद के उद्देश्यः

1. मातृभाषा के ज्ञान के अतिरिक्त अन्य भाषा के शब्दों एवं वाक्यों के निर्माण की जानकारी प्राप्त करना।
2. विभिन्न भाषाओं के साहित्य से परिचित होने के अवसर प्राप्त होना।
3. शब्द भण्डार में वृद्धि करना।
4. विचार-विनिमय।
5. दूसरी भाषाओं की शैलियों, मुहावरों, दार्शनिक तथ्यों, वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान की प्राप्ति।

अच्छे अनुवाद की विशेषताएँ:

1. अच्छे अनुवाद में अभिव्यक्ति सुबोध; प्रांजल तथा प्रवाहमय होती है। साथ ही प्रामाणिकता के लिए शाब्दिक और वास्तविक परिशुद्धता भी होना आवश्यक है।
2. जिस अनुवाद में स्त्रोत भाषा में कथित अभिव्यक्ति ज्यों-की-त्यों लक्ष्य भाषा में आ जाए, वह उत्तम कोटि का अनुवाद होता है।
3. अच्छे अनुवाद में यह भी प्रयत्न किया जाना चाहिए कि मूल रचना की शैली सुरक्षित रहे। मूल रचना की शैली सुरक्षित रखने का तात्पर्य यह नहीं है कि केवल शाब्दिक अनुवाद कर दिया जाए।
4. अनुवाद की भाषा स्त्रोत भाषा की प्रकृति के अनुरूप हो। यदि स्त्रोत भाषा में कोई मुहावरा है तो उस मुहावरे की प्रकृति से मिलता हुआ मुहावरा लक्ष्य भाषा अनुवाद में भी प्रयुक्त किया जाना चाहिए। इससे स्वाभाविक प्रवाह बना रहता है।

5. अच्छे अनुवाद की भाषा समय में आने योग्य और सुबोध हो। भाषा के सौन्दर्य का निर्वाह करते हुए ही अनुवाद सामग्री के विचार और भावों को सुरक्षित रखना अपेक्षित है।

6. अच्छे अनुवाद के लिए आवश्यक है कि अनुवादक को अनुवाद की जाने वाली सामग्री की विषय-वस्तु का अच्छा ज्ञान हो, सामग्री की ज्ञानात्मक चेतना हो।

7. स्त्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा पर पूरा अधिकार हो, दोनों भाषाओं की संरचनात्मक बनावट, पदबंध प्रयोग, वाक्य-गठन आदि की पूरी समझ हो।

ऐसा होने पर ही अनुवादक स्त्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में सहज और प्रवाहमय अनुवाद कर सकेगा।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. अनुवाद का क्या अर्थ है?
(क) एक भाषा की सामग्री को दूसरी भाषा में रूपांतरित करना।
(ख) अंग्रेजी की सामग्री को हिन्दी में लिखना।
(ग) शैली का अनुकरण करना।
(घ) भाषान्तर करना।

2. अनुवाद में किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है?
(क) पाठ सामग्री, समानार्थक शब्द और पुर्नस्थापना।
(ख) शब्द, भाव और अर्थ।
(ग) पाठ सामग्री, भाषा का ज्ञान और शब्द का बोध।
(घ) देश की संस्कृति, परंपरा और भाषा।

3. स्त्रोत भाषा का अर्थ है :
(क) जिस भाषा से अनुवाद किया जाना है।
(ख) जिस भाषा में अनुवाद किया जाना है।
(ग) लक्ष्य भाषा।
(घ) शब्द कोश।

4. किस ग्रंथ/ कोश में अनुवाद का अर्थ ''प्राप्तस्य पुन: कथने'' (पहले कहे गए को फिर से कहना) या ''ज्ञातार्थस्य प्रतिपादने'' (ज्ञात अर्थ को प्रतिपादित करना) अर्थ दिया है।
(क) शब्दार्थ चिन्तामणि (ख) शब्दानुशासन
(ग) शब्दकोश (घ) इनमें से कोई नहीं।

5. ऋग्वेद से लेकर ब्राहाण ग्रंथों, उपनिषदों, व्याकरण-ग्रंथों आदि में 'अनुवाद' का अर्थ लिया गया है :
(क) ज्ञात को कहना (ख) सार्थक आवृत्ति
(ग) पश्चात्कथन (घ) इनमें से सभी

6. पाणिनी ने 'अष्टाध्यायी' में 'अनु' शब्द का अर्थ लिया है :
(क) पीछे-पीछे (ख) किनारे-किनारे (ग) साथ-साथ (घ) सभी

7. अनुवाद के पर्याय के रूप में स्वीकृत 'Translation' (ट्रॉन्सलेशन) शब्द किस भाषा का है?
(क) अंग्रेजी (ख) लैटिन (ग) पुर्तगाली (घ) फ्रेंच

8. ''समतुल्यता पहले तो अर्थ के स्तर पर होती है फिर शैली के स्तर पर।'' किसके द्वारा कहा गया है?
(क) नाइडा (ख) हैलिडे (ग) न्यूमार्क (घ) जॉनसन

9. मूल-भाषा (भाषा), मूल भाषा का अर्थ (संदेश) एवं मूलभाषा की संरचना (प्रकृति) अनुवाद के संदर्भ में किसका मत है।
(क) कैटफोड (ख) जॉनसन (ग) हैलिडे (घ) न्यूमार्क

10. अनुवाद प्रक्रिया के दौरान किन दो भाषा प्रक्रिया का होना अनिवार्य होता है?
(क) स्त्रोत एवं लक्ष्य भाषा (ख) स्त्रोत भाषा
(ग) लक्ष्य भाषा (घ) इनमें से कोई नहीं।

11. लक्ष्य भाषा का अर्थ है :
(क) जिस भाषा से अनुवाद किया जाना है।
(ख) जिस भाषा में अनुवाद किया जाना है।
(ग) लक्ष्य भाषा (घ) शब्द कोश

12. ''विचारों को एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपान्तरित करना अनुवाद है।'' किसके द्वारा परिभाषा दी गई है?
(क) भोलानाथ तिवारी (ख) पट्टनायक
(ग) देवन्द्रनाथ शर्मा (घ) श्यामसुन्दर दास

13. अनुवाद को 'सांस्कृतिक सेतु' क्यों कहा गया है? प्रमुख कारण है।
(क) मानव-मानव को एक दूसरे के निकट लाने में सहायक के रूप में।
(ख) विश्वबंधुत्व की स्थापना की भूमिका में।
(ग) राष्ट्रीय एकता को बरकरार रखने की दृष्टि में।
(घ) इनमें से सभी कारण है।

14. विषय के आधार पर अनुवाद के भेद हैं :
(क) ललित साहित्य का अनुवाद।
(ख) पत्रकारिता से सम्बंधित विषयों का अनुवाद।
(ग) प्रशासनिक क्षेत्र में अनुवाद। (घ) इनमें से सभी।

15. प्रकृति के आधार पर अनुवाद के भेद हैं :
(क) शब्दानुवाद (ख) भावानुवाद (ग) छायानुवाद (घ) सभी

16. आशु अनुवादक को किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
(क) भाषा ज्ञान गहन एवं अत्यंत प्रामाणिक होना चाहिए।
(ख) किसी भी भाषा, वार्ता, अनुबंध आदि का अनुवाद कोश या संदर्भ ग्रंथों की सहायता से करना चाहिए।
(ग) भाषा के साथ-साथ उस देश का इतिहास, संस्कृति एवं समाज की जानकारी भी आवश्यक होती है।
(घ) इनमें से सभी।

17. 'लिपि में अंकन' अर्थात् लक्ष्य भाषा की लिपि में स्त्रोत भाषा के उच्चारण के अनुरूप अंकन या लेखन कहलाता है।
(क) लिप्यंतरण (ख) लिप्यंकन (ग) शब्दानुवाद (घ) भावानुवाद

18. स्त्रोत भाषा की वर्तनी में जो लिपि चिन्ह प्रयुक्त हुए हैं उनके लिए लक्ष्य भाषा में लिपिबद्ध करना कहलाता है?
(क) लिप्यंकन (ख) लिप्यंतरण (ग) भावानुवाद (घ) छायानुवाद

19. किसी मूल रचना के प्रकार या रूप को एक भाषा से दूसरी भाषा में या उसी भाषा में बदलना कहलाता है।
(क) सारानुवाद (ख) व्याख्यानुवाद (ग) रूपान्तरण (घ) पद्यानुवाद

20. अनुवाद के प्रकारों का किन आधारों पर विभाजन किया जाता है?
(क) माध्यम के आधार पर (ख) प्रक्रिया के आधार पर
(ग) पाठ के आधार पर (घ) इनमें से सभी।

उत्तरमाला

1. (क)	2. (क)	3. (क)	4. (क)	5. (घ)	6. (घ)
7. (ख)	8. (क)	9. (क)	10.(क)	11.(ख)	12.(ग)
13.(घ)	14.(घ)	15.(घ)	16.(घ)	17.(ख)	18.(ख)
19.(ग)	20.(घ)				

9

बीज शब्द (Key word / अवधारणा मूलक शब्द)

लोकतंत्र या प्रजातंत्र

लोकतंत्र या प्रजातंत्र एक ऐसी शासन प्रणाली है, जिसके अन्तर्गत जनता अपनी स्वेच्छा से निर्वाचन में आए हुए किसी भी उम्मीदवार को मत देकर अपना प्रतिनिधि चुन सकती है तथा उसे विधायिका का सदस्य बना सकती है। लोकतंत्र दो शब्दों से मिलकर बना है, ''लोक+तंत्र''। लोक का अर्थ है जनता तथा तंत्र का अर्थ है शासन।

यद्यपि लोकतंत्र शब्द का प्रयोग राजनीतिक सन्दर्भ में किया जाता है, किन्तु लोकतंत्र का सिद्धांत दूसरे समूहों और संगठनों के लिए भी संगत है। मूलतः लोकतंत्र भिन्न-भिन्न सिद्धांतों के मिश्रण बनता है, लोकतंत्र जनता का, जनता के द्वारा तथा जनता के लिए शासन है। लोकतंत्र में ऐसी व्यवस्था रहती है जिसमें जनता अपनी मर्जी से विधायिका चुन सकती है। लोकतंत्र एक प्रकार का शासन व्यवस्था है, जिसमें सभी व्यक्ति को समान अधिकार होता है। एक अच्छा लोकतंत्र वह है, जिसमें राजनीतिक और सामाजिक न्याय के साथ-साथ आर्थिक न्याय की व्यवस्था भी है। देश में यह शासन प्रणाली लोगों को सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करती है।

लोकतंत्र का अर्थ एवं परिभाषा

मानव इतिहास में एक समय था जब दुनिया के विभिन्न हिस्सों में मानवता निरंकुश महाराजाओं के नियंत्रण में रहती थी। उस समय, आम जनता को शासन के मामलों में भाग लेने का अधिकार नहीं था, बल्कि शासक अपने दरबारियों और अधिकारियों की मदद से अपनी इच्छा के अनुसार शासन करता था। लेकिन मानव विकास ने उस समय को अतीत की कहानी बना दिया है। अब वह एक युग है जब शासकों को सामान्य लोगों की इच्छा के अनुसार चुना या नियुक्त किया जाता है। यह सब लोकतांत्रिक प्रणाली के आगमन के परिणाम स्वरूप हुआ है। आधुनिक युग में लोकतांत्रिक व्यवस्था इतनी लोकप्रिय है कि आधुनिक युग को लोकतंत्र का युग ही कहा जाता है।

लोकतंत्र अंग्रेजी भाषा के शब्द Democracy का हिन्दी अनुवाद है। अंग्रेजी भाषा का Democracy शब्द यूनानी भाषा के शब्दों डीमोस Demos और क्रेटिया Cratia को मिलाकर बना है। यूनानी भाषा में डेमोस शब्द का अर्थ प्रजा, क्रेटिया शब्द का अर्थ शासन है। इन दोनों शब्दों का सामूहिक अर्थ प्रजा का शासन बनता है। इस तरह स्पष्ट है कि लोकतंत्र (Democray) का अर्थ प्रजा या लोगों का शासन है।

लोकतंत्र की परिभाषाएँ-

सीले (Seeley) के कथन के अनुसार – ''लोकतंत्र एक ऐसी सरकार है जिसमें हर एक व्यक्ति का एक हिस्सा हो।''

डाइसी (Dicey) के कथन के अनुसार – ''लोकतंत्र वह शासन प्रणाली है जिसमें शासक वर्ग राष्ट्र का एक प्रमुख हिस्सा हो।''

हेरोडोटस (Herodotus) के अनुसार – ''लोकतंत्र को एक ऐसा शासन बताया है जिसमें सबसे ऊँच शक्ति सभी लोगों के पास होती है।''

लॉर्ड ब्रायस (Lord Bryce) के अनुसार- ''वह शासन जिसमें राज्य की किसी विशेष वर्ग या श्रेणी के पास नहीं।''

अब्राहिम (Abrahim) के कथन के अनुसार- ''लोकतंत्र लोगों का लोगों द्वारा लोगों के लिए शासन है।''

गेटेल (Gettel) के कथन के अनुसार- ''लोकतंत्र शासन का वह रूप है जिसमें जनसंख्या के बहुत बड़े भाग को सर्वोच्च शक्ति का उपयोग करने में भाग लेने का अधिकार प्राप्त होता है। राजनीतिक महानता ऊपर लोगों का विश्वास है और इस विचार के विरूद्ध है कि किसी एक श्रेणी का विशेष राजनीतिक स्वायतें प्राप्त हो या राजनीतिक शक्तियों पर उसी श्रेणी का एकाधिकार हो। लोकतंत्र बहुजन के और लोगों की राय के अनुकूल कानून शासन करने पर जोर देता है।''

बाबा साहेब अम्बेडकर के अनुसार- लोकतंत्र का अर्थ है एक ऐसी जीवन पद्धति जिसमें स्वतंत्रता, समता और बंधुता समाज-जीवन के मूल सिद्धान्त होते हैं।

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ के अनुसार- लोकतंत्र, अपनी महंगी और समय बर्बाद करने वाली खूबियों के साथ सिर्फ भ्रमित करने का एक तरीका भर है जिससे जनता को विश्वास दिलाया जाता है कि वह ही शासक है जबकि वास्तविक सत्ता कुछ गिने चुने लोगों के हाथ में ही होती है।

सरटोरी के अनुसार- सरटोरी ने अपनी पुस्तक डेमोक्रेटिक थ्योरी में लिखा है कि राजनीतिक लोकतंत्र एक तरीका या प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रतियोगी संघर्ष से सत्ता प्राप्ति की जाती है और कुछ लोग इस सत्ता को नेतृत्व प्रदान करते हैं। सरटोरी के अनुसार लोकतंत्र काफी कठिन शासन है, इतना कठिन कि केवल विशेषज्ञ लोग ही इसे भीड़ तंत्र से बचा सकते हैं, अत: इसकी प्रक्रिया को मजबूत बनाना आवश्यक है। (सरटोरी : 1985:3-10)

हंटिंगटन के अनुसार- लोकतंत्र को 3 आधारों पर समझा जा सकता है -शासकीय सत्ता का एक साधन, सरकार के उद्देश्य, सरकार को चुनने की प्रक्रिया के रूप में। हंटिंगटन के अनुसार लोकतंत्र की इस प्रक्रिया के अंतर्गत स्वतंत्र, निष्पक्ष तथा आवधिक चुनाव के द्वारा सबसे शक्तिशाली सामूहिक निर्णय निर्माता चुने जाते हैं और सभी वयस्क लोगों को सहभागिता प्राप्त होती है। इस प्रक्रिया को पूरा करने के लिए नागरिकों को स्वतंत्रताएँ तथा कुछ अधिकार भी प्रदान किए जाते हैं।

भारत में लोकतंत्र का प्राचीन इतिहास

विश्व के विभिन्न राज्यों में राजतंत्र श्रेणी तंत्र, अधिनायक तंत्र व लोकतंत्र आदि शासन प्रणालियाँ प्रचलित रही हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से अवलोकन करें तो भारत लोकतंत्रात्मक शासन प्रणाली का आरंभ पूर्व वैदिक काल से ही हो गया था। प्राचीनकाल में भारत में सुदृढ़ लोकतांत्रिक व्यवस्था विद्यमान थी। इसके साक्ष्य हमें प्राचीन साहित्य, सिक्कों और अभिलेखों से प्राप्त होते हैं। विदेशी यात्रियों एवं विद्वानों के वर्णन में भी इस बात के प्रमाण हैं।

प्राचीन गणतांत्रिक व्यवस्था में आजकल की तरह ही शासक एवं शासन के अन्य पदाधिकारियों के लिए निर्वाचन प्रणाली थी। योग्यता एवं गुणों के आधार पर इनके चुनाव की प्रक्रिया आज के दौर से थोड़ी भिन्न जरूर थी। सभी नागरिकों को वोट देने का अधिकार नहीं था। ऋग्वेद तथा कौटिल्य साहित्य ने चुनाव पद्धति की पुष्टि की है परन्तु उन्होंने वोट देने के अधिकार पर कोई प्रकाश नहीं डाला है।

वर्तमान संसद की तरह ही प्राचीन समय में परिषदों का निर्माण किया गया था जो वर्तमान संसदीय प्रणाली से मिलता-जुलता था। गणराज्य या संघ की नीतियों का संचालन इन्हीं परिषदों द्वारा होता था। इसके सदस्यों की संख्या विशाल थी। उस समय के सबसे प्रसिद्ध गणराज्य लिच्छवि की केन्द्रीय परिषद में 7707 सदस्य थे। यौधेय की केन्द्रीय परिषद के 5000 सदस्य थे। वर्तमान संसदीय सत्र की तरह ही परिषदों के अधिवेशन नियमित रूप से होते थे।

किसी भी मुद्दे पर निर्णय होने से पूर्व सदस्यों के बीच में इस पर खुलकर चर्चा होती थी। सही-गलत के आंकलन के लिए पक्ष-विपक्ष पर जोरदार बहस होती थी। उसके बाद ही सर्वसम्मति से निर्णय का प्रतिपादन किया जाता था। सबकी सहमति न होने पर बहुमत प्रक्रिया अपनायी जाती थी। कई जगह तो सर्वसम्मति होना अनिवार्य होता था। बहुमत से लिए गए निर्णय को भूथिक्किम कहा जाता था। इसके लिए वोटिंग का सहारा लेना पड़ता था। तत्कालीन समय में वोट को छंद कहा जाता था। निर्वाचन आयुक्त की भांति इस चुनाव की देख-रेख करने वाला भी एक अधिकारी होता था जिसे शलाका ग्राहक कहते थे। वोट देने के लिए तीन प्रणालियाँ थीं।

(1) गूढ़क (गुप्त रूप से) - अर्थात् अपना मत किसी पत्र पर लिखकर जिसमें वोट देने वाले व्यक्ति का नाम नहीं आता था।

(2) विवृतक (प्रकट रूप से)- इस प्रक्रिया में व्यक्ति सम्बन्धित विषय के प्रति अपने विचार सबके सामने प्रकट करता था। अर्थात् खुले आम घोषणा।

(3) संकर्ण जल्पक (शलाका ग्राहक के कान में चुपके से कहना)- सदस्य इन तीनों में से कोई भी एक प्रक्रिया अपनाने के लिए स्वतंत्र थे। शलाकाग्राहक पूरी मुस्तैदी एवं ईमानदारी से इन वोटों का हिसाब करता था।

इस तरह हम पाते हैं कि प्राचीन काल से ही हमारे देश में गौरवशाली लोकतंत्रीय परम्परा थी। इसके अलावा सुव्यवस्थित शासक के संचालन हेतु अनेक मंत्रालयों का भी निर्माण किया गया था।

मंत्रालयों के प्रमुख विभाग थे-

(1) औद्योगिक तथा शिल्प सम्बंधी विभाग

(2) विदेश विभाग

(3) जनगणना

(4) क्रय-विक्रय के नियमों का निर्धारण

मंत्रीमंडल का उल्लेख हमें अर्थशास्त्र, मनुस्मृति, शुक्रनीति, महाभारत, इत्यादि में प्राप्त होता है। यजुर्वेद और ब्राह्मण ग्रंथों में इन्हें रत्नि कहा गया। महाभारत के अनुसार मंत्रिमंडल में 6 सदस्य होते थे। मनु के अनुसार सस्य संख्या 7-8 होती थी। शुक्र ने इसके लिए 10 की संख्या निर्धारण की थी। इनके कार्य इस प्रकार थे-

(1) पुरोहित- यह राजा का गुरू माना जाता था। राजनीति और धर्म-शास्त्र में निपुण व्यक्ति को ही यह पद दिया जाता था।

(2) उपराज (राजप्रतिनिधि)-इसका कार्य राजा की अनुपस्थिति में शासन व्यवस्था का संचालन करना था।

(3) प्रधान- प्रधान अथवा प्रधानमंत्री, मंत्रिमंडल का सबसे महत्वपूर्ण सदस्य था। वह सभी विभागों की देखभाल करता था।

(4) सचिव-वर्तमान के रक्षा मंत्री की तरह ही इसका काम राज्य की सुरक्षा व्यवस्था सम्बंधी कार्यों को देखना था।

(5) सुमंत्र- राज्य के आय-व्यय का हिसाब रखना इसका कार्य था। चाणक्य ने इसको समर्हता कहा।

(6) अमात्य- अमात्य का कार्य सम्पूर्ण राज्य के प्राकृतिक संसाधनों का नियमन करना था।

(7) दूत- वर्तमान काल की इंटेलीजेंसी की तरह दूत का कार्य गुप्तचर विभाग को संगठित करना था। यह राज्य का अत्यंत महत्वपूर्ण एवं संवेदनशील विभाग माना जाता था।

प्राचीन भारत के कुछ प्रमुख गणराज्यों का उल्लेख इस प्रकार है-

(1) शाक्य - शाक्य गणराज्य वर्तमान बस्ती और गोरखपुर जिला (उत्तरप्रदेश) के क्षेत्र में स्थित था। इस गणराज्य की राजधानी कपिलवस्तु थी।

(2) लिच्छवि- लिच्छवि गणराज्य गंगा के उत्तर में (वर्तमान उत्तरी बिहार क्षेत्र) स्थित था। इसकी राजधानी का नाम वैशाली था।

(3) वज्जि - लिच्छवि, विदेह, कुण्डग्राम के ज्ञातृक गण तथा अन्य पाँच छोटे गणराज्यों ने मिलकर जो संघ बनाया उसी को वज्जि संघ कहा जाता था।

(4) अम्बष्ठ- पंजाब में स्थित इस गणराज्य ने सिकन्दर से युद्ध न करके संधि कर ली थी।

(5) अग्रेय- वर्तमान अग्रवाल जाति का विकास इसी गणराज्य से हुआ है।

इसके अलावा अदिष्ट, औटुम्बर, कठ, कुणिंद, क्षुद्रक, पातानप्रस्थ इत्यादि गणराज्यों का उल्लेख भी प्राचीन ग्रंथों में मिलता है।

लोकतंत्र की अवधारणा : लोकतंत्र मूलत: नागरिक और राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए सहभागी राजनीति से सम्बद्ध प्रणाली है। लोकतंत्र की अवधारणा के सम्बन्ध में प्रमुख सिद्धान्त निम्नलिखित है-

(1) लोकतंत्र का पुरातन उदारवादी सिद्धांत

(2) लोकतंत्र का अभिजनवादी सिद्धान्त

(3) लोकतंत्र का बहुलवादी सिद्धान्त

(4) प्रतिभागी लोकतंत्र का सिद्धान्त

(5) लोकतंत्र का मार्क्सवादी सिद्धान्त अथवा जनता का लोकतंत्र

लोकतंत्र के उद्देश्य : भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। 26 जनवरी, 1950 को भारत का संविधान लागू हुआ। यह संविधान विश्व का सबसे लंबा लिखित संविधान है। संविधान में लोकतंत्र की सम्पूर्ण व्याख्या की गई है। लोकतंत्र के कुछ मौलिक उद्देश्य एवं विशेषताएँ निम्न हैं :

(1) जनता की सम्पूर्ण और सर्वोच्च भागीदारी।

(2) उत्तरदायी सरकार

(3) सीमित तथा संवैधानिक सरकार

(4) भारत को एक लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने, सभी नागरिकों को समानता, स्वतंत्रता और न्याय का वादा।

(5) निष्पक्ष तथा आवधिक चुनाव

(6) वयस्क मताधिकार

(7) निष्पक्ष न्यायालय

(8) कानून का शासन

(9) जनता के द्वारा चुनी हुई प्रतिनिधि सरकार

(10) जनता के अधिकारों एवं स्वतंत्रता की हिफाजत सरकार का कर्त्तव्य होना।

लोकतंत्र के प्रकार

प्रतिनिधि लोकतंत्र : प्रतिनिधि लोकतंत्र में जनता विधायिकों/प्रतिनिधियों को सीधे चुनती है। प्रतिनिधि किसी जिले या संसदीय क्षेत्र से चुने जाते हैं या कई समानुपातिक व्यवस्थाओं में सभी मतदाताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। कुछ देशों में मिश्रित व्यवस्था प्रयुक्त

होती है। यद्यपि इस तरह के लोकतंत्र में प्रतिनिधि जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं, लेकिन जनता के हित में कार्य करने की नीतियाँ प्रतिनिधि स्वयं तय करते हैं।

इस प्रणाली की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि जनादेश का दबाव नीतिगत विचलनों पर रोक का काम करता है, क्योंकि नियमित अन्तरालों पर सत्ता की वैधता हेतु चुनाव अनिवार्य है, एक तरह का प्रतिनिधि लोकतंत्र है, जिसमें स्वच्छ और निष्पक्ष चुनाव होते हैं। उदार लोकतंत्र के चरित्रगत लक्षणों में, अल्प-संख्यकों की सुरक्षा, कानून व्यवस्था, शक्तियों के वितरण आदि के अलावा अभिव्यक्ति, भाषा, सभा, पंथ और संपत्ति की स्वतंत्रता प्रमुख है।

उदार लोकतांत्रिक देशों में वंचित वर्ग का सशक्तिकरण किया जाता है, जिससे देश की उन्नति हो। उदार लोकतंत्र में लोगों का अर्थात् नागरिकों को शिक्षा, स्वास्थ्य और बुनियादी सुविधाओं का लाभ देना सरकार या राज्य का कर्त्तव्य है।

प्रत्यक्ष लोकतंत्र : प्रत्यक्ष लोकतंत्र में सभी नागरिक सारे महत्वपूर्ण नीतिगत फैसलों पर मतदान करते हैं। इसे प्रत्यक्ष कहा जाता है क्योंकि सैद्धांतिक रूप से इसमें कोई प्रतिनिधि या मध्यस्थ नहीं होता। सभी प्रत्यक्ष लोकतंत्र छोटे समुदाय या नगर-राष्ट्रों में है। उदाहरण-स्विट्जरलैंड।

अप्रत्यक्ष लोकतंत्र : ज्यादातर देशों में प्रतिनिधि लोकतंत्र या अप्रत्यक्ष लोकतंत्र का ही प्रचार है जिसमें जनभावना की अभिव्यक्ति जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा की जाती है। जनता का शासन व्यवस्था और कानून निर्धारण में कोई योगदान नहीं होता तथा जनता स्वयं शासन न करते हुए निर्वाचन पद्धति के द्वारा चयनित शासन प्रणाली के अंतर्गत निवास करती है। इस प्रकार की व्यवस्था को ही आधुनिक लोकतंत्र का मूल विचार बताने वालों में मतभेद है।

लोकतंत्र का व्यापक स्वरूप

लोकतंत्र केवल शासन के रूप तक ही सीमित नहीं है, वह समाज का एक संगठन भी है। सामाजिक आदर्श के रूप में लोकतंत्र वह समाज है जिसमें कोई विशेषाधिकारयुक्त वर्ग नहीं होता और न जाति, धर्म, वर्ण, वंश, धन, लिंग आदि के आधार पर व्यक्ति के बीच भेदभाव किया जाता है। इस प्रकार का लोकतांत्रिक समाज को लोकतंत्रीय राज्य का आधार कहा जा सकता है।

राजनीतिक लोकतंत्र की सफलता के लिए उसका आर्थिक लोकतंत्र से गठबंधन आवश्यक है। आर्थिक लोकतंत्र का अर्थ है कि समाज के प्रत्येक सदस्य को अपने विकास की समान भौतिक सुविधाएँ मिलें। लोगों के बीच आर्थिक विषमता अधिक न हो और एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का शोषण न कर सके। एक ओर घोर निर्धनता तथा दूसरी ओर विपुल संपन्नता के वातावरण में लोकतंत्रात्मक राष्ट्र का निर्माण संभव नहीं है।

नैतिक आदर्श एवं मानसिक दृष्टिकोण के रूप में लोकतंत्र का अर्थ मानव के रूप में मानव व्यक्तित्व में आस्था है। क्षमता, सहिष्णुता, विरोधी के दृष्टिकोण के प्रति आदर की भावना, व्यक्ति की गरिमा का सिद्धांत ही वास्तव में लोकतंत्र का सार है।

लोकतंत्र के उपादान –

आधुनिक युग में लोकतंत्रीय आदर्शों को कार्यरूप में परिणत करने के लिए अनेक उपादानों का आविर्भाव हुआ है। जैसे लिखित संविधानों द्वारा मानव अधिकारों की घोषणा, वयस्क मताधिकार प्रणाली द्वारा प्रतिनिधि चुनने का अधिकार, लोकनिर्माण, उपक्रम, पुनरावर्तन तथा जनमत संग्रह जैसी प्रत्यक्ष जनवादी प्रणालियों का प्रयोग, स्थानीय स्वायत्त शासन का विस्तार, स्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्यायालयों की स्थापना, विचार, भाषण, मुद्रण तथा आस्था की स्वतंत्रता को मान्यता, विधिसंमत शासन को मान्यता, बलवाद के स्थान पर सतत् वादविवाद और तर्कपद्धति द्वारा ही आपसी संघर्षों के समाधान की प्रक्रिया को मान्यता देना है। वयस्क मताधिकार के युग में लोकमत को शिक्षित एवं संगठित करने, सिद्धांतों के सामान्य प्रकटीकरण, नीतियों के व्यवस्थित विकास तथा प्रतिनिधियों के चुनाव के सहायक होने में राजनीतिक दलों की उपादेयता-आधुनिक लोकतंत्र का एक वैशिष्ट्य है। मानव व्यक्तित्व के सर्वतोमुखी विकास के लिए प्रशासन को जनसेवा के व्यापक क्षेत्र में पदार्पण करने के लिए आधुनिक लोकतंत्र को लोक कल्याणकारी राज्य का आदर्श ग्रहण करना पड़ा है।

लोकतंत्र के शत्रु

- भ्रष्टाचार
- उग्रवाद, आतंकवाद, हिंसा,
- वंशवाद, परिवारवाद, कॉर्पोरेटवाद
- राजनैतिक अधिनायक प्रवृत्ति
- निरंकुश शासकीय व्यवस्था
- अवांछित गोपनीयता
- प्रेस पर रोक
- अशिक्षा एवं निरक्षरता

समरसता

समरसता शब्द की उत्पत्ति : समरसता शब्द सम+रस से बना हुआ है, जिसका अर्थ एक रस भाव और एक रस गुण के रूप में भी मिलता है। समरसता का एक और मिलता-जुलता शब्द भी है जिसे सामाजिक समरसता कहा जाता है। यह शब्द देवनागरी भाषा का शब्द है।

अर्थ : समरसता का अर्थ है सभी को अपने समान समझना। सृष्टि में सभी मनुष्य एक ही ईश्वर की संतानें है और उनमें एक ही चैतन्य विद्यमान है, इस बात को हृदय से स्वीकार करना। यदि देखा जाए तो पुरातन भारतीय संस्कृति में कभी भी किसी भी तरह का भेदभाव स्वीकार नहीं किया गया है।

समरसता = सामंजस्य, संतुलन, समन्वय, सामरस्य, तालमेल, एकरस, एक समान होना, समास होने का गुण, समरस होने का भाव इत्यादि।

- सदा एक समान रहने की स्थिति समरसता है।
- सुख-दुख दोनों की स्थिति में एक भाव का होना समरसता है।
- सबका एक ही प्रकार का रस अथवा स्वाद होना समरसता है।
- सुख में, आनंद में पूर्णतया लीन होना समरसता है।
- किसी भी परिस्थिति में समान स्थिति को रहना समरसता है।
- समाज में संतुलन या तालमेल का होना समरसता है।
- मानव-समुदाय में परस्पर प्रेमभाव होना, समरसता है।
- समाज की दुर्व्यवस्था को समरसता से मिटाया जा सकता है।
- नित्य समरसता का अधिकार [illegible] अमर है।
- समान भावों से युक्त होना समरसता है।

समाज व्यक्तियों के समूहों से निर्मित होता है, इन व्यक्तियों के कुछ साझे हित होते हैं, कुछ अलग-अलग हित होते हैं। इस प्रकार समाज व्यक्तियों के सहयोग एवं प्रतिस्पर्धा द्वारा संचालित होता है। हितों की पूर्ति हेतु प्रतिस्पर्धा संघर्ष का आकार न ग्रहण करे, समरसता यह सुनिश्चित करती है। इस प्रकार समरसता सामाजिक मूल्य है जो शांति विकास सहयोग में [illegible] भूमिका निभाती है। सहिष्णुता द्वारा समरसता को प्राप्त किया जाता है। बुद्ध का मध्यम मार्ग भी समरसता को प्रोत्साहित करता है।

समरसता शांतिपूर्ण समाज की स्थापना में सहायक है। परिवार के स्तर पर समरसता बच्चों/वृद्धों को सामाजिक सुरक्षा का भाव उत्पन्न करती है, ऐसे बच्चों में उत्तरदायित्व, अनुशासन तुलनात्मक रूप से अधिक पाया जाता है। समाज के स्तर पर समरसता से शांति सहयोग की भावना विकसित होती है जो आर्थिक विकास के साथ ही सामाजिक विकास को प्रोत्साहित करती है।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर देशों के मध्य समरसता आतंकवाद/ शरणार्थी संकट/ युद्ध/ हथियारों की होड़ में कमी करती है। संयुक्त राष्ट्र/विश्व व्यापार संगठन जैसी संस्थाओं का मूल उद्देश्य देशों के मध्य विवादों का शांतिपूर्ण समाधान कर विश्व को समृद्ध बनाना है।

नैतिक मूल्यों के विकास में समरसता की भूमिका : समरसता, शांति, धैर्य, विश्वास, बंधुत्व, सहिष्णुता, ईमानदारी जैसे नैतिक मूल्यों के विकास को प्रोत्साहन प्रदान करती है।

शिक्षा और स्कूलिंग की सामाजिक समरसता के विकास में भूमिका : मूल्य समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा बच्चों में विकसित किये जाते हैं। बच्चा विद्यालय में जाकर पहली बार विभिन्न सम्प्रदायों/वर्गों से मिलता है। वह एक दूसरे के रीति-रिवाजों-त्यौहारों को जानने समझने लगता है। इससे उनमें समरसता की भावना का विलय होता है। साथ में बैठना, भोजन

करना, पढ़ना इनमें उनमें बंधुत्व की भावना का विकास होता है। खेलों के माध्यम से भी सहयोग, टीम भावना एवं सामूहिक मूल्यों का विकास होता है।

समरसता के विकास में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एवं लोकतांत्रिक मूल्यों की भूमिका : लोकतंत्र महज एक राजनीतिक व्यवस्था या शासन प्रणाली नहीं है, यह [illegible] प्रवृत्ति को बनाना, स्वतंत्रता एवं बंधुत्व जैसे मूल्यों का आधार है। [illegible] संस्कृति को बढ़ावा देता है। बहुलवाद एक स्वीकृति है, [illegible] लोकतंत्र बहुलवाद को [illegible] सभी स्थान है, किन्तु इन सभी की मान्यताएँ, विचारधाराएँ, दृष्टिकोण आदि समान नहीं हैं। इस प्रकार बहुलवाद अवधारणा, समरसता को संवर्धित करती है।

अपनी असहमतियों को शांतिपूर्ण ढंग से अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता लोकतंत्र को सशक्त बनाती है। वाद-संवाद की संस्कृति को बढ़ाकर सामाजिक समरसता में वृद्धि करती है।

सामाजिक समरसता के समक्ष चुनौतियाँ : जातिवाद, [illegible], अस्पृश्यता और धार्मिक भेदभाव सामाजिक समरसता को क्षति पहुँचाते हैं। इससे समाज विभिन्न समूहों में विभाजित हो जाता है। अपने संकीर्ण स्वार्थों की पूर्ति हेतु समूहों में संघर्ष बढ़ जाता है। विभिन्न जातियों द्वारा आरक्षण की मांग इसी का परिणाम है। [illegible] आर्थिक असमानता भी समरसता के मार्ग को बाधित करते हैं।

वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप उपजे पहचान के संकट ने असहिष्णुता को बढ़ावा दिया है। अमेरिका का ब्लैक लाइव्स मैटर इसी का परिणाम है।

आगे की राह : भारतीय संविधान ने अपने नागरिकों को मौलिक अधिकार देने के साथ ही कुछ नैतिक उत्तरदायित्व (मौलिक कर्तव्य) भी प्रदान किये हैं, जिनके अंतर्गत सामाजिक समरसता को बढ़ावा देना भी शामिल है। राज्य द्वारा नागरिकों को उनके कर्तव्य का बोध करवाने के लिए कार्यक्रम आयोजित करते रहने चाहिए।

भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों-सहिष्णुता, शांति, समन्वय, सत्संग, सह अस्तित्व, त्याग, अहिंसा को प्रोत्साहित किया जाए। विद्यालय में पठन-पाठन से भारत की समन्वित संस्कृति को सिखाया जाये। इतिहास के प्रति संतुलित दृष्टिकोण को अपनाया जाए। त्यौहारों-उत्सवों को मिलकर मनाने पर जोर दिया जाए।

विधायिका, न्यायपालिका समेत सभी संवैधानिक संस्थाओं को कट्टरपंथ/असहिष्णुता फैलाने वालों के खिलाफ जीरो टॉलरेंस की रणनीति अपनानी चाहिए।

समाज एक गत्यात्मक संस्था है, जो शाश्वत प्रगति एवं भाई-चारे के पथ पर अग्रसर होकर अपने समस्त घटकों की खुशहाली सुनिश्चित करती है। समतापरक सुसंस्कृत समाज का निर्माण, संचालन एवं अस्तित्व किसी व्यक्ति, जाति, वर्ण, वर्ग या समुदाय विशेष के योगदान से नहीं होता है। समाज की सम्पूर्णता एवं सजीवता के निमित्त प्रत्येक व्यक्ति की खुशहाली, सहभागिता एवं समर्पण बेहद जरूरी है, चाहे वह किसी भी जाति, सम्प्रदाय,

- सदा एक समान रहने की स्थिति समरसता है।
- सुख-दुख दोनों की स्थिति में एक भाव का होना समरसता है।
- सर्वत्र एक ही प्रकार का रस अथवा स्वाद होना समरसता है।
- सुख में, आनंद में पूर्णतया लीन होना समरसता है।
- किसी भी परिस्थिति में समान स्थिति बने रहना समरसता है।
- समाज में संतुलन या तालमेल बना होना समरसता है।
- मानव-समुदाय में परस्पर प्रेमभाव होना, समरसता है।
- समाज की दुर्व्यवस्था को समरसता से मिटाया जा सकता है।
- नित्य समरसता का अधिकार उमड़ता कारण जलधि अपार है।
- समान भावों से युक्त होना समरसता है।

समाज व्यक्तियों के समूहों से निर्मित होता है, इन व्यक्तियों के कुछ साझे हित होते है, कुछ परस्पर विरोधी। इस प्रकार समाज व्यक्तियों के सहयोग एवं प्रतिस्पर्धा द्वारा संचालित होता है। हितों की पूर्ति हेतु प्रतिस्पर्धा संघर्ष का आकार न ग्रहण करें, समरसता यह सुनिश्चित करती है। इस प्रकार समरसता सामाजिक पूंजी है जो शांति विकास सहयोग में अहम भूमिका निभाती है। सहिष्णुता द्वारा समरसता को प्राप्त किया जाता है। बुद्ध का मध्यम मार्गी चिंतन समरसता को प्रोत्साहित करता है।

समरसता शांतिपूर्ण समाज की स्थापना में सहायक है। परिवार के स्तर पर समरसता बच्चों/वृद्धों को सामाजिक सुरक्षा का भाव उत्पन्न करती है, ऐसे बच्चों में स्वउत्तरदायित्व, अनुशासन तुलनात्मक रूप से अधिक पाया जाता है। समाज के स्तर पर समरसता से शांति सहयोग की भावना विकसित होती है जो आर्थिक विकास के साथ ही सामाजिक विकास को प्रोत्साहित करती है।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर देशों के मध्य समरसता आतंकवाद/ शरणार्थी संकट/ युद्ध/ हथियारों की होड़ में कमी करती है। संयुक्त राष्ट्र/विश्व व्यापार संगठन जैसी संस्थाओं का मूल उद्देश्य देशों के मध्य विवादों का शांतिपूर्ण समाधान कर विश्व को समृद्ध बनाना है।

नैतिक मूल्यों के विकास में समरसता की भूमिका : समरसता, शांति, धैर्य, विश्वास, बंधुत्व, सहिष्णुता, ईमानदारी जैसे नैतिक मूल्यों के विकास को प्रोत्साहन प्रदान करती है।

शिक्षा और स्कूलिंग की सामाजिक समरसता के विकास में भूमिका : मूल्य समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा बच्चों में विकसित किये जाते हैं। बच्चा विद्यालय में जाकर पहली बार विभिन्न सम्प्रदायों/वर्गों से मिलता है। वह एक दूसरे के रीति-रिवाजों-त्यौहारों को जानने समझने लगता है। इससे उनमें समरसता की भावना का विलय होता है। साथ में बैठना, भोजन

करना, पढ़ना इससे उनमें बंधुत्व की भावना का विकास होता है। खेलों के माध्यम से भी सहयोग, टीम भावना एवं सामूहिक मूल्यों का विकास होता है।

समरसता के विकास में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एवं लोकतांत्रिक मूल्यों की भूमिका : लोकतंत्र महज एक राजनीतिक व्यवस्था या शासन प्रणाली नहीं है, यह जीवन पद्धति जो समानता, स्वतंत्रता एवं बंधुत्व जैसे मूल्यों का आधार है। लोकतंत्र बहुलवाद की संस्कृति को बढ़ावा देता है। बहुलवाद एक स्वीकृति है, यद्यपि राज्य और कानून के समक्ष सभी समान है, किन्तु हम सभी की मान्यताएँ, विचारधाराएँ दृष्टिकोण आदि समान नहीं हैं। इस प्रकार बहुलवाद अवधारणा, समरसता को संवर्द्धित करती है।

अपनी असहमतियों को शांतिपूर्ण ढंग से अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता लोकतंत्र को सशक्त बनाती है। वाद-संवाद की संस्कृति को बढ़ाकर सामाजिक समरसता में वृद्धि करती है।

सामाजिक समरसता के समक्ष चुनौतियाँ : जातिगत, भेदभाव, अस्पृश्यता और लैंगिक भेदभाव सामाजिक समरसता को क्षति पहुँचाते हैं। इनसे समाज विभिन्न समूहों में विभाजित हो जाता है। अपने संकीर्ण स्वार्थों की पूर्ति हेतु समूहों में संघर्ष बढ़ जाता है। भारत में विभिन्न जातियों द्वारा आरक्षण की मांग इसी का परिणाम है। साम्प्रदायिक/नृजातीय एवं आर्थिक असमानता भी समरसता के मार्ग को बाधित करते हैं।

वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप उपजे पहचान के संकट ने असहिष्णुता को बढ़ावा दिया है। अमेरिका का ब्लैक लाइव्स मैटर इसी का परिणाम है।

आगे की राह : भारतीय संविधान ने अपने नागरिकों को मौलिक अधिकार देने के साथ ही कुछ नैतिक उत्तरदायित्व (मौलिक कर्त्तव्य) भी प्रदान किये हैं, जिनके अंतर्गत सामाजिक समरसता को बढ़ावा देना भी शामिल है। राज्य द्वारा नागरिकों को उनके कर्तव्य का बोध करवाने के लिए कार्यक्रम आयोजित करते रहने चाहिए।

भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों-सहिष्णुता, शांति, समन्वय,समर्पण, सह अस्तित्व, त्याग, अहिंसा को प्रोत्साहित किया जाए। विद्यालय में पठन-पाठन से भारत को समन्वित संस्कृति को सिखाया जाये। इतिहास के प्रति संतुलित दृष्टिकोण को अपनाया जाए। त्यौहारों-उत्सवों को मिलकर मनाने पर जोर दिया जाए।

विधायिका, न्यायपालिका समेत सभी संवैधानिक संस्थाओं को कट्टरपंथ/असहिष्णुता फैलाने वालों के खिलाफ जीरो टॉलरेंस की रणनीति अपनानी चाहिए।

समाज एक गत्यात्मक संस्था है, जो शाश्वत प्रगति एवं भाई-चारे के पथ पर अग्रसर होकर अपने समस्त घटकों की खुशहाली सुनिश्चित करती है। समतापरक सुसंस्कृत समाज का निर्माण, संचालन एवं अस्तित्व किसी व्यक्ति, जाति, वर्ण, वर्ग या समुदाय विशेष के योगदान से नहीं होता है। समाज की सम्पूर्णता एवं सजीवता के निमित्त प्रत्येक व्यक्ति की खुशहाली, सहभागिता एवं समर्पण बेहद जरूरी है, चाहे वह किसी भी जाति, सम्प्रदाय,

वर्ण या समुदाय का हो। समाज में समरसता के बिना बंधुत्व, सौहार्द और एकता की कल्पना सम्भव नहीं है।

सामाजिक समरसता का मूलमंत्र समानता है जो समाज में व्याप्त सभी प्रकार के भेदभावों एवं असमानताओं को जड़-मूल से नष्ट कर नागरिकों में परस्पर प्रेम एवं सौहार्द में वृद्धि तथा सभी वर्गों में एकता का संचार करती है। समरसता का आशय यह भी है कि संसार में विद्यमान चैतन्य-अचेतन जगत के समस्त घटकों को अपने समान समझना, आदर-सत्कार एवं प्रेम करना, क्योंकि ये सब स्व का ही विस्तार है। इसलिए हमें मनसा-वाचा-कर्मणा से यह तथ्य स्वीकार करना पड़ेगा कि प्रकृति के सभी घटक चेतनशील है एवं उन सभी के विकास से ही मानव समाज का सर्वतोमुखी विकास सम्भव है।

समरसता के सूत्र

हमारी ज्ञानात्मक चेतना के अक्षय स्त्रोत वेदों में भी सृष्टि को एक परिवार माना गया है। इनमें मेरे-तुम्हारे जैसे संकुचित भावों के लिए कोई स्थान नहीं है-

अयं निजः परोवेति गणना लघु चेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

इसी प्रकार का मंतव्य अथर्ववेद के तृतीय काण्ड के सामनस्य सूक्त में भी वर्णित है जो सम्पूर्ण विश्व में सामंजस्य सौमनस्य एवं सौहार्द की बात करता है-

सहृदयं सामनस्थमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमपि हर्यत वत्सं जातमिवाहन्या।।

वेदों में उल्लिखित ज्ञानसूत्रों को उपनिषदों में व्याख्यायित किया गया है। इन्हीं उपनिषदों का उद्घोष है- सर्व खाल्विदं ब्रह्म अर्थात् परमात्मा इस सृष्टि के सभी सूक्ष्म और स्थूल तत्वों में व्याप्त हैं। जब सभी में परमतत्व विद्यमान है तो बाह्य भेद होते हुए भी कोई आंतरिक भेद नहीं है, सभी अद्वैत हैं।

राष्ट्र कितना भी छोटा क्यों न हो, उसमें विभिन्न जाति, मत और सम्प्रदाय के लोग साथ रहते हैं। उनके रहन-सहन, खान-पान, आचार-विचार, मान्यता, विश्वास और मूल्यों में विभिन्नता होती है। वस्तु स्थिति यह है कि इन विभिन्नताओं को समाप्त नहीं किया जा सकता। ऐसे में राष्ट्रहित को सामने रखते हुए इन विभिन्नताओं को स्वीकार करने की आवश्यकता है। ऐसे विचारों से भावनात्मक एवं सामाजिक एकता सम्भव है। अपनी विभिन्नताओं को व्यक्ति बिना भय के राष्ट्रीय एकता और आधारभूत निष्ठाओं को दृष्टिगत रखते हुए तार्किक आधार पर अभिव्यक्त कर सकता है। मनुष्य अपने समाज, समुदाय, परिवार के प्रति भावात्मक रूप से सम्बद्ध रहता है।

भारतीय संस्कृति में वसुधैव कुटुम्बकम् एवं सर्वे भवन्तु सुखिनः की मान्यता निहित है। यदि प्रत्येक भारतीय को यह आभास हो जाए व आत्मावलोकन कर अपनी शक्ति को पहचाने तो भारत फिर से उसी सर्वोच्च सिंहासन पर आसीन होगा, जहाँ वह पहले था।

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना।
जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।

यह जोड़ने की शक्ति, यह संधिनी प्रज्ञा ही सुमति है। इसे जागृत होने से भारतवर्ष फिर से विश्वगुरू होगा। द्वेष और विषमता के मिट जाने पर ही आपसी प्रेम, सहयोग एवं साहचर्य बढ़ेगा, समृद्धि होगी सर्वत्र अखण्ड आनंद की वर्षा होगी।

कला

कला का अर्थ

कला शब्द 'कल' धातु से बना है। कला का शाब्दिक अर्थ है, जो सुन्दर यानि जो आनंद प्रदान करती हो अथवा जिसके द्वारा सुन्दरता आती है, वही कला है। कला से तात्पर्य रेखा आकृति, रंग, ताल तथा शब्द। जैसे- रेखाचित्र, रंजनकला, मूर्तिकला, नृत्य, संगीत, कविता एवं साहित्य के रूप में मानव की प्रवृत्तियों का बाहरी अभिव्यक्ति हैं।

कला न ज्ञान हैं, न शिल्प हैं, न ही विद्या है, बल्कि जिसके द्वारा हमारी आत्म परमानंद का अनुभव करती है, वही कला है। कुछ लोग कला शब्द का अर्थ 'सुंदर', 'कोमल', 'मधुर', या 'सुख' लाने वाला मानते हैं। कुछ इसे 'कल' धातु अर्थात् (शब्द करना, गाना-बजाना, गिनना) से सम्बन्धित मानते हैं कुछ अन्य लोग इसे 'कड्' धातु (मदमस्त करना, प्रसन्न करना) से जोड़ने के पक्ष में हैं।

अर्थात् कला का अर्थ एक ऐसी कलात्मक शिल्प या कौशल की प्रक्रिया से युक्त अनुभूति से है जो सृजनात्मक, सुन्दर एवं सुख प्रदान करने वाली हो, वही कला है।

कला की परिभाषा

एक साहित्यिक उक्ति के अनुसार- ''प्राण तत्व रस से परिपूर्ण रचना ही कला है।''

महात्मा गाँधी के अनुसार - ''कला आत्मा का ईश्वरीय संगीत है।''

रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार - ''कला में मनुष्य स्वयं अपनी अभिव्यक्ति करता है।''

जयशंकर प्रसाद के अनुसार - ''ईश्वर की कर्त्तव्य शक्ति का संकुचित रूप जो हमको भाव बोध के लिए मिलता है- कला है।''

डॉ. भोलाशंकर तिवारी के अनुसार - ''कला में मनुष्य अपनी अभिव्यक्ति करता है।''

फ्रॉयड के अनुसार- ''कला में मानव अपनी दमित वासनाओं तथा कुण्ठाओं की अभिव्यक्ति करता है।''

रस्किन के अनुसार- ''कला, ईश्वरीय कृति के प्रति मानव के आलाद की अभिव्यक्ति है।''

टालस्टाय के अनुसार- ''कला एक मानवीय क्रिया है जिसमें एक व्यक्ति जागरूक अवस्था में वाद्य प्रतीकों के माध्यम से, अपनी उन भावनाओं को जिनमें वह जी रहा होता

है, दूसरों को संचारित करता है तथा दूसरे व्यक्ति भी उन भावनाओं से प्रभावित होते हैं एवं उनका अनुभव करते हैं।''

शापेनहावर के अनुसार -''सृष्टि एक दिव्य रचना है और कला पवित्रता की अभिव्यक्ति है।''

बेनी दीती क्रोचे के अनुसार - ''कला वही है जैसा हर एक उसे जानता है।''

प्लेटो के अनुसार - ''कला सत्य की अनुकृति है।''

एरिस्टाटिल के अनुसार - ''कला अनुकरणीय है।''

रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार- ''जो सत्य है जो सुन्दर है वही कला है।''

अरस्तु के अनुसार - ''कला प्रकृति के सौन्दर्यमय अनुभवों का अनुकरण है।''

प्लेटो के अनुसार- ''कला सत्य की अनुकृति है।''

फ्रायड के अनुसार- ''दमित वासनाओं का उभरा हुआ रूप ही कला है।''

मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में- ''अभिव्यक्ति की कुशल शक्ति ही तो कला है।''

''मन के अंतःकरण की सुन्दर प्रस्तुति ही कला है।''

कला शब्द इतना व्यापक है कि विभिन्न विद्वानों की परिभाषाएँ केवल एक विशेष पक्ष को छूकर रह जाती हैं। कला का अर्थ अभी तक निश्चित नहीं हो पाया है, यद्यपि इसकी हजारों परिभाषाएँ की गयी हैं। भारतीय परम्परा के अनुसार कला उन सारी क्रियाओं को कहते हैं जिनमें कौशल अपेक्षित है। यूरोपीय शास्त्रियों ने भी कला में कौशल को महत्वपूर्ण माना है। कला एक प्रकार का कृत्रिम निर्माण है जिसमें शारीरिक और मानसिक कौशलों का प्रयोग होता है।

इतिहास : कला शब्द का प्रयोग शायद सबसे पहले भरत के नाट्यशास्त्र में ही मिलता है। इसके बाद वात्स्यायन और उशनस ने क्रमशः अपने ग्रंथ ''कामसूत्र'' और ''शुक्रनीति'' में इसका वर्णन किया है।

वर्गीकरण : कलाओं के वर्गीकरण में मतैक्य होना सम्भव नहीं है। वर्तमान समय में कला को मानविकी के अंतर्गत रखा जाता है, जिसमें इतिहास, साहित्य, दर्शन और भाषाविज्ञान आदि भी आते हैं।

पाश्चात्य जगत में कला के दो भेद किये गये हैं- (क) उपयोगी कलाएँ (Practice Arts) तथा (ख) ललित कलाएँ (Fine Arts)। परम्परागत रूप से निम्नलिखित को कला कहा जाता है-

(1) स्थापत्य कला (Architecture)	(5) काव्य (Poetry)
(2) मूर्तिकला (Sculpture)	(6) नृत्य (Dance)
(3) चित्रकला (Painting)	(7) रंगमंच (Theater/Cinema)
(4) संगीत (Music)	

आधुनिक काल में इनमें फोटोग्राफी, चलचित्रण, विज्ञापन और कॉमिक्स जुड़ गये हैं।

उपरोक्त कलाओं को निम्नलिखित प्रकार से भी श्रेणीकृत कर सकते हैं-

साहित्य- काव्य, उपन्यास, लघुकथा, महाकाव्य आदि।

निष्पादन कलाएँ (Performing Arts)-संगीत, नृत्य, रंगमंच, फ़िल्म।

पाक कला (Culinary Arts)- बेकिंग, चॉकलेटरिंग।

मिडिया कला- फोटोग्राफी, सिनेमेटोग्राफी, विज्ञापन।

दृश्य कलाएँ - ड्राइंग, चित्रकला, मूर्तिकला, फिल्म।

कला की विशेषताएँ

कला की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

(1) कला एक क्रिया है- कला एक क्रिया है, जिस प्रकार से प्रकृति प्रति क्षण विभिन्न क्रियाएँ करती है। जैसे- चंद्रमा का घटना-बढ़ना, फूलों का खिलना, सूर्य का निकलना, बादलों का बरसना, बिजली चमकना, इंद्रधनुष का बनना आदि।

कला एक व्यापक शब्द है जिसका प्रयोग प्रकृति तथा मानव जीवन के विविध क्षेत्रों में होता है। किन्तु प्रकृति तो ईश्वरीय कला है जो मानवीय क्रियाओं से पृथक है जबकि मानव द्वारा निर्मित कलात्मक वस्तु या चित्र के निर्माण की एक रचना प्रक्रिया होती है जो उसकी कलात्मकता को निश्चित करती है तो इस विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि ''कला वह मानवीय क्रिया है जिसका विशेष लक्षण, ध्यान से देखना, गणना अथवा संकलन, मनन, चिन्तन एवं स्पष्ट रूप से प्रकट करना है।''

(2) कला एक तकनीक है- कोई भी कलाकृति के निर्माण के लिये उसके निर्माण में प्रयुक्त एवं उस सामग्री के प्रयोग की तकनीक को समझना अनिवार्य है। बिना उस तकनीक को समझे उस कलाकृति का निर्माण नहीं किया जा सकता। जितना बेहतर हमें सामग्री के इस्तेमाल की तकनीक का ज्ञान होगा उतनी ही कुशलता से हम उसका प्रयोग कर पायेंगे और उतनी ही उत्कृष्ट वह कलाकृति होगी तो इस विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि ''कला एक विशेष तकनीकी क्रिया है जिसमें कलाकृति के निर्माण हेतु प्रयुक्त सामग्री को प्रयोगविधि को समझना अनिवार्य है।''

(3) कला एक प्रकार का शिल्प है- किसी सामग्री को काट-छांटकर जब कोई रूप दिया जाता है तो उसे शिल्प कहते हैं। इस प्रकार वह चाहे मूर्तिकला हो या वस्तु शिल्प, धातुशिल्प हो या वस्त्र शिल्प अथवा प्लास्टिक आर्ट सभी शिल्प की श्रेणी में ही आते हैं।

(4) कला एक प्रकार का कौशल है- कलाकार का कौशल उसे कहा जाता है जिसमें कलाकार क्रिया शिल्प एवं तकनीक के अतिरिक्त कृति को आकर्षित बनाने के लिये अपने मानसिक चिन्तन प्रक्रिया के द्वारा नवीनता लाने के लिए अनेक युक्तियाँ खोजता है।

कलाकृति को प्रभावशाली, नवीन एवं आकर्षक बनाने हेतु मानसिक चिन्तन-मनन एक अनिवार्य प्रक्रिया है।

(5) कला एक अनुकृति है-अनुकृति का अर्थ है- सादृश्य। यह वास्तविकता है कि कला अनुकृति मूलक है। कलाकृति की श्रेष्ठता को स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि "किसी कलाकृति की श्रेष्ठता इस पर निर्भर करती है कि मूलकृति चाहे वह ईश्वरीय हो या मानव रचित उससे उस कला का कितना साम्य है।"

(6) कला एक कल्पना है- बुद्धघोष के अनुसार, "संसार भर की जितनी कलाकृतियाँ हैं सब कल्पना की उपज हैं। प्लेटो भी यही मानते हैं उनके अनुसार कलाकृति में दैवीय प्रेरणा की ही भूमिका होती है। कलाकार अनेक ऐसे काल्पनिक चित्रों या मूर्तियों का निर्माण करता है जिनका अस्तित्व ही संसार में नहीं होता। देवता, ईश्वरीय अवतार, राक्षस, स्वर्ग ये सब कल्पना ही तो हैं। यूरोपीय विद्वान भी यही मानते थे कि कलाकार नवीन कलाकृतियों का सृजन करके अपनी कल्पना को संतुष्ट करता है।"

कल्पना का आधार भी सांसारिक वस्तुएँ ही होती हैं। कलाकार कल्पना के द्वारा उन्हें पुनः संयोजित कर नवीन रूप देता है।

(7) कला एक ज्ञान के रूप में है- ज्ञान एक विशिष्ट मानसिक प्रक्रिया का वास्तविक रूप है। प्राचीन भारतीय भाषाओं में चौंसठ कलाओं का वर्णन किया गया है। उच्चतम ज्ञान से भी भिन्न इन कलाओं के ज्ञान की प्रक्रिया को माना गया है। ज्ञान के अभाव में तकनीकी का प्रयोग भी असम्भव है। मन और मस्तिष्क जब किसी भी तकनीकी वस्तु, घटना, क्रिया आदि को पूर्ण विश्लेषित कर सत्य मान लेता है तभी इन क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त होता है।

(8) कला एक अभिव्यक्ति है- जिस प्रकार हम भाषा को माध्यम बनाकर अपने विचार दूसरों तक पहुँचाते हैं उसी प्रकार कलाकृति के द्वारा भी कलाकार अपने मन के विचारों को सम्प्रेषित करता है।

कला एक प्रकार की भावपूर्ण भाषा है जो कलाकृतियों में अभिव्यक्त होती है। कला को कुछ विद्वानों ने सामाजिक स्वप्न कहा है।

कला चाहे काल्पनिक हो या वास्तविक, वस्तु को सादृश्य, उसके पीछे कलाकार की भावनाओं की अभिव्यक्ति ही मूल भूमिका का निर्वाह करती है।

(9) कला एक प्रकार का खेल (क्रीड़ा) है- कला को क्रीड़ा की संज्ञा दी है। इसी संदर्भ में हर्बर्ट् रीड कहते हैं कि, "जब हमारी अनेक इच्छाएँ, अनुभूतियाँ, विचार और संवेदनाएँ तत्काल अभिव्यक्त नहीं हो पाती हैं तो तनाव उत्पन्न होता है, खेल ही इस तनाव से मुक्त होने का अवसर प्रदान करता है।"

कलाकार अपनी संवेदनाओं एवं तनावों को दूर करने के लिए भी कला को माध्यम बनाता है और कला ही उसे स्वस्थ्य मानसिक जगत की तरफ ले जाती है।

कला का महत्व

(1) रचनात्मक और अभिनव में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

(2) निपुणता बढ़ती है, गति और लचीलेपन में मदद मिलती है।

(3) विजुअल लर्निंग में सुधार आता है, व्यक्ति जागरूक होने के साथ-साथ नए आकार, डिजाइन, शैली और रंग खींचता है।

(4) एकाग्रता बढ़ती है।

कला की आवश्यकता

मनुष्य के जीवन में कला का एक विशेष स्थान होता है। अतः कला ही जीवन है क्योंकि आदिकाल से आज तक कला जीवन का अभिन्न अंग रही है। आज मानव की शायद ही कोई ऐसी क्रिया होगी जिसमें कला का महत्व नहीं हो। जब मनुष्य को भाषाओं का ज्ञान नहीं था, उस समय वे कला के माध्यम से ही अपने मनोवेगों, भावनाओं और संवेगों को प्रकट करते थे। विभिन्न सभ्यताओं की खुदाई से प्राप्त चित्र उस समय कला की उपस्थिति का ज्ञान कराते हैं।

मानव जीवन में कला की आवश्यकता को निम्नलिखित प्रकार से समझा जा सकता है-

(1) भावात्मक अनुभूति - मानव अपनी भावनाओं को कला के माध्यम से ही प्रकट करता है तथा इसी के माध्यम से ही दूसरे की भावनाओं को समझ पाता है।

(2) सौन्दर्यानुभूति- सौन्दर्य उसके मनोभाव को परिवर्तित एवं परिमार्जित कर देते हैं। कला के द्वारा मानव को सौन्दर्य की अनुभूति होती है।

(3) कल्पनाशीलता- सृजनशीलता के लिये मनुष्य में कल्पनाशीलता का विकास होता है। वैश्विक विकास भी कल्पनाशीलता के कारण ही हो पाता है। विश्व में कोई भी खोज होती है अथवा नया कार्य होता है, उसका बीज कल्पना द्वारा ही होता है।

(4) व्यक्तित्व - कला के द्वार ही मनुष्य के व्यक्तित्व को निखारा जा सकता है। इसी प्रकार कला के द्वारा ही किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की पहचान हो पाती है। एक बार व्यक्तित्व की पहचान हो जाने पर उस व्यक्तित्व को सृजनशीलता के लिये उपयोग में लाया जा सकता है।

कला शिक्षण के उद्देश्य :

कला शिक्षण के माध्यम से मनुष्य के शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक विकास में सहायता मिलती है। अतः कला शिक्षण से निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति होती है-

(1) शारीरिक विकास- बालक विकास के प्रत्येक स्तर पर संरचनात्मक क्रियाएँ करता है, जैसे-कागज मोड़ना।

(2) मानसिक विकास-संरचनात्मक एवं क्रियात्मक अनुभवों को ग्रहण करते समय

बालक को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है तथा क्रिया के संचालन हेतु बौद्धिक निर्णय लेना होता है। ऐसे अवसर सामूहिक एवं व्यक्तिगत सभी क्रियाओं में आते हैं।

(3) सौन्दर्यात्मक विकास- कला के द्वारा होने वाले शारीरिक एवं मानसिक विकास को मापा जा सकता है, किन्तु सौन्दर्यात्मक विकास का प्रत्यक्षीकरण कुछ कठिन है।

(4) स्वानुभव का विकास- व्यक्ति के 'स्वत्व' का पोषण विभिन्न अनुभवों से होता है। यह व्यक्तित्व में अंतर्दृष्टि, संवेदना, कल्पना और भावना के रूप में विकसित होता है और सौन्दर्यात्मकता प्राप्त करता है।

(5) रचनात्मक कल्पना का विकास – कल्पना के कई रूप हो सकते हैं। यह रचनात्मक खोजी, चंचल, चपल, चल, अचल, स्थिर, अस्थिर हो सकती है।

इसके अलावा नैतिक उन्नयन, आध्यात्मिक विकास समस्या, समाधान की कुशलता का विकास तथा आर्थिक कुशलता का विकास करना कला शिक्षण का उद्देश्य है।

साहित्य

किसी भाषा के वाचिक और लिखित (शास्त्रसमूह) को साहित्य कहते हैं। दुनिया में सबसे पुराना वाचिक साहित्य हमें आदिवासी भाषाओं में मिलता है।

साहित्य शब्द की व्युत्पत्ति –सहित–स+हित अर्थात् सहभाव अर्थात् हित का साथ होना ही साहित्य है। साहित्य शब्द अंग्रेजी के Literature का पर्यायी है। जिसकी उत्पत्ति लैटिन शब्द Lettee से हुई है। भाषा के माध्यम से अपने अंतरंग की अनुभूति, अभिव्यक्ति कराने वाली कला 'काव्य' अथवा 'साहित्य' कहलाती है।

'सहितस्य भाव साहित्य्' अर्थात् 'सहित' का भाव साहित्य है।

साहित्य शब्द का प्रयोग 7–8 वीं शताब्दी से मिलता है। इससे पूर्व साहित्य शब्द के लिए काव्य शब्द का प्रयोग होता था। भाषा विज्ञान का यह नियम है कि जब एक ही अर्थ में दो शब्दों का प्रयोग होता है, तो उनमें से एक अर्थ संकुचित या परिवर्तित होता है। संस्कृत में जब एक ही अर्थ में साहित्य और काव्य शब्द का प्रयोग होने लगा, तो धीरे-धीरे काव्य शब्द का अर्थ संकुचित होने लगा।

आज काव्य का अर्थ केवल कविता और साहित्य शब्द को व्यापक अर्थ में लिखा जाता है। साहित्य का तात्पर्य अब कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा अर्थात् गद्य और पद्य की सभी विधाओं से है।

संस्कृत साहित्य में साहित्य स्वरूप विश्लेषण का प्रारंभ आचार्य भरतमुनि के नाट्यशास्त्र से माना जाता है। यद्यपि नाट्यशास्त्र का प्रमुख विवेच्य विषय नाट्य है लेकिन प्रसंगवश साहित्य स्वरूप का विश्लेषण भी इसमें हुआ है। साहित्य स्वरूप को स्वतंत्र रूप से विश्लेषित करने का प्रथम प्रयास अग्निपुराण में देखा जा सकता है, जिसके रचयिता वेदव्यास जी हैं।

इसी प्रकार भारत का संस्कृत साहित्य ऋग्वेद से आरम्भ होता है। व्यास, वाल्मीकि जैसे पौराणिक ऋषियों ने महाभारत एवं रामायण जैसे महाकाव्यों की रचना की। कालिदास

एवं अन्य कवियों ने संस्कृत में नाटक लिखे। भक्ति साहित्य में अवधी में गोस्वामी तुलसीदास, ब्रजभाषा में सूरदास तथा रैदास, मारवाड़ी में मीराबाई, खड़ीबोली में अमीरखुसरो, मैथिली में विद्यापति आदि प्रमुख हैं। हिन्दी साहित्य में कथा, कहानी और उपन्यास के लेखन में प्रेमचंद का महान योगदान है। ग्रीक साहित्य में होमर के इलियड और औडसी विश्व प्रसिद्ध हैं। अंग्रेजी साहित्य में शेक्स्पियर का नाम प्रसिद्ध है।

साहित्य की विशेषताएँ

आचार्य विश्वनाथ के शब्दों में – ''वाक्यं रसात्मकं काव्यम्।''

आचार्य भामह के शब्दों में – ''शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्।''

आचार्य दण्डी के शब्दों में – ''शरीर तावद् इष्टार्थ व्यावच्छिन पदावली।''

आचार्य वामन के शब्दों में – रीतिरात्मा काव्यस्य् विशिष्ट पदावलि: रीति।

पंडित जगन्नाथ के शब्दों में – ''रमणीयार्थ प्रतिपादक: शब्द काव्यम्।''

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी – ''जो प्रभावशाली रचना पाठक और श्रोता के मन पर आनंददाई प्रभाव डालती है, कविता कहलाती है। इनके अनुसार काव्य में विलक्षणता होती है, जिसमें आनंद निर्माण करने की क्षमता होती है।''

आचार्य श्यामसुंदर दास– ''काव्य वह है जो हृदय में अलौकिक आनंद या चमत्कार की सृष्टि करे।''

जयशंकर प्रसाद – ''काव्य आत्म की संकल्पनात्मक अनुभूति है जिसका सम्बन्ध विश्लेषण, विकल्प या विज्ञान से नहीं होती।''

डॉ. नागेन्द्र – ''सरस शब्दार्थ का नाम काव्य है।''

अरस्तु के अनुसार – ''साहित्य भाषा के माध्यम से प्रकृति का अनुकरण है। प्लेटो के शिष्य अरस्तु ने साहित्य को राजनीति तथा नीतिशास्त्र की दृष्टि से न देखकर सौन्दर्यशास्त्रों की दृष्टि से उसका विवेचन किया है।''

विलियम वर्ड्सवर्थ के अनुसार – ''स्वच्छंदतावादी कवि विलियम वर्ड्सवर्थ के अनुसार प्रबल मनोवेगों का सहज उच्छृंखलन कविता है। अर्थात् भावना का सहज उद्रेक ही कविता है। वड्सवर्थ कविता में सहजता को महत्व देते हैं। इसमें भावनाएँ जब लबालब भर जाती हैं तो उसी आधार पर वह सहज प्रकट होती हैं।''

सैम्युअल टेलर कॉलरिज के अनुसार – ''सर्वोत्तम शब्दों का सर्वोत्तम विधान ही कविता है।''

पी.वी. शैली के अनुसार – ''सुखी और मन को आनंद देने वाले क्षणों में सुखद मन के आधार पर प्रकट हुई रचना कविता है।''

हडसन के शब्दों में – ''भाव और कल्पना के माध्यम से जोवन को व्याख्या काव्य है।''

प्रेमचंद के शब्दों में – "साहित्य जीवन की आलोचना है।"

बालकृष्ण भट्ट के शब्दों में – "साहित्य जन समूह के हृदय का विकास है।"

अज्ञेय के शब्दों में – "कविता सबसे पहले और अंत में शब्द है।"

साहित्य के तत्व : साहित्य के निम्न चार तत्व हैं – भाव तत्व, बुद्धि तत्व, कल्पना तत्व, शैली तत्व।

भाव तत्व– भावतत्व काव्य का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। इसे भारतीय आचार्यों ने साहित्य को आत्मा माना है। भाव तत्व के अभाव में साहित्य निष्प्राण व निर्जीव हो जाता है।

बुद्धि तत्व – बुद्धि तत्व, भाव एवं कल्पना तत्वों में समन्वय करता है। यह तत्व साहित्य को विश्वसनीय बनाता है।

कल्पना तत्व – कॉलरिज के शब्दों में "कल्पना काव्य की सृजन शक्ति है, काव्य में आनंद का समावेश भाव व कल्पना तत्वों से ही होता है।"

शैली तत्व– "काव्य के प्रथम तीन तत्व भाव पक्ष से सम्बन्धित हैं तथा शैली तत्व का सम्बन्ध कला पक्ष से है।"

साहित्य का स्वरूप : साहित्य को मुख्यतः तीन भागों में बाँटा गया हैं – 1. गद्य, 2. पद्य, 3. चंपू।

पद्य साहित्य – पद्य के दो भाग हैं–

(क) प्रबंध काव्य (महाकाव्य एवं खण्ड काव्य)

(ख) मुक्तक काव्य (चालीसा, शतक, सतसई, हजारा, पच्चीसी, दशक, बावनी, पच्चीसी आदि।)

गद्य साहित्य – गद्य विचार प्रधान रचना है। गद्य के दो प्रकार हैं –(क) दृश्य,(ख) श्रव्य।

(क) दृश्य – नाटक, एकांकी, रूपक, भाग, डिम, वीथी, प्रहसन, इत्यादि।

(ख) श्रव्य – निबंध, कहानी, उपन्यास, रेखाचित्र, संस्मरण, फीचर, जीवनी, फीचर, यात्रावृत्त, आत्मकथा, साक्षात्कार, डायरी आदि।

चंपू साहित्य – गद्य-पद्य मिश्रित रचना चंपू काव्य है।

पद्य साहित्य की परिभाषा–

नलिन विमोचन शर्मा के शब्दों में –"भाव व लय प्रधान रचना ही पद्य है।"

पाणिनी के शब्दों में – "छंद युक्त रचना पद्य है।"

प्रबंध काव्य – वह काव्य रचना जिसमें पद एक दूसरे से पूर्वापर सम्बन्ध रखते हों

एक को हटा देने पर दूसरा पद अधूरा प्रतीत हो उसे प्रबंध काव्य कहते हैं। जैसे- महाभारत, रामायण, प्रियप्रवास आदि।

महाकाव्य – महान काव्य/विशाल काव्य। "महाकाव्य के लिए अंग्रेजी में 'एपिक' शब्द का प्रयोग किया जाता है। महाकाव्य भारतीय साहित्य की सर्वश्रेष्ठ, प्राचीन एवं लोकप्रिय विधा है।"

"वह काव्य जिसमें महान् चरित्र, महान उद्देश्य और गरिमामय उदात्त शैली होती है, उसे महाकाव्य कहते हैं।" जैसे रामचरित मानस, पद्मावत, कामायनी, साकेत आदि।

महाकाव्य के लक्षण –

(1) महाकाव्य सम्बद्ध होना चाहिए, महाकाव्य में कम से कम आठ सर्ग होना चाहिए। सर्गों का नामकरण कथा के आधार पर होना चाहिए और प्रत्येक सर्ग के अंत में आगामी कथा की सूचना होनी चाहिए।

(2) महाकाव्य का नायक देवता या उच्च कुल में उत्पन्न धीरोदात्त गुणों से सम्पन्न होना चाहिए।

(3) महाकाव्य का कथानक ऐतिहासिक, पौराणिक या लोक प्रसिद्ध होना चाहिए।

(4) महाकाव्य का प्रधान रस शृंगार, वीर, शांत होना चाहिए तथा उसमें सभी रसों का चित्रण भी होना चाहिए।

(5) महाकाव्य का उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष की सिद्धि होना चाहिए।

(6) महाकाव्य का आरम्भ मंगलाचरण अथवा आशीर्वचनों से होना चाहिए।

(7) महाकाव्य में दुष्टों की निंदा तथा सज्जनों की प्रशंसा होनी चाहिए।

(8) महाकाव्य का नामकरण नायक, नायिका या वृत्त के आधार पर होना चाहिए।

(9) महाकाव्य में वर्णन विविधता होनी चाहिए।

(10) महाकाव्य में सभी ऋतुओं का चित्रण होना चाहिए।

(11) महाकाव्य की भाषा पात्रानुकूल होना चाहिए।

(12) महाकाव्य में तत्कालीन संस्कृति की भी झलक होनी चाहिए।

(13) महाकाव्य में जीवन से सम्बंधित सम्पूर्ण पक्षों का चित्रण होना चाहिए।

(14) महाकाव्य सुखांत, और उदार भाव होना चाहिए।

महाकाव्य के तत्व : (1) कथानक, (2) चरित्र चित्रण, (3) युगचित्रण, (4) रस-भाव, (5) छंद योजना, (6) भाषा-शैली, (7) उद्देश्य।

खण्ड काव्य का अर्थ : खण्डकाव्य प्रबंध काव्य का लघु रूप है इसमें जीवन की किसी एक घटना, अंग या पक्ष का चित्रण रहता है। जैसे-पंचवटी, जयद्रथ वध, सुदामा चरित्र, तुलसीदास। आदि।

खण्ड काव्य के लक्षण :

(1) खण्डकाव्य प्रबंधकाव्य का लघु रूप है।

(2) इसमें जीवन के किसी एक पक्ष का चित्रण सीमित रूप में होता है।

(3) कथानक संक्षिप्त होता है।

(4) खण्डकाव्य अपने आप में सम्पूर्ण होता है।

(5) प्रासंगिक कथाओं का प्राय: अभाव होता है।

(6) सर्ग विभाजन अनिवार्य नहीं है।

(7) उद्देश्य महाकाव्य के सामान धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की सिद्धि होता है।

(8) इसमें एक ही रस की प्रधानता होती है।

(9) मंगलाचरण या आर्शीवचन आवश्यक नहीं है।

खण्ड काव्य के तत्व : (1) कथावस्तु, (2) चरित्र चित्रण, (3) संवाद, (4) देशकाल/वातावरण, (5) रस, (6)भाव-शैली, (7) उद्देश्य।

मुक्तक काव्य का अर्थ – वह काव्य रचना जिसके पदों में पूर्वापर सम्बन्ध नहीं हो प्रत्येक पद में एवं स्वतंत्र भाव हो उसे मुक्तक काव्य कहते हैं। जैसे- बिहारी सतसई, मीरा के पद, सूरदास के पद इत्यादि।

आचार्य रामचंद शुक्ल के शब्दों में – ''मुक्तक में प्रबंध के समान रस की धारा नहीं रहती है, जिसमें कथा प्रसंग की परिस्थिति में अपने को भुला हुआ पाठक मग्न हो जाता है और हृदय में एक स्थायी प्रभाव को ग्रहण करता है। इसमें तो रस के छीटें पड़ते है, जिनमें हृदय कलिका थोड़ी देर के लिए खिल उठती है। यदि प्रबंध एक विस्तृत वनस्थली है तो मुक्तक चुना हुआ गुलदस्ता है।''

मुक्तक के भेद- विशेषक, कुलक, संघात, गीतिकाव्य, गज़ल, कोश, संहिता आदि।

गद्य साहित्य-

एक ऐसी रचना जो छंद, ताल, लय एवं तुकबंदी से मुक्त तथा विचारपूर्ण हो, उसे गद्य कहते हैं। गद्य शब्द गद् धातु के साथ 'यत' प्रत्यय जोड़ने से बना है। 'गद्' का अर्थ होता है बोलना, बतलाना या कहना। सामान्यत: दैनिक जीवन में उपयोग होने वाली बोलचाल की भाषा में गद्य का ही प्रयोग किया जाता है। गद्य का प्रारंभ इतिहास, विज्ञान, सौन्दर्यशास्त्र इत्यादि की भाषा के रूप में हुआ। बाद में वह उपयोग से कला की ओर प्रवृत्त हुआ। रूपों के विकास के आधार पर उसकी तीन स्थूल कोटियाँ बनी हैं-वर्णात्मक, जिसमें कथा, साहित्य, जीवनी, यात्रा आते हैं।

चिन्तन, जटिल समस्याओं के बौद्धिक समाधान तर्कों की श्रृंखला, विचारों के क्रम, नियमों की मर्यादा तथा सूक्ष्मता की सीमाओं में बँधकर मूर्त होता है। शब्द-रूपों में संयम आ जाता है। वाक्य रचना में अर्थ- तत्वों की स्थिति बोध के लिए सम्बन्ध तत्त्वों की परम्परा विहित

प्रणाली का अनुसरण किया जाता है। चिन्तन की छंदमुक्त इस अभिव्यक्ति शैली को सामान्यत: गद्य कहा गया है।

साहित्यिक हिन्दी-गद्य का क्रमबद्ध इतिहास 19 वीं शताब्दी से प्राप्त होता है। इसके पहले भी राजस्थानी-गद्य, ब्रजभाषा-गद्य तथा खड़ी बोली-गद्य की परम्पराएँ क्षीण मंद एवं शिथिल गति से चल रही थीं। हिन्दी-गद्य के उपर्युक्त तीनों रूपों में राजस्थानी-गद्य प्राचीनतम माना गया है।

आदिकालीन हिन्दी-गद्य (9वीं से 14 वीं शताब्दी तक)

'राजस्थानी', 'ब्रजभाषा' तथा 'खड़बोली' के गद्य-रूपों का अलग-अलग परिचय देने के पूर्व आवश्यक है कि हम हिन्दी के आदिकालीन गद्य की स्थिति और स्वरूप पर विचार कर लें, क्योंकि यह गद्य परवर्ती सभी गद्य-रूपों की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है। आदिकालीन गद्य के स्वरूप विकास की सूचना देने वाली प्रमुख कृतियाँ निम्नलिखित हैं-

(1) कुवलयमाला कथा (9वीं सदी)

(2) राउलवेल (11 वीं सदी)

(3) उक्तिव्यक्ति प्रकरण (12 वीं सदी)

(4) वर्ण रत्नाकर (14 वीं सदी)

(5) कीर्तिलता (14 वीं सदी)

आधुनिक हिन्दी गद्य का इतिहास

हिन्दी गद्य के विकास को विभिन्न सोपनों में विभक्ति किया जा सकता है-

(1) पूर्व भारतेन्दु युग (प्राचीन युग) – 13 वीं शताब्दी से 1868 ई. तक

(2) भारतेन्दु युग (नवजागरण काल) – 1868 ई. -1900 ई. तक

(3) द्विवेदी युग – 1900 ई. – 1922 ई. तक

(4) शुक्ल युग (छायावादी युग)- 1922 ई. – 1938 ई. तक

(5) शुक्लोत्तर युग (छायावादोत्तर युग)-1938 ई. से -1947ई. तक

(6) स्वांतत्र्योत्तर युग – 1947 ई. से अद्यतन।

हिन्दी गद्य की विधाएँ-

(1) **प्रमुख (मुख्य) विधाएँ**	(2) **गौण विधाएँ** -
(1) निबंध	(1) जीवनी
(2) आलोचना	(2) आत्मकथा
(3) उपन्यास	(3) यात्रा-साहित्य

(4) कहानी
(5) नाटक
(4) संस्मरण
(5) रेखाचित्र
(6) पत्र-साहित्य
(7) डायरी
(8) रिपोर्ताज
(9) इन्टरव्यू (साक्षात्कार)
(10) लघुकथा।

आध्यात्म

आध्यात्म शब्द 'आधि' और 'आत्मा' शब्द का मेल है। 'आत्मा' शब्द आत्मान शब्द का संक्षिप्त रूप है, जो सांस लेने, आगे बढ़ने आदि से लिया गया है। 'आत्मन' शब्द का अर्थ आत्मा से है जिसमें जीवन और संवेदना के सिद्धान्त, व्यक्तिगत आत्मा, उसमें रहने वाले अस्तित्व, स्वयं, अमूर्त व्यक्ति, शरीर, व्यक्ति या पूरे शरीर को एक ही और विपरीत भी मानते हुए अलग-अलग अंगों में ज्ञान, मन, जीवन के उच्च व्यक्तिगत सिद्धांत, ब्राह्मण, अभ्यास, सूर्य, अग्नि और एक पुत्र भी शामिल है।

'आदि' को क्रिया और संज्ञा के रूप में लिया जाता है जिसका अर्थ यह है कि ऊपर से, उसमें उपस्थित, बाद में इसके बजाए, ऊपर, किसी की तुलना में, ऊपर,फिर उसके भी ऊपर और कोई विषय समाहित हो।

अध्यात्म का अर्थ आत्मा या आत्मन, जो सर्वोच्च आत्मा है, का स्वागत करें, जो उसकी खुद की है, स्वयं से या व्यक्तिगत, व्यक्तित्व से सम्बन्धित हो। इसका यह भी अर्थ हो सकता है कि विवेकी व्यक्तित्व जो वास्तविकता को अवास्तविकता से अलग कर सके। साथ ही यह भी कि आध्यात्मिकता या अनुशासन जो स्वयं के स्वभाव की अनुभूति करा सके।

आध्यात्म शब्द संस्कृत भाषा का है। इसका व्यापक रूप में अर्थ परमार्थ चिंतन से है। आध्यात्म एक दर्शन है, चिंतन धारा है, विधा है, हमारी संस्कृति की परम्परागत विरासत है, ऋषियों, मनीषियों के चिंतन का निचोड़ है, उपनिषदों का दिव्य प्रसाद है। आत्मा, परमात्मा, जीव, माया, जन्म-मृत्यु, पुनर्जन्म, सृजन-प्रलय की अबूझ पहेलियों को सुलझाने का प्रयत्न है आध्यात्म।

आध्यात्म का अर्थ व्यक्तिगत या खुद का स्वभाव होता है, जो हर शरीर में सर्वोच्च भाव के रूप में ब्राह्मण की तरह रहता है। इसका अर्थ, जो अस्तित्व के स्वयं के रूप में शरीर में निवास करती है, आत्मा वह शरीर को उसके रहने के लिए अधिकृत करती है और जो परम विश्लेषण का उच्च स्तर है। अध्यात्म भी ज्ञान अर्जित करता है जो आध्यात्मिक, बुद्धिमत्ता और आखिरकार मोक्ष या मुक्ति तक ले जाता है। यह ज्ञान अध्यात्म से सम्बन्धित है जो स्वयं से तो सम्बंधित है ही साथ ही स्वयं और दूसरी आत्मा के बीच के सम्बंध से भी सम्बन्धित है। अध्यात्म, आत्मा के ज्ञान से सम्बन्धित है और जिस रास्ते पर चलकर ये प्राप्त हो सकता

है, वह ज्ञान अनंत है। आध्यात्म का अर्थ उस ब्राह्मण के बारे में बताता है जो परम सच्चाई है। शास्त्रों के पढ़ने और किसी के आत्मा के स्वभाव को समझना ही अध्यात्म कहलाता है। इसका अर्थ भगवान के सामने आत्म समर्पण करना और अपने अहंकार को तिलांजलि देना है।

वह जो कुछ स्वयं से सम्बंधित है जिसमें मन, शरीर, ऊर्जा शामिल है, अध्यात्म कहलाता है। यह शरीर और चित्त में उत्पन्न होने वाली परेशानियाँ भी दर्शाता है, जो जीव में उत्पन्न होने वाली तीन परेशानियों में से एक है। बाकी दो परेशानियाँ आधिभौतिका और अधिदैविका हैं। आधिभौतिका दूसरे जीवों के द्वारा होती है, और अधिदैविका प्राकृतिक और ब्रह्मांडीय शक्तियों के द्वारा।

अध्यात्म का अर्थ है अपने भीतर के चेतना तत्व को जानना, मानना और दर्शन करना अर्थात् अपने आप के बारे में जानना या आत्मप्रज्ञ होना। गीता के आठवें अध्याय में अपने स्वरूप अर्थात् जीवात्मा को अध्यात्म कहा गया है। ''परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते।

आत्मा परमात्मा का अंश है यह तो सर्वविदित है। आध्यात्म की अनुभूति सभी प्राणियों में समान रूप से निरंतर होती रहती है। स्वयं की खोज तो सभी कर रहे हैं, परोक्ष व अपरोक्ष रूप से परमात्मा के असीम प्रेम की बूँद मानव में पायी जाती है जिसके कारण हम उनसे संयुक्त होते हैं किन्तु कुछ समय बाद इसका लोप हो जाता है और हम निराश हो जाते हैं, सांसारिक बंधनों में आंनद ढूंढते ही रह जाते हैं परंतु क्षणिक ही खुशी पाते हैं।

अध्यात्म के प्रकार - 1. भक्ति समाधि, 2. योग समाधि, 3. ज्ञान समाधि।

'अध्यात्म'- अध्यात्म मार्ग में ईश्वर, भगवान, आत्मा आदि मूलभूत शब्दों की भिन्नता और स्पष्टता सम्पूर्ण रूप से होती है। अध्यात्म में ईश्वर, परमात्मा, भगवान मनुष्य के भीतर ही माने जाते हैं।

अध्यात्म ही जीवन का सार है क्योंकि इसके बगैर इंसान के जीवन और एक पशु के जीवन में कोई अंतर नहीं रह जाता। अध्यात्म के बिना इंसान का जीवन ऐसे है, जैसे बिना आत्मा के शरीर होता है, जैसे बिना लौ का दीपक होता है, जैसे बिना पतवार के कोई नाव होती है।

अध्यात्म का मूल सिद्धान्त यह है कि हममें से प्रत्येक वास्तव में एक आत्मा है, जो कि थोड़े समय के लिए एक भौतिक शरीर में आई है यह समय बीस, पचास, साठ, अस्सी या सौ वर्ष का हो सकता है, लेकिन मृत्यु के बाद हर एक को इस दुनिया से जाना है। इस संसार में आने से पहले हमारी आत्मा कहां थी? इस संसार का और इस जीवन का उद्देश्य क्या है? -अध्यात्म का मूल उद्देश्य-आनंद की प्राप्ति है।

परम-आनंद की उपलब्धि ही मनुष्य का धर्म और कर्त्तव्य है। जिस तरह परिवार को सुख, शांति और आनंद उपलब्ध कराने में हमें आत्मसंतोष और आनंद मिलता है, उससे हजार गुना ज्यादा आत्मसंतोष और आनंद परमात्मा के इस विराट विश्व को सुख, शांति और आनंद, उपलब्ध कराने में निहित है। अभाव से दु:ख की उत्पत्ति होती है और दु:ख की निवृत्ति से

सुख की प्राप्ति होती है। किन्तु सुख और परम-आनंद एक नहीं है। सुख शरीर का विषय है जबकि आनंद आत्मा का विषय है।

इस परम आनंद को प्राप्त करने की प्रक्रिया का नाम ही अध्यात्म है। अध्यात्म अर्थात् आत्मानुसंधान और क्योंकि आत्मा आनंद स्वरूप है इसलिए आनंद की खोज ही हमारी मूल प्रकृति है।

अतः अध्यात्म हमारे जीवन का एक अनिवार्य अंग है, क्योंकि हर किसी को आनंद चाहिए। लेकिन आनंद मिलेगा कहाँ? ये पता नहीं। इसलिए यहाँ-वहाँ भटकते हैं। जैसे रेगिस्तान में प्यासा, चकमती रेत को देखकर पानी समझ भटकता है, लेकिन रेत में भला पानी कैसे हो सकता है। इसी तरह इंसान सांसारिक सुखों में आंनद की झलक देखंकर सरपट उनके पीछे दौड़ा चला जाता है, किन्तु कुछ नहीं मिलता और मिले भी कैसे। हो तो मिले। सांसारिक सुविधाओं से सुख मिल सकता है, आनंद नहीं। अगर आनंद चाहिए तो आनंद स्वरूप आत्मा का अनुसंधान करना ही पड़ेगा अध्यात्म को जीवन में लाना ही पड़ेगा।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. लोकतंत्र अंग्रेजी भाषा के किस शब्द से बना है?
   (क) Demos (ख) Cratia
   (ग) Democracy (घ) कोई नहीं
2. लोकतंत्र का अर्थ है-?
   (क) लोकतंत्र जनता का तंत्र है
   (ख) यह एक शासन प्रणाली है
   (ग) इसमें जनता अपनी स्वेच्छा से अपना प्रतिनिधि चुनती है।
   (घ) इनमें से सभी।
3. "लोकतंत्र लोगों का लोगों द्वारा लोगों के लिए शासन है" किसका कथन है?
   (क) अब्राहिम लिंकन (ख) गेटेल
   (ग) सीले (घ) डाइसी
4. भारतीय लोकतंत्र के उद्देश्य है?
   (क) जनता की सम्पूर्ण और सर्वोच्च भागीदारी
   (ख) वयस्क मताधिकार
   (ग) सीमित तथा संविधानिक सरकार
   (घ) इनमें से सभी।

5. निम्नलिखित में से कौन लोकतंत्र के शत्रु होते हैं?
   (क) भ्रष्टाचार (ख) अशिक्षा एवं निरक्षरता
   (ग) उग्रवाद, आतंकवाद, हिंसा (घ) इनमें से सभी।
6. 'समरसता' का अर्थ है?
   (क) सामंजस्य (ख) संतुलन
   (ग) समरस होने का गुण (घ) इनमें से सभी।
7. 'समरसता' के अंतर्गत आता है?
   (क) सदा एक समान रहने की स्थिति समरसता है
   (ख) भावों या विचारों में परिवर्तन न होना समरसता है
   (ग) सुख में आनंद में पूर्णतया लीनता समरसता है।
   (घ) इनमें से सभी।
8. नैतिक मूल्यों के विकास में समरसता का योगदान है?
   (क) सहिष्णुता (ख) ईमानदारी
   (ग) शांति, धैर्य (घ) इनमें से सभी।
9. समरसता के संदर्भ में इनमें से सत्य है-
   (क) समरसता, नैतिक मूल्यों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
   (ख) शिक्षा और स्कूलिंग की सामाजिक समरसता के विकास में योगदान।
   (ग) अभिव्यक्त की स्वतंत्रता एवं लोकतांत्रिक मूल्यों की भूमिका।
   (घ) इनमें से सभी।
10. सामाजिक समरसता के समक्ष आने वाली प्रमुख चुनौतियाँ हैं-
   (क) जातिगत भेदभाव (ख) अस्पृश्यता और लैंगिक भेदभाव
   (ग) आर्थिक असमानता (घ) इनमें से सभी।
11. "कला आत्मा का ईश्वरीय संगीत है।" किसका कथन है?
   (क) जयशंकर प्रसाद (ख) रवीन्द्रनाथ टैगोर
   (ग) महात्मा गाँधी (घ) इनमें से कोई नहीं
12. "कला सत्य की अनुकृति है।" कला के संदर्भ में यह सूक्ति किसके द्वारा कही गई है?
   (क) फ्रायड (ख) प्लेटो
   (ग) अरस्तु (घ) रस्किन

13. साहित्य कला के अंतर्गत आते हैं–
(क) कहानी लेखन (ख) लघुकथा लेखन
(ग) काव्य लेखन (घ) इनमें से सभी।

14. ''पाक कला'' (Culinary Arts) के अंतर्गत शामिल है?
(क) बेकिंग (ख) चॉकलेटरिंग
(ग) क एवं ख (घ) कोई नहीं।

15. कला की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–
(क) कला एक तकनीक है (ख) कला एक प्रकार का शिल्प है
(ग) कला एक प्रकार का कौशल है (घ) इनमें से सभी।

16. कला शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य कौन-कौन से हैं?
(क) सौन्दर्यात्मक विकास (ख) रचनात्मक कल्पना का विकास
(ग) मानसिक विकास (घ) इनमें से सभी।

17. 'वाक्यं रसात्मकम् काव्यम्।' साहित्य के संदर्भ में यह परिभाषा किसके द्वारा दी गई है?
(क) आचार्य विश्वनाथ (ख) आचार्य भामह
(ग) आचार्य वामन (घ) कोई नहीं।

18. ''काव्य है वह है जो हृदय में अलौकिक आनंद या चमत्कार की सृष्टि करें।'' किसके द्वारा यह परिभाषा दी है?
(क) जयशंकर प्रसाद (ख) आचार्य श्यामसुंदर दास
(ग) डॉ. नगेन्द्र (घ) इनमें से कोई नहीं।

19. साहित्य के प्रमुख तत्व कौन-कौन से हैं?
(क) भाव तत्व, (ख) कल्पना तत्व
(ग) बुद्धि तत्व (घ) इनमें से सभी

20. साहित्य को मुख्यत: कितने भागों में बाँटा गया है?
(क) गद्य साहित्य (ख) पद्य साहित्य
(ग) चम्पू साहित्य (घ) इनमें से सभी

21. ''छंद युक्त रचना पद्य है।'' पद्य साहित्य के संदर्भ में यह उक्ति किसके द्वारा कही गई है?
(क) भरतमुनि (ख) पाणिनी
(ग) अग्निपुराण (घ) आचार्य भामह

22. हिन्दी गद्य की प्रमुख विधाएँ हैं?
(क) निबंध (ख) कहानी
(ग) उपन्यास (घ) इनमें से सभी

23. अध्यात्म के प्रमुख प्रकार हैं–?
(क) भक्ति समाधि (ख) योग समाधि
(ग) ज्ञान समाधि (घ) इनमें से सभी।

24. अध्यात्म का अर्थ है–
(क) अपने भीतर के चेतना तत्व को जानना।
(ख) अपने भीतर मनन और दर्शन करना।
(ग) अपने आप के बारे में जानना या आत्मप्रज्ञ होना।
(घ) इनमें से सभी।

25. शाक्य गणराज्य में सभाभवन को क्या कहते थे?
(क) सभाभवन (ख) सन्यागार
(ग) सभागार, (घ) इनमें से कोई नहीं

26. लिच्छवि गणराज्य का सम्बंध किस वर्ग से था?
(क) क्षत्रिय (ख)शूद्र
(ग) वैश्य (घ) इनमें से कोई नहीं।

27. प्राचीन अग्रेय, वर्तमान में किस नाम से जाने जाते हैं?
(क)अग्रवाल (ख) अग्रेय
(ग) आम्रवंशी (घ) इनमें से कोई नहीं

28. प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला किस सतह पर बनाई गई है?
(क) चट्टानों पर (ख) भित्ति पर
(ग) कपड़ों पर (घ) इनमें से कोई नहीं

29. भारतीय चित्रकला के पुनर्जागरण का श्रेय किसे जाता है?
(क) बंगाल शैली को (ख) बिहार शैली को
(ग) मध्य भारत शैली को (घ) इनमें से कोई नहीं

30. भीमबैठका के चित्रों की खोज किस वर्ष की गई थी?
(क) 1958 ई. (ख) 1968 ई.
(ग) 1978 ई. (घ) 1988 ई.

31. मधुबनी लोककला किस राज्य से सम्बन्धित है?
(क) मध्यप्रदेश (ख) उत्तरप्रदेश
(ग) बिहार (घ) बंगाल

32. पृथ्वीराज रासो किस प्रकार का काव्य है?
(क) खण्डकाव्य (ख) चम्पूकाव्य
(ग) महाकाव्य (घ) इनमें से कोई नहीं

33. अध्यात्म ज्ञान के जिज्ञासु को निम्नलिखित आठ प्रमाणों से सत्य-असत्य की परीक्षा करनी होती है वह है-
(क) प्रत्यक्ष-अनुमान (ख) उपमान-शब्द
(ग) अर्थापत्ति-सम्भव (घ) इनमें से सभी

34. अपने भीतर चेतन तत्व को जानना, मानना और दर्शन करना कहलाता है?
(क) योग (ख) अध्यात्म
(ग) चिंतन (घ) इनमें से कोई नहीं।

35. अध्यात्म हमें सिखाता है?
(क) जीवन जीना
(ख) घर-गृहस्थी में तालमेल बिठाना
(ग) समाज में आदर्श रूप में रहना
(घ) इनमें से सभी।

उत्तरमाला

1. (ग),	2. (घ),	3. (क),	4. (घ),	5. (घ),	6. (घ),
7. (घ),	8. (घ),	9. (घ),	10. (घ),	11. (ग),	12. (ख),
13. (घ),	14. (ग),	15. (घ),	16. (घ),	17. (क),	18. (ख),
19. (घ),	20. (घ)	21. (ख),	22. (घ),	23. (घ),	24. (घ),
25. (ख),	26. (क),	27. (क)	28. (क),	29. (क),	30. (क)
31. (ग),	32. (ग),	33. (घ),	34. (ख),	35. (घ)	

■■■

हमारे अन्य प्रकाशन

प्रयोजनमूलक कामकाजी हिन्दी एवं कम्प्यूटिंग	- डॉ. संजीव जैन
मीडिया लेखन एवं जनसंचार	- डॉ. संजीव जैन
पत्रकारिता: सिद्धान्त और स्वरूप	- डॉ. संजीव जैन
अनुवादः सिद्धान्त एवं व्यवहार	- डॉ. संजीव जैन
प्रयोजनमूलक हिन्दी (MA Prev - Sem-I)	- डॉ. संजीव जैन
प्रयोजनमूलक हिन्दी (MA Prev - Sem-II)	- डॉ. संजीव जैन
प्रयोजनमूलक हिन्दी (कामकाजी हिन्दी,	- डॉ. आर.सी. त्रिपाठी
मीडिया लेखन, पत्रकारिता एवं अनुवाद)	- डॉ. ऊषा शुक्ल
व्यावहारिक एवं कार्यालयीन हिन्दी	- डॉ. संजीव जैन
पाश्चात्य काव्यशास्त्र (सिद्धान्त और वाद)	- डॉ. आर.सी. त्रिपाठी
भारतीय काव्यशास्त्र	- डॉ. उषा शुक्ल
भाषा-विज्ञान	- डॉ. राजेश श्रीवास्तव
हिन्दी भाषा	- डॉ. राजेश श्रीवास्तव
प्राचीन काव्य (विद्यापति, कबीर, जायसी)	- डॉ. संजीव जैन
अनुवाद विज्ञान	- डॉ. संजीव जैन
लोक साहित्य	- डॉ. राजेश श्रीवास्तव
दृश्य-श्रृव्य माध्यम लेखन	- डॉ. राजेश श्रीवास्तव
हिन्दी भाषा	- डॉ. उषा शुक्ल
हिन्दी साहित्य का प्राचीन इतिहास	- डॉ. राजेश श्रीवास्तव
हिन्दी साहित्य का अर्वाचीन इतिहास	- डॉ. राजेश श्रीवास्तव
आधुनिक काव्य (भारतेन्दु से प्रसाद तक) : भाग-1	- डॉ. संजीव जैन
आधुनिक काव्य (पंत से मुक्तिबोध तक) : भाग-2	- डॉ. संजीव जैन
मध्यकालीन काव्य (सूर, तुलसी तथा बिहारी का काव्य)	- डॉ. संजीव जैन

Price : 130/-

KPS

Kailash Pustak Sadan
30, Shah Building,
Hamidia Road, Bhopal (MP)
0755-2535366, 4256804
kailashpustak@gmail.com
www.kpsbhopal.com

9789358322521